प्रस्तावना.

परमात्मने नमः ।

वेदांत विषे यह "योगवाशिष्ठ" ग्रंथ बहुत प्रसिद्ध है, यह ग्रन्थ मूल संस्कृतमें है, तिसका कर्त्ता वाल्मीकि ऋषि है. तिसपर कोई विद्वानने टीका करी है. यह ग्रंथ बहुत प्राचीन है. इसकी भाषा कोई परमार्थी साधु पुरुषने करी है, तिनके नामका ज्ञात नहीं है. ऐसा सुना है कि, योगवाशिष्ठकी कोई महात्मा पुरुष कहूं कथा करते थे, तहाँ इस भाषाके करनेवाले साधु श्रवण वास्ते प्रति दिन जाते थे. श्रवण करिके आश्रम पर आते थे और जैसा सुनते थे, वैसाही व्याख्यान सहित लिखते जाते थे, ऐसें करिके योगवाशिष्ठ ग्रंथकी भाषा तिस साधु पुरुषने संपूर्ण करी. इस रीतिसे यह ग्रंथ भया है; और तिस कारणते इसकी भाषा अति सुगम भई है और वह साधु पुरुष अनुभवी थे याते कहीं भी सिद्धांत विरोध वाक्य इसमें नहीं देख पडते हैं, भाषा पढनेवाले मुमुक्षु जनोंपर, तिस कृपालु साधु पुरुषका बडा उपकार भया है.

सब मिलिके इस ग्रंथके षट् (६) प्रकरण हैं, सो सब छपे हैं; परंतु तिसकी बड़ी कीमत होनेसे सर्वको उपयोगी नहीं होवे है. तिसकारणते और मुमुक्षु जनोको आरम्भके दो प्रकरण अति उपयोगी धारिके ये दोनों प्रकरण बडे अक्षरोंमें टाइपपर मैंने छपाये हैं इसकी कीमत लघु होनेते सर्वको इसका उपयोग सहजमें होवेगा.

इन दो प्रकरणोंमें ही वेदान्त सिद्धान्त इतना दिखाया है कि, जो कोई शास्त्र रीतिसे इसका श्रवण, मनन और निदिध्यासन करै; तो अवश्यमेव मोक्षकी प्राप्ति होवे. वैराग्य प्रकरणमें इस जगत्की असत्यता ऐसी स्पष्ट दिखाई है, जो श्रवण मात्रते पुरुषकी वृत्ति वैराग्यवाली हो आवे है; और तिसकरि जगत् जालसे छूटनेकी तिस पुरुषको इच्छा हो आवे है.

परमानन्दकी प्राप्ति और अनर्थकी निवृत्ति अर्थ; मुमुक्षुको विचारही कर्त्तव्य है, और तिसकरिकै ज्ञान होवे है, ऐसा इस ग्रंथके मुमुक्षु प्रकरणके "विचार वर्णनमें" भलीप्रकार वर्णन किया है, जगत्के तुच्छ पदार्थनकी प्राप्ति अर्थ,पुरुष बहुत वर्षों पर्यन्त पुरुषार्थ करते हैं, तब वाञ्छित पदार्थकी प्राप्ति होती है. जगतके कोई भी पदार्थ मोक्षके समान नहीं हैं, मोक्षकी प्राप्ति का मनुष्यजन्मका हेतु है; याते तिसकी प्राप्ति अर्थ पुरुषको दृढ अभ्यास करना चाहिये.

इस ग्रंथके विचारमें और अद्वितीयके बोधक प्रक्रिया ग्रंथोंका गुरुमुखसे श्रवण अपेक्षित है; काहेते जो मुमुक्षु प्रकरणमें पृष्ठ २३९ पर कहा है—जो पद पदार्थको जाननेहारा होवे;अरु इसको वारम्वार विचारे. तब तिसका दृश्य भ्रम नाश पावे. इस शास्त्रके विचार विषे और किसी तीर्थ, तप, दान, आदिककी अपेक्षा नहीं; जहां स्थान होवे तहां बैठे; जैसा भोजन गृहविषे होवे तैसा करै; अरु वारम्वार

इसका विचार करै; तब अज्ञान नष्ट हो जावे अरु आत्मपदकी प्राप्ति होवे.

इस ग्रंथमें बहुत पुनरुक्ति दृष्टि आतीहैं; परंतु सो दूषण नहीं हैं; ग्रंथका भूषण हैं. काहेते जो इस शास्त्रका विषय दुर्बोधहै; याते एकही दृष्टांत वा सिद्धांतका वारम्वार श्रवण अथवा विचार मुमुक्षुको दृढता निमित्त उपयोगी है.

अपनी तरफसे इस ग्रंथमें कछु अधिक न्यून नहीं किया है. विचारमात्रकी सरलताके अर्थ प्रसंगोंको भिन्न भिन्न कर दिये हैं. इस ग्रंथके छपनेमें चक्षु दोष करि कोई चूक रही होवे, तो सुज्ञ जन सुधारिकै बांचैंगे ऐसी इस संतोंके सेवककी विनती है.

मुमुक्षुओंका कृपाकांक्षी—
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् यन्त्रालय—बम्बई.

श्रीः ।

योगवासिष्ठान्तर्गत वैराग्य और मुमुक्षुप्रकरणकी-

विषयानुक्रमणिका ।

सर्गः	विषयः	पृष्ठांकः
	वैराग्यप्रकरण.	
१	कथारंभ वर्णन	१
२	तीर्थयात्रा वर्णन	१४
३	विश्वामित्रागमनवर्णन ...	२०
४	विश्वामित्रेच्छा वर्णन ...	२७
५	दशरथोक्ति वर्णन ...	३०
६	राम समाज वर्णन ...	३४
७	रामेण वैराग्य वर्णन ...	४४
८	लक्ष्मी तिरस्कार वर्णन	४९
९	संसार सुख निषेध वर्णन	५२
१०	अहंकार दुराशा वर्णन ...	५६
११	चित्त दौरात्म्यवर्णन ...	५९
१२	तृष्णा गारुडी वर्णन ...	६४
१३	देह नैराश्य वर्णन... ...	७०
१४	बालावस्था वर्णन ...	८०
१५	युवा गारुडी वर्णन ...	८४
१६	स्त्री दुराशा वर्णन ...	९१
१७	जरा अवस्था वर्णन ...	९६
१८	काल वृत्तान्त वर्णन ...	१०२
१९	काल विलास वर्णन ...	१०६
२०	काल कालिका वर्णन ...	१०७
२१	काल विलास वर्णन ...	११०
२२	सर्ग पदार्थाभाववर्णन ...	११४
२३	जगद्विपर्यय वणन ...	१२०
२४	सर्वांतप्रतिपादन वर्णन	१२५
२५	वैराग्य प्रयोजन वर्णन...	१२७
२६	अनन्य त्याग वर्णन ...	१३०
२७	देव समाज वर्णन ...	१३३
२८	मुनि समाज वर्णन ...	१३५
	मुमुक्षु प्रकरण.	
१	शुक निर्वाण वर्णन ...	१३९
२	विश्वामित्रोपदेश वर्णन	१४४
३	असंख्यसृष्टि प्रतिपादन	१४७
४	पुरुषार्थोपक्रम वर्णन ...	१५१
५	पुरुषार्थ वर्णन ...	१५३
६	परम पुरुषार्थ वर्णन ...	१५८
७	पुरुषार्थ उपमा वर्णन ...	१६१
८	परम पुरुषार्थ वर्णन ...	१६५
९	परम रुपुषार्थ वर्णन ...	१६८
१०	वसिष्ठोत्पत्ति तथा वसिष्ठोपदेशागमन वर्णन ...	१७२
११	वसिष्ठोपदेश वर्णन ...	१७७
१२	तत्त्वज्ञ माहात्म्य वर्णन	१८५
१३	शम वर्णन ...	१८९
१४	विचार वर्णन ...	१९९
१५	संतोष वर्णन ...	२०७
१६	साधु संग वर्णन ...	२०९
१७	षट् प्रकरण वर्णन ...	२१३
१८	दृष्टांत प्रमाण वर्णन ...	२१९
१९	आत्मप्राप्ति वर्णन ...	२२९

इति श्रीयोगवासिष्ठके वैराग्य और मुमुक्षुप्रकरणकी-

विषयानुक्रमणिका समाप्त ।

परमात्मने नमः ।

अथ श्रीयोगवासिष्ठे

वैराग्यप्रकरणप्रारंभः ।

प्रथमः सर्गः १.

अथ कथारंभ वर्णनम् ।

सत्-चित्-आनंदरूप जो आत्मा है तिसको नमस्कार है. सो कैसा है जिसते यह सब भासत है, अरु जिस विषे यह सर्वलीन होत है, अरु जिस विषे यह सब स्थित हैं, तिस सत्य आत्माको नमस्कार है. ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय, द्रष्टा, दर्शन, दृश्य, कर्त्ता, करण, क्रिया, जिसकरके सिद्ध होता है, ऐसा जो ज्ञानरूप आत्मा है, तिसको नमस्कार है. जिस आनंदके समुद्रके कणसों संपूर्ण विश्व आनंदवान् है, अरु जिस आनंद करि सर्व जीव जीवते हैं, तिस आनंद आत्माको नमस्कार है.

कोई एक सुतीक्ष्ण अगस्त्यमुनिका शिष्य होत भया तिसके मनमें एक संशय उत्पन्न हुआ, तिसको निवृत्त कर-

नेके अर्थ अगस्त्यमुनिके आश्रमको गमन किया जायकर विधिसंयुक्त प्रणाम करि स्थित भया, और नम्र भावसों प्रश्न करने लगा.

सुतीक्ष्णोवाच, हे भगवन् ! सर्वतत्त्वज्ञ, सर्व शास्त्रोंके ज्ञाता, एक संशय मुझको है सो तुम कृपा करके निवृत्त करो. मोक्षका कारण कर्म है, कि ज्ञान है, कि दोनों हैं ? याते जो मोक्षका कारण होय सो कहो.

अगस्त्योवाच, हे ब्रह्मण्य ! केवल कर्म मोक्षका कारण नहीं और केवल ज्ञानते भी मोक्ष प्राप्त नहीं होता.दोनों करके मोक्षकी प्राप्ति होती है. कर्म करके अंतःकरण शुद्ध होता है मोक्ष नहीं होता.अरु अंतःकरणशुद्धि बिना केवल ज्ञानते भी मुक्ति नहीं होती, अर्थ यह जो शास्त्रका तात्पर्य ज्ञानका निश्चय अंतःकरण शुद्ध हुए बिना ज्ञानकी स्थिति नहीं होती. ताते दोनों करके मोक्षकी सिद्धि होती है. कर्म करके प्रथम अंतःकरणकी शुद्धि होती है. बहुरि ज्ञान उपजाता है; तब मोक्षकी सिद्धि होती है. जैसे दोनों पंख करके पक्षी आकाशमार्गको सुखेन सों उडता है तैसे कर्म अरु ज्ञान दोनों कर मोक्षसिद्ध होता है. हे ब्रह्मण्य ! इस अर्थके अनुसार एक पुरातन इतिहास है, सो तू श्रवण कर.

एक कारण नाम ब्राह्मण अग्निवेशका पुत्र था, सो गुरुके निकट जायकर चार वेद षडङ्ग सहित अध्य-

यन करत भया. अध्ययन करके घरको आवत भया. और कर्मते रहित होयकर चुप रहा. अर्थ यह जो संशययुक्त होय कर्महीते रहित भया तब पिताने देखा जो यह कर्म ते रहित होयकर स्थित भया है. ऐसा देखके इस प्रकार कहत भया—

अग्निवेशोवाच, हे पुत्र! कर्मकी पालना क्यों नहीं कर्त्ता और तू कर्मके न करनेते सिद्धताको कैसे प्राप्त होवेगा? जिसकरके तू कर्मते रहित हुवा है, सो कारण कहिदे.

कारणोवाच, हे पिताजी! एक संशय मुझको उत्पन्न हुवा है. तिस करके मैं कर्मते चुप रहा हों, सो श्रवण करो, वेदने एक ठौर कहा है कि, जबलग जीवता रहै तबलग कर्मको करना. जो अग्निहोत्रादिक कर्म हैं, सो करताई रहै अरु और ठौर कहा है कि, धन करके मोक्ष होत नाहीं और कर्म करके मोक्ष होत नाहीं, और पुत्रादिक करके मोक्ष होत नाहीं. केवल त्यागते मोक्ष होता है। इन दोनों विषे मुझको क्या कर्त्तव्य है? यह संशयहै। सो तुम कृपाकरके निवृत्तकरो, कि क्या कर्त्तव्य है?

अगस्त्योवाच, हे सुतीक्ष्ण! ऐसे जब कारणनें पिताको कहा; तब तिसका वचन सुन अग्निवेश कहत भया.

अग्निवेशोवाच, हे पुत्र! एक कथा मुझते तू श्रवण कर जो पहिले हुई है, तिसको सुनकर हृदय विषे धरके, आगे जो तेरी इच्छा होय सोई करना.

एक सुरुचि नाम अप्सरा हती, सो जेती कुछ अप्सरा हतीं, तिनके विषे उत्तम थी. सो एक समय हिमालयके शिखरपर बैठी थी. सो हिमालय पर्वत कैसा है ? कि कामना करके संपन्न जो हृदयमें विचारे, सो पावे. तहां देवता अरु किन्नरके गण अप्सराके साथ क्रीडा करते हैं. और कैसा है. जहां गंगाजीका प्रवाह लहरी देत चला आवत है सो गंगा कैसी है कि, महापवित्र जल है जिसका, ऐसे शिखरपर सुरुचि अप्सरा बैठी थी; तिसने इंद्रका दूत अंतरिक्षते चला आवत देखा. जब निकट आया, तब अप्सराने कहा; अहो सौभाग्य देवदूत ! तू देवगणमें श्रेष्ठ है, तू कहांते आया और कहां जायगा ? सो कृपा करके कहि दे.

देवदूतोवाच, हे सुभद्रे ! तैंने पूछा है सो श्रवण कर, अरिष्टनेमि एक राजर्षि था, वाने अपने पुत्रको राज्य देकर वैराग्य लिया, संपूर्ण विषयोंकी अभिलाषा त्याग करके गंधमादन पर्वतमें जायकर भयंकर तप करने लगा, अरु धर्मात्माथा तिसके साथ मेरा एक कार्यथा, सो कार्य करके मैं अब इंद्रके पास चला जाता हौं तिसका मैं दूत हों संपूर्ण वृत्तांत निवेदन करनेको चला हौं.

अप्सरोवाच, हे भगवन् ! वृत्तांत कौनसा है ? सो मुझसे कहो. मेरको तू अतिप्रिय है; यह जानकर पूछती

हूं और जो महापुरुष है, तिनसों कोई प्रश्न करता है, तब वह उद्वेगते रहित होकर उत्तर देता है, ताते तू कहि दे.

देवदूतोवाच, हे भद्रे ! जो वृत्तान्त है सो सुन विस्तार करकै मैं तुझको कहता हौं वह जो राजा गंधमादन पर्वतमें तप करने लगा, सो बड़ा तप किया. तब देवतोंके राजा जो इंद्र हैं तिसने मुझको बोलाय कर आज्ञा करी कि, हे दूत ! तू गंधमादन पर्वतमें जा और विमान, अप्सरा, नाना प्रकारकी सामग्री, गंधर्व, यक्ष, सिद्ध, किन्नर, ताल, मृदंग आदि वाजित्र, संग लेजा और वह गंधमादन पर्वत कैसा है ? जो नाना प्रकारकी लता वृक्ष करके पूर्ण है, तहां जायके राजाको विमानपर बिठायके, इहां ल्याव, हे सुंदरी ! जब इंद्रने ऐसा कहा, तब मैं विमान अरु सामग्री सहित तहां आया. अरु राजासे कहा-हे राजन् ! तेरे कारण विमान ले आयाहूं, तापर बैठके तू स्वर्गको चल और देवतानके भोग भोगु. जब मैं ऐसे कहा तब मेरा वचन सुनकर राजा बोलत भया.

राजोवाच, हे देवदूत ! प्रथम स्वर्गका वृत्तांत तू मुझसे कह कि, तेरे स्वर्गमें दोष कहा अरु गुण कहा है ? तिनको सुनके मैं हृदयमें विचारों. पाछे जो मेरी इच्छा होवेगी तो आऊंगा.

देवदूतोवाच, हे राजन् ! स्वर्गमें बड़े दिव्य भोग हैं; सो स्वर्ग बडे पुण्यसों जीव पाते हैं; जो बड़े पुण्यवाले

होतेहैं, सो उत्तम सुख स्वर्गको पाते हैं, जो मध्यम पुण्य-वाले हैं सो मध्यम सुख स्वर्गको पाते हैं अरु जो कनिष्ठ पुण्यवाले हैं सो कनिष्ठ सुख स्वर्गको पाते हैं यह तो गुण स्वर्गमें हैं सो तोसों कहे हैं, और स्वर्गके जो दोष हैं सो सुन–हे राजन् ! जो आपते ऊंचे बैठे दृष्टि आवते हैं, अरु उत्तम सुख भोगते हैं; तिनको देखके ताप उत्पत्ति होती है; क्योंकि उनकी उत्कृष्टता सही नहीं जातीहै. अरु जो कोई अपने समान सुख भोगते हैं, तिनको देखके क्रोध उपजत है, कि मेरे समान क्यों बैठे हैं, अरु जो अपने नीचे बैठे हैं कनिष्ठ पुण्यवाले, तिनको देखके आपको अभिमान उपजत है कि, मैं इनते श्रेष्ठ हैं. और एक और भी दोष है कि जब उसके पुण्य क्षीण होते हैं, तब तिसी कालमें उसको मृत्युलोकमें गिराय देते हैं, एक क्षणभी रहने देते नहीं. हे राजन् ! यह जो दोष कहे सो स्वर्गमें हैं जो तैंने पूछा सो मैंने गुण अरु दोष कहे.

हे भद्रे ! जब इसप्रकार राजासे मैंने कहा तब मोको राजाने कहा–हे देवदूत ! इस स्वर्गके योग्य हम नहीं हैं, अरु हमको इच्छाभी नही है. हम उग्र तप करैंगे, तप करके इस देहको भी त्याग देंगे. जैसे सर्प अपनी त्वचाको पुरातन जानिके त्याग करता है, तैसे हम भी त्याग कर देंगे. हे देवदूत ! तुम अपने विमानको जहांते लाये हो, तहां लेजाओ, हमारे तो नमस्कार है.

हे देवी ! जब इस प्रकार राजाने मुझको कहा, तब विमान अप्सरा आदि सबको लेके स्वर्गमें गया, अरु संपूर्ण वर्त्तमान इंद्रसे कहा. तब इंद्र प्रसन्न हुवा अरु सुंदर वाणी करके मुझसे कहत भया—हे दूत ! तू बहुरि जहां राजा है तहां जा. वह संसारते उपराम हुआहै. इसकी अब आत्मपदकी इच्छा हुई है. इसको साथलेके वाल्मीकि जिसने आत्मतत्त्वको आत्मा करि जाना है; तिसके पास ले जाय मेरा संदेशा कहना कि, हे महाऋषि ! इस राजाको तत्त्वबोधका उपदेश करना; क्योंकि यह बोधका अधिकारी है. काहेते कि, इसको स्वर्गकी भी इच्छा नहीं, अरु औरकीभी वांछा नहीं; ताते तुम इनको तत्त्वबोधको उपदेश करो, जो तत्त्वबोधको पाय करके संसार दुःखते मुक्त होवे.

हे सुभद्रे ! जब इस प्रकार देवराजाने मुझसे कहा, तब मै चला. जहां राजाथा, तहां जाइ करिकै मैंने कहा-कि हे राजन् ! संसार समुद्रते मोक्ष होनेके निमित्त वाल्मीकिके पास चल, वाल्मीकि तुझको उपदेश करैगा. तब तिसको साथ लेकर, मैं वाल्मीकिके स्थानपर आय प्राप्त भया. तिस स्थानमें राजाको बिठाया, अरु इंद्रका संदेशा कह दिया. जो वहां वृत्तान्त भया सो सुन—जब वहां गये, अरु प्रणाम कर बैठे, तब वाल्मीकिने कहा-हे राजन् ! कुशल है ?

राजोवाच, हे भगवन् ! परम तत्त्वज्ञ और वेदांत जाननेवालोंमें श्रेष्ठ ! मैं अब कृतार्थ हुआ. तुम्हारे दर्शन करके अब मुझको कुशल हुआ है अरु कछु पूछता हों. कृपा करके उत्तर कहना, जिससे संसारबंधनते मुक्ति होय.

वाल्मीकिरुवाच, हे राजन् ! महारामायण औषध तुझसे कहता हों सो श्रवण करके तात्पर्य हृदय विषे धारणेका यत्न कर. जब तात्पर्य हृदय विषे धारेगा, तब जीवन्मुक्त होयकर विचरेगा. हेराजन् ! वासिष्ठजी अरु रामचंद्रजीका संवाद है. तिसमें सब कथा मोक्षके उपायकी कही है. तिसको सुनके जैसे रामचंद्रजी अपने स्वभाव विषे स्थित हुए, अरु जीवन्मुक्त होयके विचरे हैं तैसे तूभी विचरेगा,

राजोवाच, हेभगवन् ! रामचंद्रजी कौन था, अरु कैसा था, अरु कैसे होकर विचऱ्या है ? सो कृपा करके कहो.

वाल्मीकिरुवाच, हे राजन् ! शापके वशते, हरि जो विष्णु तिनने छल करके मनुष्यका देह धरा सो अद्वैत ज्ञानकर संपन्न है तौभी कछुक अज्ञानको अंगीकार करके, मनुष्यका शरीर धरा था.

राजोवाच, हे भगवन् ! चिदानंदरूप जो हरि हैं तिनको शाप किस कारण हुआ, अरु किसने दिया ? सो कहो,

वाल्मीकिरुवाच, हे राजन् ! एक कालमें सनत्कुमार जो निष्काम हैं सो ब्रह्मपुरीमें बैठे थे; अरु त्रिलोकीका

पति जो विष्णु भगवान्, सो वैकुंठते उतरके ब्रह्मपुरीमें आये, तब ब्रह्मासहित सर्व सभा उठके खडीहुई अरु पूजन किया; अरु सनत्कुमारने पूजन किया नहीं. तिसको देख-कर विष्णु भगवान् बोलत भया-हे सनत्कुमार ! तुझको निष्कामताका अभिमान है; ताते तू काम करके अवतार पावेगा, अरु स्वामिकार्तिक तेरा नाम होवेगा. जब विष्णु भगवान्ने ऐसा कहा, तब सनत्कुमार बोले हे विष्णु ! सर्वज्ञताका अभिमान तुझको है. सो तेरी सर्वज्ञता कोई काल निवृत्त होवेगी, अरु अज्ञानी होवेगा. हे राजन्! एक तो यह शाप हुआ और भी सुन.

एक कालमें भृगुकी स्त्री जात रही थी; तिसके वियोग कर वह ऋषि तपायमान हुआथा, तिसको देखके विष्णुजी हँसे तब भृगुब्राह्मणने शाप दिया—हे विष्णु ! मेरे तई देखि तैंने हाँसी करी है, सो मेरी नाई तू भी स्त्रीके वियोग कर आतुर होवेगा.

एक दिन देवशर्मा ब्राह्मणने नरसिंह भगवान्को शाप दिया था, सो सुन—एक दिन नरसिंह भगवान् गंगाके तीरपर गयेथे, तहां देवशर्मा ब्राह्मणकी स्त्री थी, तिसको देखके नरसिंहजी भयानक रूप दिखायके हँसे तिसको देखके, ऋषिकी लुगाईने भय पाय प्राण छोडदिये. तब देवशर्माने शाप दिया कि, तुमने मेरी स्त्रीका वियोग किया, ताते तुमभी स्त्रीका वियोग पाओगे.

हे राजन् ! सनत्कुमार अरु देवशर्माके शाप करके विष्णु भगवान्ने मनुष्यका शरीर धरा; सो राजा दशरथके घरमें प्रगटे. हे राजन् ! यह जो शरीर धरा है अरु आगे जो वृत्तांत हुआहै, सो सावधान होय श्रवण कर. दिव्य जो है देवलोक, अरु भू जो है पृथ्वीलोक, अरु पाताललोक ऐसी त्रिलोकीको प्रकाशताहै; अरु अंतर बाहर आत्मतत्त्वकरि पूर्ण है, ऐसा अनुभवात्मक मेरा आत्मा है, तिस आत्माको नमस्कार है.

हे राजन् ! यह शास्त्र जो आरंभ किया है. तिसका विषय क्या है, अरु प्रयोजन क्या है, अरु संबंध क्या है, अरु अधिकारी कौन है ? सो श्रवण कर सत्, चित्, आनंदरूप, अचिंत्य, चिन्मात्र आत्माको जनावता है, सो विषय है. अरु परमानंद आत्माकी प्राप्ति अरु अनात्म अभिमान दुःखकी निवृत्ति, यह प्रयोजन इसमें है. अरु ब्रह्मविद्या मोक्ष उपायकर आत्मपदका प्रतिपादन है, सो संबंधहै. अरु जिसको यह निश्चय है कि, मैं अद्वैत ब्रह्म, अनात्म देहका साथी हुआहों, सो किसी प्रकार छूटों, ऐसा ज्ञानवान् है, अरु मुमुक्षु है, ऐसा जो विकृति आत्मा है सो इहां अधिकारीहै.

इस शास्त्रका मोक्ष उपाय है परंतु कैसा है ? मोक्ष उपाय परमानंदकी प्राप्ति करनहारा है. जो पुरुष इसके

विचारे सो ज्ञानवान् होवे बहुरि जन्म मृत्युरूप संसारमें न आवे. हे राजन् ! यह महारामायण जो है सो पावन है श्रवणमात्रसे सब पापका नाशकर्त्ता है, जिस विषे राम कथा है सो, प्रथम मैं अपने भारद्वाज शिष्यको श्रवण कराई है.

एक समय भारद्वाज चित्तको एकाग्र करके मेरे पास आया था; तिसको मैं उपदेश किया था तिसको श्रवण करके वचनरूपी समुद्रसे साररूपी रत्नको हृदयविषे धरके एक समय सुमेरु पर्वतपर गया, तहां पितामह जो ब्रह्मा सो बैठेथे. अरु भारद्वाजने जायकर प्रणाम किया; अरु पास बैठा, अरु ब्रह्माजीको यह कथा सुनाई तब ब्रह्माने प्रसन्न होयकर भारद्वाजसे कहा-हे पुत्र! कछु वर मांग, मैं तुझपर प्रसन्न हुवा हूँ. हे राजन्! जब इस प्रकार ब्रह्माजीने कहा, तब परम उदार जिसका आशय है, ऐसा जो भारद्वाज सो कहत भया-हे भूत भविष्यके ईश्वर जो तुम प्रसन्न हुए हो तो यह वर देहु कि, संपूर्ण जीव संसार दुःखते मुक्त होहिं; अरु परमपदको पावहिं; सो उपाय कहो.

ब्रह्मोवाच, हे पुत्र ! तू अपने गुरु वाल्मीकिके पास गमन कर बहुरि जो तिसने आत्मबोध महारामायण अनिंदित शास्त्रका आरंभ किया है तिसको सुनकर जीव

महामोह संसारसमुद्रते तरैंगे. कैसा शास्त्र है महारामायण ? जो संसारसमुद्र तरनेको पुल है; अरु परम पावनहै.

वाल्मीकिउवाच, हे राजन् ! जब इस प्रकार कहा, तब आप परमेष्ठी ब्रह्मा, भारद्वाजको साथ लेकर मेरे आश्रममें आये, तब मैंने भले प्रकारसों इसका पूजन किया सो ब्रह्माजी कैसे हैं ? जिसकी सर्व भूतके हितमें प्रीतिहै सो मुझसे कहत भये.

ब्रह्मोवाच, हे मुनि ! मैं श्रेष्ठ वाल्मीकि यह जो रामके स्वभावके कथनका आरंभ तुमने किया है तिस उद्यमका त्याग नहीं करना इसको आदिते अंतपर्यंत समाप्त करना, कैसा है यह मोक्षउपाय ? जो संसाररूपी समुद्रके पार करनेको जहाज है; इस करिके सर्व जीव कृतार्थ होवेंगे.

वाल्मीकिउवाच, हे राजन् ! इस प्रकार ब्रह्माजी मुझसे कहिके अंतर्द्धान होगये, जैसे समुद्रते आवर्त्त चक्र एक मुहूर्त्त पर्यंत उठके बहुरि लीन होजाताहै तैसे ब्रह्माजी अंतर्द्धान होगये तब मैं भारद्वाजसे कहा हे पुत्र ! ब्रह्माजीने क्या कहा ?

भारद्वाजोवाच, हे भगवन् ! तुमको ब्रह्माजीने ऐसा कहा कि, हे मुनिश्रेष्ठ ! तुमने रामके स्वभावके कथनका उद्यम किया है, तिसका त्याग नहीं करना; अंतपर्यंत समाप्ति करना, काहेते कि, इस संसारसमुद्रके पारकरनेको

यह कथा जहाज है. इसकरिके अनेकजीव कृतार्थहोवेंगे, अरु संसारसंकटते मुक्त होवेंगे.

वाल्मीकिरुवाच, हे राजन् ! जब इस प्रकार ब्रह्माजीने मुझको कहा, तब ब्रह्माजीकी आज्ञाके अनुसार मैंने ग्रंथ किया; अरु भारद्वाजको कहा. हे पुत्र ! वसिष्ठजीके उपदेशको उपाय कर जिसप्रकार रामजी निःशंक होइ विचरें हैं, तैसे तू भी विचार. तब उनने प्रश्न किया.

भारद्वाजोवाच, हे भगवन् ! जिसप्रकार रामचंद्रजी जीवन्मुक्त होकर विचरेहैं सो आदिसों क्रमकरके मुझको कहो.

वाल्मीकिरुवाच; हे भारद्वाज ! रामचंद्र, लक्ष्मण,भरत, शत्रुघ्न, सीता, कौशल्या,सुमित्रा,दशरथ ये आठों अष्टमंत्री, अष्ट गुण आदि लेकर जीवन्मुक्तहोय विचरे हैं तिनके नाम सुन-रामजीसे लेके दशरथ पर्यंत आठतो ये कृतार्थ हुए हैं. अविरोध,परमबोधवान् भये हैं. और कृतभासी १,शतवर्धन २, शुकधाम ३, बिभीषण ४, इंद्रजीत ५, हनुमंत ६, वसिष्ठ ७, वामदेव ८ ये अष्ट मंत्री सो निःशंक होय चेष्टा करत भयेहैं, अरु सदाअद्वैतनिष्ठ हुएहैं.इनको कदाचित् स्वरूपते द्वैतभाव नहीं फुर्या है. अनामय पदविषे स्थितिमें तृप्त रहे, जो केवल चिन्मात्र, शुद्धपद, परमपावन ताको प्राप्त हुएहैं

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे कथारंभ
वर्णनंनाम प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥

द्वितीयः सर्गः २.

अथ तीर्थयात्रावर्णनम् ।

भारद्वाजोवाच, हे भगवन् ! जीवन्मुक्तकी स्थिति कैसी है ? अरु रामजी कैसे जीवन्मुक्त हुयेहैं ? सो आदितें लेकर अंतपर्यंत सब कहो.

वाल्मीकिउवाच, हे पुत्र ! यह जगत् जो भासता है सो वास्तविक कछु नहीं उत्पन्न भया. अविचार करके भासता है. विचार कियेते निवृत्त होजाता है. जैसे आकाशमें नीलता भासती है, सो भ्रम करके है जब विचार करके देखिये तब नीलता प्रतीति दूर होजाती है; तैसे अविचार करके जगत् भासता है अरु विचारते लीन होजाता है. हे शिष्य ! जबलग सृष्टिका अत्यंत अभाव नहीं होता, तबलग परमपदकी प्राप्ति नहीं होती. जब दृश्यका अत्यंत अभाव होय जावे, तब पाछे शुद्ध चिदाकाश आत्मसत्ता भासेगी. कोई इस दृश्यको महाप्रलयमें कदाचित् अभाव कहते हैं, परंतु मैं तुझको तीनोंही कालका अभाव कहता हौं. सो शत शास्त्रकर इस शास्त्रमें श्रद्धासंयुक्त आदिते लेकर अंत पर्यंत श्रवण कर, अरु तिनको धार, तब तिसकी भ्रांति निवृत्त होय जावे. अरु अव्याकृत पदकी प्राप्ति होवे. हे शिष्य ! संसार भ्रममात्र

सिद्ध हैं, इसको भ्रममात्र जानकर विस्मरण करना. सो मुक्ति है. अरु इसको बंधनका कारण वासना है. वासना करके भटकत फिरता है. जब वासनाका क्षय होजाय, तब परमपद्की प्राप्ति होवे. जो वासनामें फिरता है, तिसका नाम मन है जैसे जल शरदीकी दृढ जडता पायके बर्फ होता है, पाछे सूर्यके तापसे बहुरि गलकर जल होता है, तब केवल शुद्ध जल होय रहता है, तैसे आत्मारूपी जल हैं तिसविषे संसारकी सत्यतारूपी जडता शीतलताहै. तिस करके मनरूपी बर्फका पुतला हुआ है. जब ज्ञानरूपी सूर्य उदय होवेगा, तब संसारकी सत्यतारूपी जडता, शीतलता, निवृत्त होजावेगी.

जब संसारकी सत्यता अरु वासना निवृत्त हुई, तब मन नष्ट होजावेगा. जब मन नष्ट हुआ, तब परमकल्याण हुआ. ताते इसके बंधनका कारण वासनाहै. अरु वासनाके क्षय हुयेते मुक्तिहै सो वासना दोप्रकारकी है, एक शुद्ध अरु दूसरी अशुद्ध. सो अपने वास्तविक स्वरूपके अज्ञानते अनात्मा जो देहादिक, तिनमें अहंकार करना, सो जब अनात्ममें आत्म अभिमान हुआ तब नाना प्रकारकी वासना उपजती है. तिसकरके घटी यंत्रकी नाई चक्र भ्रमता है. हे साधु! यह जो पंचभूतका शरीर तू जो देखता है. सो सब वासनारूपहै. वासना सो

चक्र है. जैसे मणके धागेके आश्रयतें खड़े होते हैं और जब धागा टूट पडा, तब मणका न्यारा न्यारा होय पडता है, अरु ठहरता नहीं है. तैसे वासनाके क्षय हुए पंच-भूतका शरीर नहीं रहता. ताते सब अनर्थका कारण वासना है अरु जो शुद्ध वासना है तिनमें जगत्का अत्यन्त अभाव निश्चय होताहै. हे शिष्य ! अज्ञानीका जो निश्चय है, सो वासना कर बहुरि जन्मका कारण हो जाता है, अरु ज्ञानीकी वासना है सो बहुरि जन्मका कारण नहीं होताहै जैसे एक कच्चा बीज होता है; दूसरा दग्धबीज होताहै, तिसमें जो कच्चा है सो बहुरि उगता है; अरु जो दग्ध हुआ है सो बहुरि नहीं उगता, तैसे अज्ञानीकी वासना है सो रससहित है, सो जन्मका कारण है; अरु ज्ञानीकी वासना है सो रसरहित है सो जन्मका कारण नहीं. ज्ञानीकी चेष्टा स्वाभाविक गुण करके खडी होती है, और किसी गुणके साथ मिलकर अपनेमें चेष्टा नहीं देखता खाता हैं, पीता है, देता है, बोलता है, चलता है, विचार करता है, परन्तु अंतर सदा अद्वैत निश्चयको धरता है कदाचित् द्वैतभावना तिसको फुरती नहीं है, अपने स्वभावविषे स्थितहै ताते निर्गुण अरु अरूपहै, ताकी चेष्टा जन्मका कारण नहीं है. जैसे कुम्हारका चक्र है, सो जबलग उसको फेर चढ़ावे, तबलग वह

फिरता है. और जब फेर चढावना छोड दिया, तब स्थीयमान गतिसे उतरत उतरत फिरके स्थिर रह जाता है तैसे जबलग अहंकार सहित वासना होती है, तबलग जन्म पावता है. जब अहंकारते रहित हुआ तब बहुरि जन्म नहीं पावता. हे साधु ! यह जो अज्ञानरूपी वासना है, तिसको नाश करनेका उपाय एक ब्रह्मविद्या श्रेष्ठ है. ब्रह्मविद्या मोक्ष उपायका शास्त्र है. जब इसते और शास्त्रमें गिरैगा तब कल्पपर्यंतहू अव्याकृत पदको न पावेगा. अरु जो ब्रह्मविद्याका आश्रय करैगा तो सुखसों आत्मपदको प्राप्त होवेगा. हे भारद्वाज ! यह मोक्षउपाय रामजी अरु वसिष्ठजीका संवाद सो विचारने योग्य है; बोधका परम कारण है. ताते आद्यंत पर्यंत मोक्ष उपाय श्रवण कर. जैसे रामजी जीवन्मुक्त होय विचरे हैं सो सुन.

एक दिन रामजी विद्या पढके अध्ययन शालातें अपने गृहमें आये; अरु संपूर्ण दिन विचार करता व्यतीत करदिया. बहुरि मनमें तीर्थ, ठाकुरद्वाराका संकल्प धर पिता दशरथके पास आये. पितासों मिलके जो संपूर्ण प्रजाको सुखमें राखते थे; अरु सब प्रजा तिसके निकट रहिके सुख पाइ तिस दशरथका चरण श्रीरघुनाथजीने ग्रहण किया. जैसे सुंदर कमलको हंस ग्रहण करे तैसे पिताका चरण ग्रहण किया. जैसे

कमलके तरे कोमल तरियां होतीहैं, तिन तरियों सहित कमलको हंस पकडता है; तैसे दशरथजीकी अँगुरीनको रामजीने ग्रहण किया. अरु बोले कि, हे पिता! मेरा चित्त तीर्थ अरु ठाकुरद्वाराके दर्शनको उठा है. ताते तुम आज्ञा करो तो मैं तीर्थका अरु ठाकुरद्वारेका दर्शन कर आऊं मैं तुम्हारा पुत्र हूं तुमको पालना करनी योग्य है. और आगे मैं कभी कहा नहीं; यह प्रार्थना अब करी है. ताते तुम आज्ञा देहु; जो मैं जाऊं. यह वचन मेरा फेरना नहीं. काहेते कि, ऐसा त्रिलोकीमें कोऊ नहीं है, जिसका मनोरथ इस घरते सिद्ध हुआ नहीं है; सबका मनोरथ सिद्ध हुआ है. ताते मुझको कृपा कर आज्ञा देहु.

वाल्मीकि उवाच, हे भारद्वाज ! इस प्रकार जब रामजीने कहा. तब वसिष्ठजी पास बैठेथे. तिनने भी दशरथसे कहा-हे राजन् ! रामजीको आज्ञा देहु. सो तीर्थ कर आवें. क्योंकि, इनका चित्त उठा है. राजकुमार हैं, इनके साथ सेना दीजे, धन दीजे, मंत्री दीजे, ब्राह्मण दीजे, जो ये दर्शन कर आवें.

हे भारद्वाज ! जब ऐसे विचार किया, तब शुभ मुहूर्त्त देखकर रामजीको आज्ञा दीनी. जब चलने लगे, तब पिता अरु माताके चरण लगे. अरु सबको कंठ लगाइ रुदन

करने लगे. तिनको मिलकर आगे चले. अरु लक्ष्मण आदि जो भाई हैं और मंत्री थे, तिनको साथ लेकर, अरु वशिष्ठ आदि जो ब्राह्मण विधिको जाननेवारे थे. अरु बहुत धन, बहुत सेना तिनको साथ ले चले. और दान पुण्य करके जब गृहके बाहर निकले, तब वहांके जो लोग थे अरु स्त्रियाँ थीं तिन सबने रामजीके ऊपर फूल अरु फूलों की मालाकी वर्षा करी. सो वर्षा बरफ बरखती है ऐसी दीखतीथी. अरु रामजीकी जो मूर्त्ति है सो हृदयमें धरली नी. इस प्रकार रामजी वहांसे चले. तहां ब्राह्मण अरु निर्धनोंको दान देते देते तीर्थ जो गंगा, यमुना, सरस्वती आदि देके हैं, इसमें स्नान विधि संयुक्त कर पृथ्वीके चारों कोन उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिमको दान किया. अरु चारों ओर समुद्रके स्नान किये. अरु सुमेरु पर्वतपर गये. हिमालय पर्वतपर गये. अरु शालग्राम, बद्री, केदार, आदि गंगामें स्नान किये अरु दर्शन किये. ऐसे सब तीर्थ स्नान, दान, तप, ध्यान, विधिसंयुक्त यात्रा करते भये. जैसी जैसी जहां विधि थी तैसी तैसी तहां करी, एक वर्षमें संपूर्ण यात्रा करके रामजी बहुरि अपने घरमें आये.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे तीर्थयात्रा-
वर्णनं नाम द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥

तृतीयः सर्गः ३.

अथ विश्वामित्रागमनवर्णनम्।

वाल्मीकि उवाच, हे भारद्वाज! जब रामजी यात्रा करके अपनी अयोध्यामें आवत भये तब नगरके वासी लोग पुरुष और स्त्री फूलनकी बर्षा करत भये. अरु जयजय शब्द मुखते उच्चारने लगे. अरु प्रेमहास्य करने लगे और जैसे इंद्रका पुत्र अपने स्वर्गमें आवत है, तैसे रामचंद्रजी अपने घरमें आये. पहिले राजा दशरथको प्रणाम कर, फिर वशिष्ठजीको प्रणाम कर, फिर सब सभाके लोगोंको यथायोग्य मिले, फिर अंतःपुरमें आवत भये तहां कौशल्या आदि जो माताथीं, इनको यथायोग्य नमस्कार किये और जो भाई बांधव कुटुंब थे तिन सबको मिले.

हे भारद्वाज! इस प्रकार रामजीके आवनका उत्साह सप्तदिन पर्यंत होता रहा. वा समयमें कोऊ मिलने आवे कोऊ कछु लेनेआवे, तिनको दान पुण्य करत, बाजे बजत उत्साह हुआ. भाट आदि स्तुति करने लगे. तदनंतर रामजीका आचरण हुआ, सो सुन प्रातःकालमें उठके स्नान संध्यादिक सत्कर्म करते, बहुरि भोजन करते, बहुरि भाई बंधुको मिल अपने तीर्थकी कथा करते, देवद्वारके दर्शनकी वार्त्ता करते इस प्रकार सों उत्साह कर दिन रातको बितावतेथे.

एक दिन प्रातःकालमें उठके पिताजी दशरथको देखे सो जैसे इंद्रका तेज है, तैसा तेजवान् देखा. अरु वशिष्ठा-दिककी सभा बैठीथी, तहां वशिष्ठजीके साथ कथा वार्त्ता रामजी करते हुए, तहां एक दिन राजा दशरथ कहत भये हे रामजी ! तुम शिकार खेलने जायवो करो. ता समयमें रामजीकी अवस्था वर्ष १६ में थोरेक महीना कमतीथी. तब राजकुमार रामजीके साथ लक्ष्मण अरु शत्रुघ्न भाई थे, भरत नहानेको गयेथे; फिर तिनके साथ स्नान संध्या-दिक नित्य कर्म करके, भोजन करके शिकार खेलने जाते. तहां जो जीवको दुःख देनेहारे जानवर देखे तिनको मारते अरु अवर लोकको प्रसन्न करते इस प्रकार दिनको शिकार खेलते रात्रिको निसान बाजते अपने घरमें आवते ऐसे करत केतेक दिन बीते तामें रामजी अपने अंतःपुरमें आइ सबका त्याग करके एकांतमें चिंतन करत बैठि रहते.

हे भारद्वाज ! जेती कछु राजकुमारकी चेष्टा सो सब को रामजीने त्याग कर दीनी थी. जेते कछु रस संयुक्त इन्द्रियोंके विषय हैं, इनको त्यागके शरीरते दुर्बल जैसे हो मुखकी कांति घट गई, पीत वर्ण होगये. जैसे कमल सूखके पीतवर्ण होय जाता है, तैसे रामजीका मुख पीला होगया. अरु जैसे सूखे कमलपर भँवरे बैठतेहैं, तैसे सूखे मुखकमलपर नेत्ररूपी भँवरे भासन लागे. सोहू शोभा होवन लागी. अरु इच्छा निवृत्त होय गई

जैसे शरत्कालमें ताल निर्मल होता है; तैसे इच्छारूपी मलनते रहित चित्तरूपी तालहू निर्मल होता है तैसे वासना निवृत्त होते दिन दिनपै शरीर निर्मल होयगया, अरु जहां बैठें तहां चितासंयुक्त बैठें रहि जावे उठें नहीं, अरु बैठें तब हाथपै चिबुक धरके बैठें जब टहलुए मंत्री बहुत कहहिं, कि हे प्रभो! यह स्नान संध्याका समय हुआ है सो अब उठो, तब उठकर स्नानादिक करहिं अरु हृदयमें न विचारहिं. जेती कछु खाने, पीने, बोल-पहिरनेकी क्रिया है, सो सब विरस होय गई ऐसे रामचंद्रजी भये. तब लक्ष्मण अरु शत्रुघ्नहू रामजीको संशय-संयुक्त देखके तिस प्रकार हो बैठे, तब—

दशरथ यह वार्त्ता सुनके रामजीके पास आय बैठे अरु देखे तब महाकृश जैसा हो गया है. इस चिंता करके आतुर हुआ कि, हाय २ इनकी क्या अवस्था हुई है? इस शोकके लिये रामजीको गोदमें बैठाये अरु पूँछने लगे, कोमल सुन्दर शब्द करके बोले कि हे पुत्र! तुमको क्या दुःख प्राप्त भया है जिससे तुम शोकवान् हुये हो? तब रामजीने कहा कि, हे पिता! हमको तो दुःख कोई नहीं है. ऐसे कहिके चुप होरहा. जब केतेक दिवस इस प्रकार व्यतीत भये, तब राजाभी शोकवान् हुआ, अरु सब स्त्रियांभी शोकवान् भईं. अरु राजा, मंत्री, मिलके विचार करने लगे कि पुत्रका किसी ठौर विवाह करना अरु यह भी विचार किया-कि क्या हुआहै, जो मेरे पुत्र शोकवान्

होय रहते हैं तब वशिष्ठजीसे पूँछा कि, हे मुनीश्वर ! मेरे पुत्र शोकमें क्यों रहते हैं? तब—

वसिष्ठजीने कहा हे राजन् ! महापुरुषको जो क्रोध होता है, सो किसी अल्प कारण से नहीं होता. अरु मोह भी अल्प कारण से नहीं होता. अरु शोक भी अल्प कारण से नहीं होता. जैसे पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, जो महाभूत हैं, सो अल्प कार्य में विकारवान् नहीं होते, जब जगत्की उत्पत्ति प्रलय होती है तब विकारवान् होते हैं तैसे महापुरुष अल्प कार्यमें विकारवान् नहीं होते. ताते हे राजन् ! तुम शोक करने योग्य नहीं. अरु रामजी जो शोकवान हुआ है सो भी किसी अर्थके निमित्त होगया, पाछे इसको सुख मिलैगा, तुम शोक मतकरो.

वाल्मीकि उवाच, हे भारद्वाज ! ऐसे वशिष्ठ अरु राजा दशरथ विचार करते थे; तिसकालमें विश्वामित्रजी अपने यज्ञके सहाय अर्थ आवत भये. राजा दशरथके गृहमें आयकर पौरियोंसों कहते भये. कि राजा दशरथसे कहो. गाधिका पुत्र विश्वामित्र बाहर खड़े हैं तब इनने और बड़े पौरियाको जाय कहा. हे स्वामी ! एक बड़ा तपस्वी द्वारपै आय खड़ा है, उसने हमसे कहा कि राजा दशरथके पास जाय कहो कि विश्वामित्र आये हैं. सो सुनके राजा दशरथके पास गये, अरु कहाकि विश्वामित्र, गाधिका पुत्र बाहर खड़ा है. अरु संपूर्ण मण्डलेश्वर कर पूज्य जो राजा

दशरथ सबन सहित अपने सिंहासनपर बैठा है, अरु बड़े तेज कर संपन्न है; तिससे कहा कि विश्वामित्रने हमसे कहा है कि दशरथके पास जाय कहो कि विश्वामित्र बाहर खड़ा है-

हे भारद्वाज ! जब इस प्रकार बड़े पौरियाने राजासों कहा तब राजा सुनकर सुवणके सिंहासनसे उठ खड़ा हुआ, अरु चरणों करके चला. एक ओर वशिष्ठजी, और दूसरी ओर वामदेव जी- अरु सुभटकी नाईं मंडलेश्वर स्तुति करत चले. जब जहां ते विश्वामित्रजी दृष्टि आये तब तहांते प्रणाम करने लगे. जहां पृथ्वीपर शीश राजाका लगे तहां पृथ्वीभी हीरा, मोतीकी सुन्दर होय जावे. इस प्रकार शीश नमावत राजा विश्वामित्रके आगे चला. अरु बडी जटा शिरपरते कांधपर परी हैं, ऐसे विश्वामित्र अग्निकी नाईं प्रकाशित हैं, अरु शरीर सुवर्णकी नाईं प्रकाशता है. अरु हृदयमें शांति कोमल स्वभाव जाननेमें आवे ऐसे, अरु महातेजवान, सुंदरकांति, अरु शांतिरूप, अरु हाथमें बांसकी लकड़ी, अरु महाधैर्यवान् ऐसे विश्वामित्रको प्रणाम करत राजा दशरथ चरणोंके ऊपर जाय गिरा जैसे सूर्य सदाशिवके चरणों पर जाय गिरेथे, तैसे मस्तक नवाय कर कहा मेरे बड़े भाग्य हुए जो तुम्हारा दर्शनहुआहै, हमारे ऊपर तुमने बडी अनुग्रहकियाहै; हमको बड़ा आनंद प्राप्त हुआ है. जो अनादि, अनंत है, आदि मध्य अंतते रहित अविनाशी है; ऐसा

जो अकृत्रिम आनंदहै, सो तुम्हारे दर्शन कर मुझको प्राप्त हुआ दृष्टिमें आवताहै. हे भगवन् ! आज मेरे बडे भाग्य हुए हैं, जो मैं धर्मात्माके गिननेमें आऊंगा, काहेते कि जो तुम मेरे कुशलनिमित्त आये हो. हे भगवन् ! तुम्हारा आवना हमारे लक्षमें नहीं था. अरु तुमने बड़ा अनुग्रह किया है, जैसे सूर्य कोई कार्य करनेको पृथ्वी पर आवे, तैसे तुम मुझको दृष्टि में आवते हो. अरु सबते उत्कृष्ट दृष्टिमें आवते हो काहेते कि तुममें दो गुण हैं, एक तो क्षत्रियका स्वभाव तुम्हारेमें है, अरु दूसरा ब्राह्मणका स्वभाव भी तुम्हारे में भासता है. अरु शुभ गुण कर संपूर्ण हो, हे मुनीश्वर तुम क्षत्रियमेंते ब्राह्मण भये हो. ऐसी कोईकी सामर्थ्य नहीं देखी. अरु तुम्हारा शरीर प्रकाशमान दीखता है, अरु जिस मार्ग से तुम आये हो; अरु जिस मार्गमें तुम दृष्टि करत आये हो, तहां ते अमृत वृष्टि करत आये हो ऐसा दृष्टि आवता है. हे मुनीश्वर ! तुम आये सो तुम्हारे दर्शन कर मुझको बडा लाभ हुआ है.

हे भारद्वाज ! इस प्रकार राजा दशरथ विश्वामित्रसे बोले. अरु वशिष्ठजी आयकर विश्वामित्रको कंठ लगायके मिले, और जो मंडलेश्वर राजाथे सो बहुत प्रणाम कर इस प्रकार सब मिले. तब विश्वामित्रको राजा दशरथ घरमें ले आये, जहां राजसिंहासन था. तहां आनकर बिठाया, अरु वशिष्ठ, वामदेव को बिठाये. और राजा

दशरथने विश्वामित्रका पूजन किया, अरु अर्घ्य पादार्चन करके प्रदक्षिणा करी, बहुरि वशिष्ठजीने विश्वामित्रका पूजन किया अरु विश्वामित्रने वशिष्ठजीका पूजन किया, ऐसे अन्योन्य पूजन हुआ, इस प्रकार पूजन करके सब अपने अपने आसनपर यथायोग्य बैठे, तब—

राजा दशरथ बोले हे भगवन्! हमारे बडे भाग्य हैं जो तुम्हारा दर्शन हुआ, जैसे कोऊ तप्तको अमृत प्राप्ति होवे; अरु जन्मांधको नेत्र प्राप्त होवें, सो आनंद पावे जैसे निर्धनको चिंतामणि प्राप्त होवे, अरु आनंदको पावे. अरु जैसे किसीका बांधव मुवा होय, सो विमान पर चढा हुआ आकाशते आवे, उसको जैसा आनंद प्राप्त होवे; तैसे तुम्हारे दर्शन कर, मैं आनंदको प्राप्त हुआ हूँ. हे मुनीश्वर ! तुम्हारा आवना जिस अर्थ हुआहै, सो कृपा कर कहो. अरु जो तुम्हारा अर्थ हो सो पूर्ण हुआ जानो. काहेते कि ऐसा पदार्थ कोई नहीं है, जो तुमको देना कठिन है. सब कछु मेरे विद्यमान है. जो तुम्हारा अर्थ है सो निश्चय कर जानने योग्य होय रहा है. जो कछु तुम आज्ञा करोगे सो मैं देऊंगा.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे विश्वामित्रागमनवर्णनं नाम तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥

चतुर्थः सर्गः ४.

अथ विश्वामित्रेच्छावर्णनम्.

वाल्मीकि उवाच, हे भारद्वाज ! जब इसप्रकार राजा दशरथने कहा, तब मुनिनमें शार्दूल जो विश्वामित्र, बहुत प्रसन्न भये, अरु रोम खडे हो आये, जैसे पूर्णमासीके चंद्रमाको देखके क्षीरसागर प्रसन्न होताहै, तैसे प्रसन्न होकर कहत भये-हे राजशार्दूल ! तुम धन्य हो ! ऐसा क्यों न होवे; जो तुम्हारेमें दो गुण श्रेष्ठ हैं एक तो रघुवंशी हो. दूसरा वशिष्ठजी तुम्हारा गुरु हैं; ताकी आज्ञामें चलते हो. ताते—

हे राजन् ! जो कछु मेरा प्रयोजन है सो तुम्हारे आगे प्रगट करता हूँ, श्रवण करो. दशरात्र यज्ञका मैंने आरंभकिया है; सो जब यज्ञको करने लगताहूं तब राक्षस खर अरु दूषण उस यज्ञको तोर डारते हैं. जहां जहां मैं जायकर यज्ञ करता हूं; तहां तहां आय कर अपवित्र जो रुधिर अरु मांस, अरु अस्थि सो डारते हैं; सो स्थान यज्ञ करने योग्य नहीं रहता और बहुरि मैं और ठौर करने लगताहूँ, तहां भी उसी प्रकार अपवित्र कर जाते हैं. तिसके नाश करनेके निमित्त मैं तुम्हारे पास आया हूँ. कदाचित् ऐसे कहो कि तुम भी तो समर्थ हो तो हे राजन् ! मैंने यज्ञका आरंभ कियाहै तिसका

अंग क्षमाहै. जो उसको मैं शाप देऊं, तो वह भस्म हो जावे, परंतु शाप क्रोध बिना होता नहीं. अरु क्रोध कियेते यज्ञ निष्फल होजाताहै. अरु जो मैं चुपहो रहों तो वह राक्षस अपवित्र वस्तु डार जाते हैं. ताते मैं तुम्हारी शरण आयाहों, मेरा कार्य करो. हे राजन् ! तेरा जो रामजी पुत्र है, सो कमलनयन काकपक्ष संयुक्त है. अर्थ यह जो बालक दूसरी शिखा सहित रहे हैं. तिसको मेरे साथ देहु, जो राक्षसोंको मारैं; तब मेरा यज्ञ सफल होय. और तुमको ऐसा शोक करना नहीं चाहिये कि मेरा पुत्र बालक है यह तो बडे इंद्रके समान शूरवीर हैं. इनके समीप वह राक्षस ठहर न सकैंगे. जैसे सिंहके सन्मुख मृगके बच्चे ठहर नहीं सकते. तैसे तेरे पुत्रके सन्मुख राक्षस न ठहर सकैंगे. ताते मेरे साथ उनको तुम देहु. जो तुम्हारा भी धर्म रहै अरु यशभी रहै मेरा कार्य भी होवे. इसमें संदेह नहीं करना.

हे राजन् ! ऐसा पदार्थ त्रिलोकीमें कोई नहीं जो रामजीका किया कछु न होवे. इसीसे मैं तेरे पुत्रको लिये जाता हूँ यह मेरे करसों ढांपा रेहगा; अरु इसको कोई विघ्न मैं होने न देऊंगा; अरु जो तेरे पुत्र वस्तु हैं सो मैं जानताहूं; और वशिष्ठजीहू जानते हैं. और जो ज्ञानवान् त्रिकालदर्शी होवेगा, सो भी इनको जानता होयगा. और कोई की भी सामर्थ्य नहीं है जो इनको जानसकै. ताते तुम इनको मेरे साथ देहु जो मेरे कार्यकी सिद्धि होय.

हे राजन् ! जो समयपर कार्य होता है, सो थोरे करने सेभी बहुत सिद्धि पावता है. जैसे द्वितीयाके चंद्रमाको देखके एक तंतुका दान किया होय सो भी बहुत है; पीछ वस्त्रका दान कियेते भी तैसा कार्य सिद्धि नहीं होता तसे समयपर थोडा कार्य भी बहुत सिद्धिको देताहै अरु समय बिना बहुत कार्य भी थोरे फलको देताहै. ताते तुम मेरे साथ रामजीको दीजै.

खर, दूषण, ये बडे दैत्य हैं. सो आयकर मेरा यज्ञ खंडन करते हैं; जब रामजी आवैंगे तब वह भाग जायँगे. रामजीके आगे खडे न होय सकैंगे. इनके तेजसे वह सब अल्प बल होजावेंगे. जैसे सूर्यके तेज करिके तारागणका प्रकाश छिप जाता है; तैसे रामजीके दर्शनसे वह स्थित न रहैंगे. जैसे गरुडके आगे सर्प नहीं ठहर सक्ते, तैसे रामजीके आगे राक्षस न ठहर सकैंगे. देखकर भाग जायँगे. ताते तुम मेरे साथ देहु जो मेरा कार्य होवे; अरु तुम्हारा धर्म भी रहै. रामजीके निमित्त संदेह मत करना. वह राक्षसकी सामर्थ्य नहीं जो रामजीके निकट आवे. अरु मैं भी रामजीकी रक्षा करूंगा.

वाल्मीकि उवाच, हे भारद्वाज ! जब विश्वामित्रने ऐसा कहा, तब राजा दशरथ सुनकर चुपरहा अरु गिरपडा. एक मुहूर्त्त पर्यंत पड़ा रहा.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे विश्वामित्रेच्छा-
वर्णनं नाम चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥

पंचमः सर्गः ५.

अथ दशरथोक्तिवर्णनम् ।

वाल्मीकि उवाच, हे भारद्वाज! एक मुहूर्त्त पीछे राजा उठे अरु महादीनसे होगये, अरु महामोहको प्राप्त हो गये, धैर्यते रहित होकर बोले.

राजोवाच, हे मुनीश्वर ! तुमने क्या कहा रामजी अभी तो कुमार हैं शस्त्रविद्या, अस्त्रविद्या भी सीखे नहीं हैं अभी तो फूलनकी शय्यापर शयन करनेवारे हैं, वह युद्धको क्या जानैं. अंतःपुरमें स्त्रियनके पास बैठनेवाले हैं, राजकुमार बालकनके साथ खेलनेवाले हैं और कदाचित् रणभूमि देखीहू नहीं है, भ्रुकुटीको चढायके कदाचित् युद्ध भी नहीं किया अरु कमलकी नाईं जिसके हाथहैं, अरु कोमल जिसका शरीर है, वह राक्षसके साथ युद्ध कैसे करैगा, कहूं पत्थरका अरु कमलका भी युद्ध हुआ है। रामजीका वपु कमल समान कोमल है, अरु वह महाक्रूर पत्थरकी नाई हैं, उनके साथ युद्ध कैसे होवेगा,

हे मुनीश्वर ! मैं नव सहस्र वर्षका हुआ हूं, अब दशवां सहस्र लगा है. वृद्ध हुआ हूं यह वृद्धावस्थामें मेरे घर पुत्र हुवे हैं, सो चारोंके मध्य रामजी कमल नयन. कछु षोडश वर्षका हुआ है. अरु मुझको बहुत प्रियतम है. अरु मेरा प्राण है. रामजी बिन मैं एक क्षणभी रहि नहीं सकता. जो

तुम इनको ले जाओगे तो मेरा प्राण निकल जायगा ! मैं मृतक हो जाऊंगा.

हे मुनीश्वर ! केवल मेराही ऐसा सनेह सो नहीं है. उसका भाई जो लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, अरु उसकी माता जो है, सो सबहीके प्राण रामजी हैं. जो तुम रामजीको लेजाओगे, तो हम सबही मर जायँगे. वियोग करके जो हमको मारने आये हो तो ले जाओ, हे मुनीश्वर ! मेरे चित्तमें रामही फुर रहा है. तिसको मैं तुम्हारे साथ कैसे देऊं, मैं उसको देखत देखत प्रसन्न होता हूँ जैसे पूर्णमासीके चन्द्रमाको देख कर क्षीर समुद्र प्रसन्न होता है, अरु चन्द्रको देखकर चकोर प्रसन्न होता है, अरु मेघ बूंदको देखकर पपीहा प्रसन्न होता है, तैसे रामजीको देखकर मैं प्रसन्न होता हूँ, तब रामजीको वियोग कर मेरा जीवना कैसा होयगा, हे मुनीश्वर ! मेरेको रामजी जैसी प्रिय स्त्री भी नहा. अरु धनभी ऐसा प्रिय नहीं, अरु राज्यभी ऐसा प्रिय नहीं और पदार्थ भी मुझको कोई रामके समान प्रिय नहीं है. ऐसा रामजी प्यारा है.

हे मुनीश्वर ! तुम्हारे वचन सुनके बड़े शोकको प्राप्त हुआ हूं. मेरे बडे अभाग्य आये हैं; जो तुम्हारा आवना इस निमित्त हुआ है. तुम्हारे वचन सुनकर जैसे कमलके ऊपर पत्थरकी वर्षा होय ऐसी व्यथा मेरेको होती है. अरु पत्थरकी वर्षाते जैसे कमल नष्ट हो जाते हैं, तैसे तुम्हारे वचनते मेरी नष्टता हो जायगी. जैसे बडा मेघ चढ़ आवे

तामें बडा पवन चलै तब मेघकी गंभीरताका अभाव होय जाय; तैसे तुम्हारे वचनते मेरी बडी प्रसन्नताका अभाव होय जाता है! जैसे वसन्तऋतुकी मंजरी, ज्येष्ठ आषाढमें सूख जाती है तैसे तुम्हारे वचन सुन मेरे हृदयकी प्रसन्नता जर जाती है! हे मुनीश्वर! रामजीको देनेमें मैं समर्थ नहींहूं. जो तुम कहो तो एक अक्षौहणी सेना मेरी है; सो बडे शूरवीरकी है. जिसको शस्त्रविद्या, अस्त्रविद्या, मंत्रविद्या, सब आवती है. और सबे युद्धमें चतुर हैं. तिनके साथ मैं तुम्हारे संग चलता हों वहां जायके मैं उनको मारूंगा अरु हस्ती, घोडा, रथ, प्यादे, ऐसी चतुरंगिनी सेनाको साथ ले जाओ, अरु जो तुम्हारे यज्ञके खंडनहारे हैं तिनको नाश करो, अरु एकके साथ मैं युद्ध न करसकूँगा जो कदाचित् यज्ञ खंडनहारा कुबेरका भाई, अरु विश्रवाका पुत्र, रावण होवे तो उसके साथ युद्ध करनेको मैं समर्थ नहीं.

हे मुनीश्वर! आगे मेरेमें बड़ा पराक्रम था, वैसा त्रिलोकीमें किसीको नहीं था. जो मेरे निकट मारनेको आता, तो वाको मैं मार देता. अब मेरी वृद्धावस्था हुई है, अरु देह जर्जरी भावको प्राप्त हुआ है. इस कारण रावणके साथ युद्ध करनेको मैं समर्थ नहीं हूँ.

हे मुनीश्वर! मेरे बडे अभाग्य हैं जो तुम्हारा आना इस निमित्त हुआ है. अब मेरा वैसा पराक्रम नहीं मैं रावण सों काँपता हूँ. केवल म ही नहीं काँपता; इन्द्रा-

दिक देवता सब रावणसे कँपते हैं; अरु राक्षस सब उसके वश वर्त्तते हैं. अब किसीको शक्ति नहीं है जो रावणके साथ युद्ध करे ? इस कालमें वह बड़ा शूरवीर है.

हे मुनीश्वर ! जब मेरी सामर्थ्यता भी नहीं रही; तो राजकुमार रामजी कैसे समर्थ होवेंगे; अरु जिस रामजीको लेने तुम आये हो, सो रोगी हो रहा है, उसको चिंता ऐसी आय लगी है, जिससे वह महादुर्बल होगया है, अरु अंतःपुरमें एकांतमें बैठा रहता है, खाना पीना इत्यादिक जो राजकुमारकी चेष्टा है सो सब उसको विरस होगई है. अरु मैं नहीं जानता कि, उसको क्या दुःख प्राप्त हुआ है. जैसे कमल सूखके पीत वर्ण होजाता है, तैसा उसका मुख होगया है, उसको युद्ध करनेकी सामर्थ्यता नहीं अरु अपने स्थानते बाहरकी पृथ्वी भी नहीं देखी है, सो युद्ध कैसे करैंगे ।

हे मुनीश्वर ! वह युद्ध करनेको समर्थ नहीं हैं अरु हमारे प्राण वही हैं. जो उसका वियोग होवेगा तो हमारा जीवना नहीं होवेगा, जैसे जल बिना मछली जीवती नहीं है, तैसे हम रामजी बिना कैसे जीवेंगे ? अरु जो राक्षसके युद्ध निमित्त कहो तो हम तुम्हारे साथ चलैं, अरु रामजी युद्ध करनेको योग्य नहीं.

इति योगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे दशरथोक्ति वर्णनं नाम पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥

षष्ठः सर्गः ६.

अथ रामसमाजवर्णनम्.

वाल्मीकिरुवाच, हे भारद्वाज ! जब इस प्रकार राजा दशरथने कहा, तब महादीन जैसे मोह सहित अधीर्यवान् वचन सुनकर क्रोधसों विश्वामित्र कहत भये.

विश्वामित्रोवाच, हे राजन् ! तू अपने धर्मको सुमिरण कर यह प्रतिज्ञा तैंने करीहै, "जो तेरा अर्थ होवेगा सो पूर्ण करूंगा, और पूर्ण हुआ जानना" ऐसा तुमने कहा है, अब तू अपने धर्मको त्यागताहै और जो तू सिंह हुआ मृगोंकी नाईं भागता है तो भाग; परंतु आगे रघुवंशमें ऐसा कोई नहीं हुआ. जैसे चंद्रमाके मंडलमें शीतलता होती है, अग्नि निकसता नहीं है, तैसे तुम्हारे कुलविषे ऐसा कदाचित् नहीं हुआ; अरु जो तू करता है तो कर, हम उठ जायँगे. काहेते कि शून्य गृहते सूनेई जाता है. परंतु यह तुमको योग्य न था. अरु तुम बसते रहो, राज्य करते रहो, अरु जो कछु होवेगा सो हम समझ लेयँगे. अरु जो अपने धर्मको तू त्यागता है तो त्याग दे.

वाल्मीकिरुवाच, हे भारद्वाज ! इस प्रकार जब अत्यंत क्रोधवान् होकर विश्वामित्र बोला, तब इसके क्रोध करनेसे पचास कोटि पृथ्वी कँपने लगी. अरु इंद्रादिक देवता भी भयको प्राप्त हुए, कि ये क्या हुवा; तब वसिष्ठ जी बोले.

वशिष्ठोवाच, हे राजन्! इक्ष्वाकुके कुलमें सब परमार्थी हुए हैं. और तू अपने धर्मको क्यों त्यागता है. मेरे विद्यमान तैंने कहा है, "जो तुम्हारा अर्थ होवेगा, सो मैं पूर्ण करूंगा." अब तू क्यों भाजता है ? रामजीको इसके साथ दे. अरु यही तेरे पुत्रकी रक्षा करैंगे. जैसे सर्पते अमृतकी रक्षा गरुड करता है, तैसे तेरे पुत्रकी रक्षा यह करैगा, अरु यह कैसा पुरुष है सो श्रवण कर. इसके समान बल किसीका नहीं, साक्षात् बलकी मूर्त्ति है अरु धर्मात्मा है. साक्षात् धर्मकी मूर्त्ति है. अरु ऐसा तपस्वी कोऊ नहीं है. अरु तपकी खानि है. अरु इसके समान कोऊ बुद्धिमान् नहीं है. अरु इसकेसमान कोई शूरमा नहीं है, अरु अस्त्र शस्त्र विद्यामें भी इसके तुल्य कोऊ नहीं है. काहेते कि जो दक्षप्रजापतिकी दो पुत्री थीं; एक जय,अरु दूसरी सुभगा, सो ये ऋषिको दीनी है, अरु जयथी, तिसमें दैत्योंके मारने निमित्त पांचसौ पुत्रोंको प्रगट किये थे, अरु सुभगाके भी पांचसौ पुत्र भये थे सो सब दैत्योंके नाश निमित्त उत्पत्ति कियेथे. सो स्त्रियां इसके विद्यमान मूर्त्ति धरके स्थितहुई हैं, ताते इसको जीतनेको कोऊ समर्थ नहीं है, जिसका साथी विश्वामित्र होवे सो त्रिलोकीमें काहू सों नहीं डरै,ताते इसके साथ तू अपना पुत्र दे, अरु संशय मतकर. किसीकी सामर्थ्य नहीं जो इसके होते तेरे पुत्रको कछु कोऊ कहिसके. इसकी दृष्टिके

देखनेते दुःखका अभाव होजाता है. जैसे सूर्यके उदयते अंधकारका अभाव होजाताहै तैसे.

हे राजन् ! इसके साथ तेरे पुत्रको खेद कहां होवे. तू इक्ष्वाकुके कुलकाहै, अरु दशरथ तेरा नामहै. सो तेरे जैसे धर्म्मात्मा जब अपने धर्ममें स्थित न रहे तो और जीवते धर्मकी पालना कैसे होयगी ? जो कछु श्रेष्ठपुरुष चेष्टा करतेहैं, तिनके अनुसार और जीव करते हैं. जो तुम सारखे अपने वचनकी पालना न करैंगे, तब और सों कहा बनगी, अरु तुम्हारे कुलमें ऐसा कबहूं नहीं हुवा. ताते अपने धर्मको त्यागना योग्य नहीं. तू अपने पुत्रको दे, अरु जो तू उनके भयकर शोकमान होवे, तो भी ना मतिकहै, और मूर्त्तिधारी काल आयकर स्थित होवे तौभी विश्वामित्रके विद्यमान तेरे पुत्रको कछु होवे नहीं, तू शोक मतकर. अपने पुत्रको इसके साथ दे, अरु जो न देगा, तौ दो प्रकारका तेरा धन नष्ट होवेगा-एक धन यह है कि जो कूप, बावडी, ताल, कराये होयँगे, तिनका जो पुण्य है, सो नष्ट हो जावेगा. अरु तप, व्रत, यज्ञ, दान, स्नानादिकका जो पुण्य है, अरु क्रिया है तिस सबका फल नष्ट होजावेगा, औ तेरा गृह निरर्थ होय जावेगा. ताते मोह अरु शोकको त्याग, अरु अपने धर्मका सुमिरण कर, रामजी इसके साथ दे, तेरे सब कार्य्य सफल होवेंगे.

हे राजन्! जो इस प्रकार तुमको करना था. तो प्रथमही विचारकर कहना था. काहेसे कि विचार बिना काम करनेका परिणाम दुःख होता है, ताते इसके साथ अपने पुत्रको देहु.

वाल्मीकिउवाच, हे भारद्वाज! जब इस प्रकार वसिष्ठजीने कहा, तब राजा दशरथ धैर्यवान् होकर, भृत्यों में जो श्रेष्ठ भृत्य था, वाको बुलायकर कहत भया, हे महाबाहु! रामजीको ले आओ. तब इसके साथ जो चाकर अंतर बाहर आवने जावने वारा था, अरु छलते रहित था, सो राजाकी आज्ञा लेकर रामजीके निकट गया, और एक मुहूर्त्त पाछे पीछा आया, अब कहत भया हे देव! रामजी तो बडी चिंतामें बैठे हैं. मैंने रामजीसे वारंवार कहा कि अब चलिये, तब वह कहते हैं कि चले हैं. ऐसे कहि कहि चुप हो रहते हैं.

हे भारद्वाज! इस प्रकार जब राजानें श्रवण किया तब कहा, रामजीके मंत्री अरु टहलुए सब बुलावो, सेवक सबको बुलाय निकटलाये, तब राजा आदरसों कोमल सुंदर वचन युक्तिसें कहत भया, हे रामजीके प्यारे! रामजीकी कहा दशाहै और ऐसी दशा क्योंकर हुई है. सो सब क्रम करके कहो.

मंत्री उवाच, हे देव! हम कहा कहैं, जेते हम कछु दृष्टि आवते हैं सो सब आकार अरु प्राण देखनें मात्र हम

हैं, अरु हम सब मृतक हैं. काहेते कि हमारा स्वामी रामजी बडी चिंताको प्राप्त हुआ है. हे राजन् ! जिस दिनसे रघुनाथजी तीर्थ कर आये हैं तिस दिनसे चिंताको प्राप्त भये हैं. जब उत्तम भोजन हम ले जाते हैं, और पान करनेका पदार्थ, और पहरनेका पदार्थ, अरु देखनेका पदार्थ कछु लेजाते हैं, सो सुखदाई पदार्थ रस सहित तिसे देखके किसी प्रकार प्रसन्न होते हमने नहीं देखाहै. ऐसी चिंताके विषे वह लीनहैं: कि देखता भी नहीं, अरु जो देखताहै तो क्रोध करताहै, अरु सुखदाई पदार्थका निरादर करताहै, अरु अंतःपुरमें इनकी माता नानाप्रकारके हीरे अरु मणिके भूषण देतीहै, तौ उनको भी डारदेताहै, नहीं तो किसी निर्धनको देदेताहै, किसी पदार्थ पै प्रसन्न होते नहीं हैं. सुंदर स्त्रियां खडी विद्यमान होती हैं, नानाप्रकारके भूषणहू सहित महामोह करनेहारी निकट होइकर लीलाकरती हैं, कटाक्षहू सहित प्रसन्न करने निमित्त; तौभी विषवत् जानतेहैं, उनकी ओर देखता भी नहीं. जैसे पपैया और जलको देखता भी नहीं. जब अंतःपुर विषे निकसता है, तब उनको देखकर क्रोधवान् होता है.

हे राजन् ! और कछु उसको भला नहीं लगता. किसी बड़ी चिंता विषे मग्नहै. और तृप्त होकर भोजन भी नहीं करता, क्षुधावंत रहता है. और न कछु पहरने, खाने, पीने की इच्छा रखताहै. न राज्यकी इच्छाहै न किसी इंद्रियहू

के सुखकी इच्छा है, महा उन्मत्तकी न्याईं बैठा रहता है. अरु जब कोई सुखदाई पदार्थ फूलादिक लेजाते हैं, तब क्रोध करता है, हम नहीं जानते कि क्या चिंता उसको भई है, एक कोठरीमें पद्मासन करि अरु हाथमें मुख धरके बैठा रहताहै अरु जो कोऊ बडा मंत्रीआयके पूछता है, तब उससे कहता है, कि तुम जिसको संपदा मानते हो सोई आपदा है, जिस को आपदा जानते हो सो आपदा नहीं है अरु नानाप्रकारके संसारके पदार्थ जो रमणीय कर जानते हो, सो सब झूठे हैं, याहीमें सब डूबे हैं, ये सब मृगतृष्णाके जलवत् हैं; तिनको सत्य जान मूर्ख जो हरिण सो दौरते हैं, अरु दुःख पाते हैं.

हे राजन्! कदाचित् बोलते हैं तो ऐसे बोलते हैं. और कछु उनके उरमें सुखदायी नहीं भासताहै. अरु जो हम हाँसीकी वार्त्ता करते हैं तो वह हँसता नहींहै. जिस पदार्थको प्रीतिसंयुक्त लेते थे तिस पदार्थको अब डारि देतेहैं अरु दिन दिनपै दुर्बल हुये जातेहैं अरु जब अंतःपुरमें स्त्रियोंके पास बैठताहै; अरु वह नानाप्रकारकी चेष्टा रामजीको प्रसन्न करनेके निमित्त देखावती हैं उनको भी देखके प्रसन्न नहीं होता अरु जैसे मेघकी बूँदते पर्वत चलायमान् नहीं होते हैं; तैसे आप चलायमान् न होते हैं. अरु जो बोलताहै तो ऐसे कहता है-न राज्य सत्य है, न भोग सत्य हैं, न जगत् सत्य है,न मित्र सत्य है; मिथ्या

पदार्थके निमित्त मूर्ख परे यत्न करते हैं. जिनको सत्य जानते हैं अरु सुखदायक जानतेहैं, सो बंधनका कारण है; और कहा कहिये जो कोई उनके पास राजा अथवा पंडित जावे तिनको देखकर कहता है-यह पशु हैं, आशा-रूपी फाँसीसे बांधे हुये हैं.

हे राजन् ! जो कछु भोग्य पदार्थ हैं तिनको देखकर उसका चित्त प्रसन्न नहीं होता, अरु देखके क्रोधवान् होताहै जैसे पपैया मारवाडमें आवे, अरु मेघकी बूँदहू देखता नहीं है अरु खेदवान् होता है, तैसे रामजी विषय हूते खेदवान् होताहै. हे राजन् ! इनकरके हर्षवान् नहीं होता, ताते हम जानते हैं कि इनको परमपद पानेकी इच्छा है, परन्तु कदाचित् मुखते सुना नहीं है, अरु त्या-गका अभिमान भी कदाचित् सुना नहीं है, कबहूं गाता है; अरु बोलता है तब ऐसे कहता है, हाय हाय ! मैं अ-नाथ मारागया हूं. अरे मूर्ख ! तुम संसार समुद्रमें क्यों डूबते हो, यह संसार परम अनर्थका कारण है, इसमें सुख कदाचित् हू नहीं है, इससे छूटनेका उपाय करो.

हे राजन् ! ऐसा भी कभी हम सुनते हैं, अरु किसीके साथ बोलता नहीं है, न हँसता है, न मंत्रीके साथ, न अपन अंतःपुरनकी स्त्रियोंके साथ, न माताके साथ बोलता है, किसी परमचिन्तामें मग्न है, अरु किसी पदार्थकर आश्चर्यवान् नहीं होता. जो कोऊ कहै कि आकाशमें बाग

लगाहै, तिसमें फूल फूले हैं, तिनको मैं ले आया हूं, तिसको सुनकर भी आश्चर्यवान् नहीं होता, सब भ्रम मात्र देखता है. न किसी पदार्थसे उसको हर्ष होता है, न किसी पदार्थसे उसको शोक होताहै, किसी बड़ी चिन्तामें मग्न है सो किसीको चिन्ता निवारनेमें हम समर्थ नहीं देखते हैं, वह तो चिन्ताके समुद्रमें मग्न है. हे राजन्! यह चिन्ता हमको लगरही है; कि रामजीको न खानेकी इच्छा है, न पहिरनेकी इच्छा है, न बोलने की, न देखनेकी इच्छारही है, न किसी कर्मकी इच्छा रही है. ताते मृतक नहो जावे ऐसी हमें चिन्ता है. अरु जो कोऊ कहता है कि तू चक्रवर्ती राजा है, तेरो बडा आयुर्बल होइ, अरु बडे सुखको पाओ. तब तिसके वचन सुन कठोर बोलता है.

हे राजन्! केवल रामजीहीको ऐसी चिंता नहीं; लक्ष्मण अरु शत्रुघ्नको भी ऐसी चिंता लगरही है. रामको देखकर जो कोऊ उनकी चिंता दूर करनेहारा होवे तो करे नहीं तो बडी चिंता मध्य डूबे रहैंगे. किसी पदार्थकी इच्छा उनको नहीं रहती है.

हे राजन्! अब कहा कहते हो? तेरा पुत्र अब अतीत ह्वै रहा है. एक वस्त्र उपरना ओढकर बैठा है ताते सोई उपाय करो, जिससे उसकी चिन्ता निवृत्त होवे;

विश्वामित्रोवाच, हे साधु! जो रामजी ऐसे हैं तो हमारे पास विद्यमान लाओ, हम उसका दुःख निवृत्त करैंगे. हे

पदार्थके निमित्त मूर्ख परे यत्न करते हैं. जिनको सत्य जानते हैं अरु सुखदायक जानतेहैं, सो बंधनका कारण है; और कहा कहिये जो कोई उनके पास राजा अथवा पंडित जावे तिनको देखकर कहता है-यह पशु हैं, आशा-रूपी फाँसीसे बांधे हुये हैं.

हे राजन्! जो कछु भोग्य पदार्थ हैं तिनको देखकर उसका चित्त प्रसन्न नहीं होता, अरु देखके क्रोधवान् होताहै जैसे पपैया मारवाडमें आवे, अरु मेघकी बूँदहू देखता नहीं है अरु खेदवान् होता है, तैसे रामजी विषय हूते खेदवान् होताहै. हे राजन् ! इनकरके हर्षवान् नहीं होता, ताते हम जानते हैं कि इनको परमपद पानेकी इच्छा है, परन्तु कदाचित् मुखते सुना नहीं है, अरु त्या-गका अभिमान भी कदाचित् सुना नहीं है, कबहूं गाता है; अरु बोलता है तब ऐसे कहता है, हाय हाय ! मैं अ-नाथ मारागया हूं. अरे मूर्ख ! तुम संसार समुद्रमें क्यों डूबते हो, यह संसार परम अनर्थका कारण है, इसमें सुख कदाचित् हू नहीं है, इससे छूटनेका उपाय करो.

हे राजन्! ऐसा भी कभी हम सुनते हैं, अरु किसीके साथ बोलता नहीं है, न हँसता है, न मंत्रीके साथ, न अपन अंतःपुरनकी स्त्रियोंके साथ, न माताके साथ बोलता है, किसी परमचिन्तामें मग्न है, अरु किसी पदार्थकर आश्चर्यवान् नहीं होता. जो कोऊ कहै कि आकाशमें बाग

लगाहै, तिसमें फूल फूले हैं, तिनको मैं ले आया हूं, तिसको सुनकर भी आश्चर्यवान् नहीं होता, सब भ्रम मात्र देखता है. न किसी पदार्थसे उसको हर्ष होता है, न किसी पदार्थसे उसको शोक होताहै, किसी बड़ी चिन्तामें मग्न है सो किसीको चिन्ता निवारनेमें हम समर्थ नहीं देखते हैं, वह तो चिन्ताके समुद्रमें मग्न है. हे राजन्! यह चिन्ता हमको लगरही है; कि रामजीको न खानेकी इच्छा है, न पहिरनेकी इच्छा है, न बोलने की, न देखनेकी इच्छारही है, न किसी कर्मकी इच्छा रही है. ताते मृतक नहो जावे ऐसी हमें चिन्ता है. अरु जो कोऊ कहता है कि तू चक्रवर्ती राजा है, तेरो बडा आयुर्बल होइ, अरु बडे सुखको पाओ. तब तिसके वचन सुन कठोर बोलता है:

हे राजन्! केवल रामजीहीको ऐसी चिंता नहीं; लक्ष्मण अरु शत्रुघ्नको भी ऐसी चिंता लगरही है. रामको देखकर जो कोऊ उनकी चिंता दूर करनेहारा होवे तो करे नहीं तो बडी चिंता मध्य डूबे रहैंगे. किसी पदार्थकी इच्छा उनको नहीं रहती है.

हे राजन्! अब कहा कहते हो? तेरा पुत्र अब अतीत ह्वै रहा है. एक वस्त्र उपरना ओढकर बैठा है ताते सोई उपाय करो, जिससे उसकी चिन्ता निवृत्त होवे;

विश्वामित्रोवाच, हे साधु! जो रामजी ऐसे हैं तो हमारे पास विद्यमान लाओ, हम उसका दुःख निवृत्त करैंगे. हे

राजा दशरथ! तू बडा धन्य है. कि जिसका पुत्र विवेक अरु वैराग्यको प्राप्त भया. हे राजन्! हम तेरे पुत्रको परमपदकी प्राप्ति करैंगे. अभी सब दुःख उनके मिट जायँगे. हम वसिष्ठादि जो बैठेहैं सो एक युक्तिकर उपदेश करैंगे. तिस करके उनको आत्मपदकी प्राप्ति होवेगी. तब वह दशा तेरे पुत्रकी होवेगी जो लोष्ट पत्थर अरु सुवर्णको समान जानैंगे. अरु जो कछु तुम्हारे क्षत्रियकी प्रवृत्तिका आचरणहै सो करैंगे अरु हृदयमें प्रेमते उदासीहोवेंगे. ताते हे राजन्! उस करके तुम्हारा कुल कृतकृत्य होवेगा. ताते रामजीको शीघ्र बोलावहु.

वाल्मीकिरुवाच, हे भारद्वाज! ऐसे मुनींद्रके वचन सुनकर राजादशरथ मंत्री अरु नौकरोंसे कहत भया कि रामजी अरु लक्ष्मण अरु शत्रुघ्नको लेआओ. जैसे हरिणीको हरिण ले आताहै तैसे ले आओ. जब राजा दशरथने ऐसा कहा, तब मंत्री अरु भृत्य रामजीके पास जायके कहा; तब रामजीआये सो आवत आवत राजा दशरथ, अरु वशिष्ठजी, अरु विश्वामित्रको देखे कि, तीनोंके ऊपर चमर होयरहे हैं, अरु वडे मंडलेश्वर बैठेहैं. तिननेहू रामजीको देखे. जो शरीरते कृश होय रहे हैं. जैसे महादेवजी स्वामिकार्त्तिकको आवत देखे, तैसे रामजीको आवत राजादशरथ देखत हैं. तहां रामजी आयकर राजा दशरथजीके चरणोंपै मस्तक लगाय नमस्कार किया. फिर तैसेई वशिष्ठजीको अरु विश्वामित्रजी

को नमस्कार किया. बहुरि सभामें जो ब्राह्मण वडे वडे बैठे थे, तिनकोहू नमस्कार किये. अरु जो वडे वडे मंडलेश्वर बैठेथे तिनने उठकर रामजीको प्रणाम किया, फिर,

राजा दशरथने रामजीको गोदमें बैठाया अरु देखकर मस्तक चूमा. अरु वहुत प्रेम पुलकित होय रामजीसों कहत भया हे पुत्र ! केवल विरक्तता कर परमपदकी प्राप्ति नहीं होतीहै. अरु वशिष्टजी गुरु हैं, तिनके उपदेशकी युक्ति कर परमपदकी प्राप्ति होयगी.

वशिष्टोवाच, हे रामजी ! तुम धन्यहो, अरु वडे शूरमें हो, जो विषय रूपी शत्रु तुमने जीते हैं जो विषय अजीत है, अरु दुष्ट है ताको तुमने जीता ताते तुम धन्य हो ! धन्य हो ! !

विश्वामित्रोवाच, हे कमलनयन राम ! अपने अंतरकी चपलताहै, तिसको त्याग करके, जो कछु तुम्हारा आशय होय सो प्रगट कर कहो. हे रामजी ! यह जो तुमको मोह प्राप्त हुआहै; सो कैसे अरु किस कारण हुआहै ? अरु केताकहै ? सो कहो. अरु जो अव कछु तुमको वांछित होय सो कहो, हम तुमको तिसीपदमें प्राप्त करैंगे, जिसमें दुःख कदाचित् होवे नहीं. और आकाशको चूहा काटि नहीं सकत है, तैसे तुमको पीडा कदाचित् न होवेगी. हे रामजी ! तुम्हारे संपूर्ण दुःख नाश कर देयँगे; तुम संशय मतकरो. जो कुछ तुम्हारा वृत्तांत होय सो हमसे कहो.

वाल्मीकिउवाच,हे भारद्वाज!जब ऐसे विश्वामित्रने कहा सो सुनकर रामजी बहुत प्रसन्न भये; अरु शोकको त्याग दिया.जैसे मेघको देखके मोर. प्रसन्न होता है; तैसे विश्वामित्रके वचन सुन रामजी प्रसन्न हुए. अरु अपने हृदयमें निश्चय किया अब मुझको उस पदकी प्राप्ति होवेगी.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे रामसमाज वर्णनं नाम षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥

सप्तमः सर्गः ७.

अथ रामेण वैराग्यवर्णनम्.

वाल्मीकिउवाच, हे भारद्वाज! ऐसे मुनीश्वरके वचनको रामजी सुनके बहुत प्रसन्न होयके बोले.

श्रीरामोवाच, हे भगवन्! जो वृत्तांत है सो तुम्हरो विद्यमान क्रम करके कहता हौं, इस राजा दशरथके घरमें जो मैं उत्पन्न भया हों, बहुरि क्रम करक बडा हुआ हों, उपवीतपाया हों अरु चारों वेद पढकर ब्रह्मचर्यादि व्रत पायाहों, तापाछे एक दिन पढके मैं घरमें आया तब मेरे हृदयमें बात आय रही कि तीर्थाटन करों, अरु देवद्वारमें जायके देवनके दर्शन करों; तब मैं पिताकी आज्ञा लेकर तीर्थको गया. अरु गंगा आदि संपूर्ण तीर्थ में स्नान किया; अरु शालिग्राम अरु केदार आदि ठाकुरके विधि संयुक्त दर्शन किये; अरु यात्रा करके इहां आया फिर उत्साह हुआ.

तब मेरेमें विचार आया, कि प्रातःकाल उठके स्नान संध्यादिक कर्म करना, बहुरि भोजन करना, ऐसे इस प्रकारसों केतेकदिन व्यतीत भये, तब मेरे हृदयमें विचार उत्पन्न हुआ सो विचार मेरे हृदयको खैंचलेगया: जैसे नदीके तटपर तृण लता होते हैं, तिसको नदीका प्रवाह खैंच लेजाता है, तैसे मेरे हृदयमें जो कछु जगत्की आस्थारूप तृणलता थी, सो विचाररूपी प्रवाह लेगया. तब मैं जानता भया कि राज्य करके क्या है ? अरु भोगतो क्या है ? अरु जगत् क्या है ? सब भ्रम मात्र है ? इसकी वासना मूर्ख रखते हैं ? यह स्थावर जंगम रूपी जेता कछु जगत् है सो सब मिथ्या है.

हे मुनीश्वर ! जेते कछु पदार्थ हैं, सो मनसों करके हैं सो मनभी भ्रममात्रहै: अनहोता मन दुःखदायी हुआहै: मन जो पदार्थ सत्य जानकर दौरता है, अरु सुखदायक जानता है, सो मृगतृष्णाके जलवत् है. जैसे मृगतृष्णाको देखकर मृग दौरते हैं, अरु है नहीं; सो मृग दौरत दौरत थकके पड़जाता है; तौहू जल तिसको प्राप्त नहीं होता. तैसे मूर्खजीव पदार्थको सुखदायी जानकर भोगनेका यत्न करता है; अरु शांतिको नहीं पाता है. तैसे.

हे मुनीश्वर ! इंद्रियनके भोग सर्पवत् हैं, जिनका मारा हुआ, जन्म मरनको पाता है: जन्मते जन्मांतरको पाता है. भोग अरु जगत् सब भ्रममात्र है. तिन विषे जो अवस्था

करते हैं, सो महामूर्ख हैं ऐसा मैं विचार करके जानताहों; जो सब आगमापाई है. अर्थ यह जो आवतेहूहै, अरु जाते हू हैं. ताते जिस पदार्थका नाश न होय सो पदार्थ पावने योग्य है, इसी कारणसे मैंने भोगका त्याग किया है.

हे मुनीश्वर ! जैसे कछु संपदारूपपदार्थ भासते हैं, सो सब आपदा हैं, इनमें रंचकहू सुख नहीं हैः जब इनका वियोग होता है, तब कंटककी नाईं मनमें चुभता है. जब इंद्रियको भोग प्राप्त होता है, तब राग दोषकर जलता है, अरु जब नहीं प्राप्त होताहै तब तृष्णा कर जलता है. ताते भोग दुःखरूपहै. जैसे पत्थरकी शिलामें छिद्र नहीं होता, तैसे भोगरूपी दुःखकी शिलामें रंचकभी सुखरूपीछिद्र नहीं होता है.

हे मुनीश्वर ! विषयकी तृष्णामें बहुत कालसों जलता रहा हों, जैसे हरे वृक्षके छिद्रमें रंचक अग्नि धरा होय, तब धुवाँ होय थोरा थोरा जलता रहता है; तैसे भोगरूपी अग्निकरके मन जलता रहता है, यह विषयमें सुख कछु हू नहीं, अरु दुःख बहुत है. इनकी इच्छाकरनी सोई मूर्खताहै. जैसे खाईके ऊपर तृण अरु पात होताहै. तिसकर खाई आच्छादित होय जाती है, तिसको देखके हरिण कूद परता है, अरु दुःख पावताहै; तैसे मूर्ख भोगको सुखरूप जानके भोगनेकी इच्छाकरताहै; जब भोगता है तब जन्मते जन्मांतर रूप खाईमें जाय परते हैं अरु दुःख पावते हैं.

हे मुनीश्वर ! भोगरूपी चोर है. सो अज्ञानरूपीरात्रिमें

लूटने लगताहै सो आत्मरूपी धनहै तिसको ले जाता है; तिसके वियोगते महादीन रहताहै. अरु जिस भोगके निमित्त यह यत्न करताहै, सो दुःखरूपहै शांतिको प्राप्त नहीं होता. अरु जिस शरीरके अभिमान करके यह यत्न करताहै, सो शरीर क्षणभंग होताहै, अरु असारहै, जिसको सदा भोगकी इच्छा रहतीहै, सो मूर्ख अरु जडहै, इसको बोलना चालनाभी ऐसाहै; जैसे सूखे बाँसके छिद्रमें पवन जाताहै; अरु पवनके वेगकर शब्द होताहै; तैसे वह मनुष्यकी वासनाहै. जैसे थका हुआ मनुष्य मारवाड़के मार्गकी इच्छा नहीं करता तैसे दुःख जानकर मैं भोगकी इच्छा नहीं करताहूं.

अरु यह जो लक्ष्मी है सो परम अनर्थकारी है. जब लग इसकी प्राप्ति नहीं होती, तब लग तिसके पावनेका यत्न होता है. अरु अनर्थ करके प्राप्ति होती है. अरु जब प्राप्ति हुई तब सब गुणका नाश कर देती है. शीलता, संतोष, धर्म, उदारता, कोमलता, वैराग्य, विचार, दयादिक गुणका नाश करती है. जब ऐसा गुणकानाश हुआ; तब सुख कहांते होय. परम आपदा प्राप्त होती है. परमदुःखका कारण जानकर मैंने इसका त्याग किया है. हे मुनीश्वर! इसमें गुण तब लग है. जब लग लक्ष्मी नहीं प्राप्त भई. जब लक्ष्मीकी प्राप्ति भई तब सब गुण नाश होजाता है. जैसे वसंतऋतुकी मंजरी हरियावल तबलग रहती है, जबलग ज्येष्ठ आषाढ नहीं आया; जब ज्येष्ठ

आषाढ आया, तब मंजरी जर जाती है; तैसे जब लक्ष्मी-की प्राप्ति भई तब सब शुभ गुण जरजाते हैं. अरु मधुर वचन तब लग बोलता है, जब लग लक्ष्मीकी प्राप्ति नहीं होतीहै. जब लक्ष्मीकी प्राप्ति भई कोमलताका अभावहोय कठोर होजाता है. जैसे जल पतला तब लग रहता है जब लग शीतलताका संयोग नहीं होय; जब शीतलताका संयोग होताहै, तब बर्फ होकर कठोर दुःखदायक हो जाता है; तैसे यह जीव लक्ष्मी पाकर जड होजाता है.

हे मुनीश्वर! जो कछु संपदा है सो आपदा का मूल है; काहेते कि जब लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है. तब बडे सुखको भोगता है; अरु जब तिसका अभाव होता है, तब तृष्णा करके जलता है. जन्मते जन्मान्तरको पावता है. लक्ष्मी-की इच्छा है सोई मूर्खता है यह तो क्षणभंग है. याते भोग उपजता है, अरु नाश भी होता है. जैसे जलते तरंग उपजते हैं, अरु मिट जाते हैं अरु बिजुलि स्थिर नहीं होती है, तैसे भोगहू स्थिर नहीं रहते. अरु पुरुषमें शुभ गुण तबलग हैं, जबलग तृष्णाका स्पर्श नहीं किया. जब तृष्णा भई तब शुभ गुणका अभाव हो जाता है. जैसे दूधमें मधुरता तबलग है जबलग उसको सर्प ने स्पर्श नहीं किया; जब सर्प ने स्पर्श किया तब दूधहै सो विषरूप हो जाता है.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे रामेण वैराग्य वर्णनं नाम सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥

अष्टमः सर्गः ८.

अथ लक्ष्मीतिरस्कारवर्णनम्.

श्रीरामोवाच, हे मुनीश्वर ! लक्ष्मी देखने मात्रको ही सुंदर है, अरु जब इस्की प्राप्ति हुई, तब सद्गुणका नाश कर देतीहै. जैसे विषकी लता देखने मात्रको सुंदर है अरु स्पर्श कियेते मार डारती है, तैसे लक्ष्मीकी प्राप्ति हुए आत्मपदते मृतक होता है. अरु महादीन होय जाता है. जैसे किसीके घरमें चिंतामणि दबी रही, ताको खोद-कर लेवे नहीं, तबलग दरिद्री रहता है, तैसे अज्ञान कर ज्ञान बिना महादीन जैसा हो रहता है. आत्मानंदको पाय नहीं सकता. आत्मानंदके पानेका जो मार्ग है, तिसकी नाश करनहारी लक्ष्मी है. इसकी प्राप्तिते जीव महाअंध होय जाता है.

हे मुनीश्वर ! जब दीपक प्रज्वलित होता है, तब उसका बडा प्रकाश दृष्टि आवताहै; जब दीपक बुझ जाताहै, तब प्रकाशका अभाव होय जाता है, अरु काजरकी समक्षता रहजाती है, जो वारंवार वासना उप-जती थी सो रहती है; तैसे जब इस लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है; तब बडे भोग उनको भुगवाती है; अरु तृष्णा रूप काजर उससे उपजता रहताहै. जब लक्ष्मीका अभाव होता है; तब वासना तृष्णाकी समक्षता छांड जाती है

तिस वासना तृष्णा करके अनेक जन्मको पाता है, शांतिको कदाचित् नहीं प्राप्त होता.

हेमुनीश्वर ! जब जिसको लक्ष्मीकी प्राप्ति होतीहै, तब शांतिके उपजावनहारे गुणका नाश करतीहै. जैसे जबलग पवन नहीं चलता, तबलग मेघ रहता है, जब पवन चला कि मेघका अभाव होजाता है, तैसे लक्ष्मीकी प्राप्ति हुए गुणका अभाव होता है, अरु गर्वकी उत्पत्ति होती है.

हे मुनीश्वर ! जो शूरमा होके अपने मुखसे अपनी बडाई न कहै, सो दुर्लभ है. अरु समर्थ होय किसीकी अवज्ञा न करै, सबमें समबुद्धि राखै सो दुर्लभ है. तैसे लक्ष्मीवान् होकर शुभ गुण संयुक्त होय सोभी दुर्लभहै.

हे मुनीश्वर ! तृष्णारूपी जो सर्प है, तिसको बढाने का स्थान लक्ष्मीरूपी दूध है, सो पीवत पवनरूपी भोगका आहार करत कदाचित् अघात नहीं. अरु महा-मोहरूप उन्मत्त हस्ती है, तिसको फिरने का स्थान पर्व-तकी अटवी रूपी लक्ष्मी है. अरु गुण रूप जो सूर्यमुखी कमल है, तिसकी लक्ष्मी रात्रि है, अरु भोगरूपी चंद्रमुखी कमल है तिनका लक्ष्मी चंद्रमा है. अरु वैराग्य रूप जो कमलिनी है; तिसके नाशकरनेहार लक्ष्मी बर्फ है. अरु ज्ञानरूपी जो चंद्रमा है तिनका आच्छादन करनेहारी लक्ष्मी राहु है. अरु मोहरूपी जो उलूक है तिसकी यह रात्रि है. अरु दुःखरूपी जो बिजुरी है तिसको लक्ष्मी आकाश है. अरु तृष्णारूपी जो

लता है, तिसको बढावनहारी लक्ष्मी मेघ है. अरु तृष्णारूप जो तरंग है, तिसकी लक्ष्मी समुद्र है. अरु भोगरूपी पिशाच है; तिसका लक्ष्मी स्थान है. अरु तृष्णारूपी भँवरको; लक्ष्मी कमलिनी है. जन्मके दुःख रूप जलको यह लक्ष्मी ताल है.

हे मुनीश्वर ! देखनेमात्रको यह सुंदर लगती है अरु दुःखका कारण है. जैसे खड्गकी धारा देखने मात्रको सुंदर होती है, अरु परश कियेते नाश करती है, तैसी यह लक्ष्मी है. अरु विचाररूपी मेघका नाश करनेमें लक्ष्मी वायु है.

हे मुनीश्वर ! यह मैंने विचारकर देखाहै, इसमें सुख कछूहू नहीं. अरु संतोषरूपी मेघका नाश करनहारा यह शरत्कालहै. अरु इस मनुष्यमें शुभ गुण तबलग दृष्टि आवै जबलग लक्ष्मीकी प्राप्ति नहीं भई. जब लक्ष्मी की प्राप्ति भई, तब गुण नाश पाते हैं.

हे मुनीश्वर ! लक्ष्मी ऐसी दुःखदायक जानकर इसकी इच्छा मैंने त्यागदीनी है. यह भोग मिथ्यारूपहै. जैसे बिजुरी प्रगट होयँ छिपजाती है. तैसे यह लक्ष्मीहू प्रगट होय छिप जाती है. जैसे जल है सो हिम है, तैसे लक्ष्मीजीकी ज्योति है सो मूर्ख जडके आश्रयते है. इस्को छलरूप जानकर मैंने त्याग किया है.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे लक्ष्मीतिरस्कार वर्णनं नाम अष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

नवमः सर्गः ९.

अथ संसारसुखनिषेधवर्णनम.

रामोवाच, हे मुनीश्वर ! जो वाको देखकर प्रसन्न होता है सो जैसे पत्रके ऊपर जलकी बूँद नहीं रहती है तैसे लक्ष्मी क्षणभंग है. जैसे जलका तरंग होयके नाश पाताहै, तैसे लक्ष्मी होयके नाश पाती है.

हे मुनीश्वर ! पवनको रोकना कठिन है सोभी कोऊ रोकरहै; अरु आकाशका चूरन करना अति कठिन है सो भी कोऊ चूरन करडारै; अरु बिजलीको रोकना अति कठिनहै सोभी कोऊ रोकलेवे; परन्तु लक्ष्मी पायके कोई स्थिर होवे सो नहीं. जैसे शशाके सींग सो कोऊ मार नहीं सकता; अरु आरसीके ऊपर जैसे मोती नहीं ठहरता है. जैसे तरंगकी गांठ नहीं परत है. तैसे लक्ष्मीहू स्थिर नहीं रहती है. लक्ष्मी बिजुलीकी चमक जैसी है, तैसे होतीहू है अरु मिट भी जाती है; अरु लक्ष्मीको पायके आपको अमर हुआ चाहै सो महामूर्ख जानना. अरु लक्ष्मीको पायकर जो भोग की वांछा करत हैं सो महा आपदाका पात्र है, तिनको जीनेते मरना श्रेष्ठ है. जीनेकी आशा मूर्ख करते हैं, सो अपने नाशके निमित्त करते हैं. जैसे स्त्री जो गर्भ-की इच्छा करती है सो अपने नाशके निमित्त करती है.

अरु जो ज्ञानवान् पुरुष हैं, जिनकी परमपदमें स्थिति है, अरु तिसकर तृप्ति पायेहैं, तिनका जीना सुखके निमित्तहै, तिनके जीनेते औरका कार्य्यभी सिद्ध होजाताहै. तिनका जीना चिंतामणिकी नाईं श्रेष्ठ है. अरु जिनको सदा भोगकी इच्छा रहती है और आत्मपदते विमुख हैं, तिनका जीना किसी सुखके निमित्त नहीं है. वह मनुष्य नहीं, गर्द्दभ है. अरु जैसे वृक्ष, पक्षी, पशुका जीवनाहै, तैसे तिसका भी जीवना है.

हे मुनीश्वर ! जो पुरुष शास्त्र पढा है, अरु पाने योग्य पद नहीं पाया. तब शास्त्र उसको भाररूप है, जैसे औरका भार होता है, तैसे पढनेकाभी भारहै. अरु पढके विचार चर्चा करता है और तिसके सारको नहीं ग्रहण करता तो यह विचार चर्चाहू भार है.

हे मुनीश्वर ! मन जो है, सो आकाशरूपहै, सो मनमें जो शांति न आई, तो मनहू उसको भारहै. अरु जो मनुष्य शरीरको पाया है उसका अभिमान नहीं त्यागता है तो यह शरीरभी उसको भारहै. यह शरीरका जीवना तबहीं श्रेष्ठहै, जब आत्मपदको पावे, अन्यथा उसका जीना व्यर्थ है. और आत्मपदकी प्राप्ति अभ्याससे होती है. जैसे जल पृथ्वीके खोदेते निकसता है तैसे अभ्यास कर आत्मपदकी प्राप्ति होती है. अरु जो आत्मपदते विमुखहोय, आशाकी फांसी में फँसे हैं सो संसारमें भटकते रहते हैं.

हे मुनीश्वर ! संसारके तरंग अनेक कालसों उत्पन्न होय नष्टहोय जातेहैं, तैसे यह लक्ष्मीहू क्षणभंगहै, इसको पायके जो अभिमान करते हैं सो मूर्ख हैं.जैसे बिल्ली चूहाको पकड़ा नेके लिये परी रहती है, तैसे लक्ष्मी उनको नरकमें डारनेके लिये घरमें परी रहती है. जैसे अंजलीमें जल नहीं ठहरता, तैसे लक्ष्मी चली जाती है, ऐसी क्षणभंग लक्ष्मी अरु शरीरको पायकर जो भोगकी तृष्णा करते हैं, सो महामूर्ख हैं सो मृत्युके मुखमें परे हुए जीनेकी आशा करते हैं. जैसे सर्पके मुखमें मेढक पडता है; सो मच्छरको खानेकी इच्छा करता है, याते सो महामूर्ख है, तैसे यह पुरुप मृत्युके मुखमें परा हुआ भोगकी वांछा करता है, सो भी महामूर्ख है,

अरु युवा अवस्था नदीके प्रवाहकी नाईं चली जाती है, बहुरि वृद्धावस्था प्राप्त होती है तामें महादुःख प्रगट होते हैं, अरु शरीर जर्जर होय जाता है; फिर मरता है. इक क्षणहू मृत्यु इनको बिसारती नहीं है, सदाई देखता रहताहै. जैसे महाकामी पुरुषको सुंदर स्त्री मिलती है, तब उसको देखनेका त्याग नहीं करता, तैसे मृत्यु मनुष्यको देखे बिना नहीं रहता है.

हे मुनीश्वर ! मूर्ख पुरुषका जीना दुःखके निमित्त है. जैसे वृद्ध मनुष्यका जीवना दुःखका कारणहै, तैसे अज्ञानीका जीवना दुःखका कारण है. उसको बहुत जीवनेते

मरना श्रेष्ठहै. जो पुरुषने मनुष्य शरीर पायकर आत्मपद पानेका यत्न नहीं किया तिनते आपई अपना नाश किया है; सो आत्महत्यारा है.

हे मुनीश्वर ! यह माया बहुत सुंदर भासती है. अरु आखिर नाशको पाती है. जैसे वृक्षको अंतरते घुण खाय जाता है अरु बाहरते बहुत सुंदर दीखता है; तैसे यह पुरुप बाहरते सुंदर दृष्टि आता है, अरु अंतरते इनको तृष्णा खाय जाती है. जो पदार्थको सत्य अरु सुखरूप जानकर सुखके निमित्त आश्रय करता है, सो सुखी नहीं होता है. जैसे नदीमें सर्पको पकरके पार उतरा चाहै, सो पार नहीं उतरता है, वह मूर्खता करके डूबेईगा; तैसे जो संसारके पदार्थको सुखरूप जानकर आश्रय करता है, सो सुख नहीं पाता संसारसमुद्रमेंही डूबजाता है.

हे मुनीश्वर ! यह संसार इंद्रधनुषकी नाईं है. जैसे इंद्र धनुप बहुत रंगका दृष्टिमें आताहै, अरु तिसते अर्थसिद्धि कछु नहीं होती है; तैसे यह संसार भ्रममात्र है. इसमें सुखकी इच्छा रखनी व्यर्थ है. इस प्रकार जगत्को मैंने अस्तरूप जानकर निर्वासना होनेकी इच्छा करी है.

इती श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे संसारसुख निषेधवर्णनं नाम नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

दशमः सर्गः १०.

अथ अहंकारदुराशावर्णनम्.

श्रीरामोवाच, हे मुनीश्वर ! यह जो अहंकार उदय हुआ सो अज्ञानते महादुष्ट है. अरु यही परमशत्रु है. सने मेरेको भार प्राप्त किया है, अरु मिथ्या है. जेते कछु दुःख हैं तिन सबकी खानि अहंकारहै, जबलग अहंकार है तबलग पीडाकी उत्पत्तिका अभाव कदाचित् नहीं होता है.

हे मुनीश्वर ! जो कछु मैंने अहंकारसों भजन किया अरु पुण्य किया है, अरु जो लिया दिया है, और कछु किया है, सो सब व्यर्थ है. इसकर परमार्थकी सिद्धि कछु नहीं है. जैसे राखमें आहुति धरी व्यर्थ होजातीहै तैसे जानत हौं. अरु जेते कछु दुःख हैं तिनका बीज अहंकार है, इसका नाश होवे तब कल्याण होवे. ताते तुम इसका उपाय मुझको कहो, जिसकर अहंकार निवृत्त होवे.

हे मुनीश्वर ! जो वस्तु सत्य है तिसका त्याग करनेमें दुःख होजाताहै. अरु जो वस्तु नाशवान् अरु भ्रमकरके दीखती है, तिसके त्याग करनेते आनंदहै । अरु शांतिरूप जो चन्द्रमाहै तिसको आच्छादन करनेका अहंकाररूपी राहुहै. जब राहुचन्द्रमाका ग्रहण करताहै, तब उसकी शीतलता अरु प्रकाश ढपजाता है. तैसे जब अहंकार उपजताहै तब समता ढप जाती है. जब अहंकाररूपी मेघ

गर्जके बरसता है तब तृष्णारूपी कटकमंजरी बढ जाती है. सो कदाचित् घटत नहीं. जब अहंकारका नाश होवे तब तृष्णाका अभाव होवे. जैसे जबलग मेघहै तबलग विजुरी है. जब विवेकरूपी पवन चलै, तब अहंकाररूपी मेघका अभाव होयके विजुरी नाश पाती है. जैसे जबलग तेल अरु वातीहै, तबलग दीपका प्रकाशहै. जब तेल वातीका नाश होताहै, तब दीपका प्रकाशभी नाश पाताहै. तैसे जब अहंकारका नाश होवे, तब तृष्णाका भी नाश होताहै.

हे मुनीश्वर ! परमदुःखका कारण अहंकारहै. जब अहंकारका नाश होवे, तब दुःखका भी नाश होजाय. हे मुनीश्वर ! यह जो मैं रामहों सो नहीं, अरु इच्छा भी कछु नहीं. काहेते जो मैं नहीं तो इच्छा किसको होवे. अरु इच्छा होइ तो यही होइ जो अहंकारके रहित पदकी प्राप्ति होवे. जैसे जनींद्रको अहंकारका उत्थान नहीं हुआ, तैसा मैं होऊं, ऐसी मुझको इच्छाहै.

हे मुनीश्वर ! जैसे कमलको बर्फ नाश करताहै, तैसे अहंकार ज्ञानका नाश करताहै. जैसे पारधी जालसों पक्षीको बंधन करताहै, तिसपर पक्षी दीन होजाते हैं, तैसे अहंकाररूपी पारधीने तृष्णारूपी जाल डारके जीवको बंधन कियाहै, तिसकर महादीन होगयाहै. जैसे पक्षी अन्नके

कणको सुखरूप जानकर चुगनेको आताहै, फिर चुगते फि-
रते जालमें बँध जाताहै; तिस बंधनकर दीन होजाताहै तैसे
यह पुरुष विषयभोगकी इच्छा कियेते तृष्णारूपी जालमें
बंध होय महादीन होजाताहै. ताते हेमुनीश्वर! मुझको सोई
उपाय कहो जिसकर अहंकारका नाश होवे. जब अहंकार
का नाश होवेगा तब मैं परमसुखी होऊंगा. जैसे विंध्या-
चल पर्वतके आश्रयते उन्मत्त हस्ती पडे गर्जतेहैं. तैसे
अहंकाररूपी जो विंध्याचल पर्वतहै, तिसके आश्रयते
मनरूपी उन्मत्त हस्ती नानाप्रकारके संकल्प विकल्परू-
पी शब्द करताहै, ताते सोई उपाय कहो जिसकर अह-
कारका नाश होवे, सो अहकार अकल्याणका मूलहै. जैसे
मेघका नाश करनहाराशरत्काल है; तैसे वैराग्यका नाश-
करनहारा अहंकारहै. मोहादिक विकाररूप जो सर्प हैं,
तिनको रहनेका अहंकाररूपी बिलहै, अरु अहंकार
कामी पुरुषकी नाईं है. जैसे कामी पुरुष कामको भुगतता
है अरु फूलकी माला गरेमें डारके प्रसन्न होताहै. तैसे तृ-
ष्णारूपी तागा है; अरु मनुष्यरूपी फूलके मनके हैं सो
तृष्णारूपी तागेके साथ पिरोयेहैं सो अहंकाररूपी कामी-
पुरुष गरेमें डारताहै अरु प्रसन्न होताहै.

हे मुनीश्वर! आत्मारूपी सूर्य्य है, तिसका आवरण
करनहारा मेघरूपी अहंकारहै, जब ज्ञानरूपी सूर्य

उदयका काल आवे तब अहंकाररूपी बादरका नाश हो जाताहै. अरु तृष्णारूपी तुषारका भी नाश होवे.

हे मुनीश्वर ! यह निश्चय कर मैंने देखाहै, कि जहां अहंकार है तहां सब आपदा आय प्राप्त होतीहैं.जैसे समुद्रमें सब नदी आयके प्राप्त होती हैं; तैसे अहंकारमें सब आपदाकी प्राप्तिहै. ताते सोई उपाय कहो जिसकर अहंकारका नाश होवे.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे अहंकार दुराशा वर्णनं नाम दशमः सर्गः ॥ १० ॥

एकादशः सर्गः ११.

अथ चित्तदौरात्म्यवर्णनम्.

श्रीरामोवाच, हे मुनीश्वर ! यह जो मेरा चित्त है सो काम, क्रोध, लोभ मोह, तृष्णादिक दुःख कर जर्जरीभाव होगयाहै, अरु महापुरुषके जो गुण वैराग्य, विचार, धैर्य, संतोष, तिनकी ओर नहीं जाता; सर्वदा विषयकी गिरदमें उड़ता है. जैसे मोरका पंख पवनके लागे ठहरता नहीं, तैसे यह चित्त सर्वदा भटकता फिरताहै, अरु इसको लाभ कछु प्राप्त नहीं होता. जैसे श्वान द्वार द्वारपै भटकता फिरता है, तैसे यह चित्त पदार्थके पावने निमित्त भटकता फिरता है, और प्राप्त कछु नहीं होता, अरु जो कछु प्राप्त होताहै तिसकरि तृप्त नहीं होता, अंतर तृष्णा

रही आवत है, जैसे पिटारेमें जल भरिये, तासों वह पूर्ण नहीं होता, क्योंकि छिद्रते जल निकस जाताहै; अरु पिटारा शून्यका शून्यरहता है, तैसे चित्तको भोग पदार्थ प्राप्त होता है, तासों संतुष्ट नहीं होता है, सदा तृष्णाही रहत है

हे मुनीश्वर ! यह चित्तरूपी महामोहका समुद्र है, इसमें तृष्णारूपी तरंग उठतेई रहत हैं; सो कदाचित् स्थिर नहीं होते, जैसे समुद्रमें तीक्ष्ण वेगकर तरंग होता- है सो तटके वृक्षको लागता है, अरु जलमें वहेजाते हैं; तैसे चित्तरूपी समुद्रमें विषय बहिजाते हैं, वासनारूपी तरंगके वेगसों मेरा जो अचल स्वभाव था, सो चलायमान होगया है सो इस चित्तसों मैं महादीन हुआ हूँ. जैसे जालमें परा पक्षी दीन होजाता है तैसे चित्तसे धीवरकी वासनारूपी जालमें बँधा हुआ मैं दीन होगया हूं, जैसे मृगके समूहते भूली मृगी अकेली खेदवान् होती है, तैसे आत्मपदते भूला हुआ चित्तमें खेदवान् हुआ हूँ,

हे मुनीश्वर ! यह चित्त सदा क्षोभवान् रहता है, कदाचित् स्थिर नहीं होता; जैसे क्षीरसमुद्र मंदराचल करके क्षोभवान् हुआ था, तैसे यह चित्त संकल्प विकल्प कर खेद पावत है. जैसे पिंजरेमें आया सिंह पिंजरेमें फिरता हैं, तैसे वासनामें आया चित्त स्थिर नहीं होता.

हे मुनीश्वर! इस चित्तने मेरेको दूरते दूर डारा है, जैसे भारी पवनसों सूखा तृण दूरते दूर जाय पडताहै, तैसे चित्तरूपी पवनने मुझको आत्मानंदते दूर डाराहै. जैसे सूखे तृणको अग्नि जरावतहै, तैसे मोको चित्त जारता है. जैसे अग्निते धूम निकलता है, तैसेचित्तरूपी अग्निते तृष्णा-रूपी धूम निकलता है, तिसकर मैं परमदुःख पावत हों, यह चित्त हंस नहीं बनता है. जैसे राजहंस दूध अरु जल मिलेको भिन्न भिन्न करता है, तिसकीनाई मैं अनात्मामें अज्ञानकरके एकसा होगया हूँ; तिसको भिन्न नहीं कर सकता हूँ. जब आत्मपद पानेका यत्न करता हूँ; तब अज्ञान प्राप्त करने नहीं देता. जैसे नदीका प्रवाह समुद्रमें जाता है. तिसको पहाड सूधे नहीं चलने देता है. अरु समुद्रकी ओर जाने नहीं देता है. तैसे मुझको चित्त आत्माकी ओरते रोकता है; सो परम शत्रुहै. हे मुनीश्वर! ताते सोई उपाय कहो, जिसकर चित्तरूपी शत्रुका नाश होवे.

यह तृष्णा मेरा भोजन करती रहती है; जैसे मृतक शरीरको श्वान अरु श्वाननी भोजन करते हैं; तैसे आत्माके ज्ञानबिन मैं मृतक समान हों. जैसे बालक अपनी परछाहींको बैताल मानकर भयको पाता है. सो जब विचार करके समर्थ होता है, तब बैतालका भय पातानहीं, तैसे चित्तरूपी बैतालने मेरा स्पर्श किया है; तिसकरके मैं भयको पाता हूँ, ताते तुम सोई उपाय कहो; जिससे चित्तरूपी बैताल नष्ट होय जावे।

हे मुनीश्वर ! अज्ञान करके मिथ्या बैताल चित्तमें दृढ होरहा है, तिसके नाश करनेको मैं समर्थ नहीं हो सकता हों. अग्निमें बैठना सो भी मैं सुगम जानता हों. और चलके बडे पर्वतके ऊपर जाना सो भी मैं सुगम मानता हों. अरु बड़े वज्रका चूरन करना यह भी मैं सुगम मानताहों. परन्तु चित्तका जीतना महा कठिन है ऐसा मैं जानता हों. चित्त सदाही चलायमान स्वभाववाला है. जैसे थंभके साथ बांधाहुआ बानर कदाचित् स्थिर होय नहीं बैठता. तैसे चित्त वासनाके मारे स्थिर कदाचित् नहीं होता है. हे मुनीश्वर ! बडा समुद्रका पान करजाना सुगम है, अरु अग्निका भक्षण करनाभी सुगम है, और सुमेरुका उल्लंघन करना सो भी सुगम है, परन्तु चित्तको जीतना महा कठिन है, जो सदा चलरूप है. जैसे समुद्र अपने द्रवस्वभावको कदाचित् नहीं त्यागकरता, अरु महाद्रवीभूत रहता है, तिसकर नानाप्रकारके तरंग होते हैं, तैसे चित्तभी चंचलस्वभावको कभी नहीं त्यागता है. नानाप्रकारकी वासना उपजती रहती हैं. अरु बालककी नाईं चंचलहै, सदा विषयकी ओर धावताहै, कहूं पदार्थकी प्राप्ति होती है; परन्तु अंतरते सदा चंचल रहता है. जैसे सुर्यके उदय हुए ते दिन होताहै, अरु अस्त हुएते नाश पाताहै, तैसे चित्तके उदयहुए त्रिलोकीकी उत्पत्तिहै, अरु चित्तके लीन हुएते लीन होजाती हैं.

हे मुनीश्वर! किसी समुद्रमें जल गंभीर है, तिसमें बडे सर्प रहते हैं, सो जब कोऊ समुद्रमें प्रवेश करै, तब वह सर्प उनको काटताहै, तिनको विप चढ जाताहै, तिसकरके वडादुःख पाताहै. सो दृष्टांत सुनिये—चित्तरूपी समुद्रहै अरु वासनारूपी जलहै; तिसमें छलरूपी सर्प है, जब जीव उसके निकट जाताहै, तव भोगरूपी सर्प उसको काटताहै, तव तृष्णारूपी विप पसरताहै, तिसकर मरते हैं.

हे मुनीश्वर! जो भोगको सुखरूप जानकर चित्त दौडताहै, सो भोग दुःखरूपहै, जैसे तृणसों खाई आच्छादित होय जातीहै. तिसको देखकर मूर्ख मृग खानेको दौरता है, तव खाईमें गिर पडताहै, अरु दुःख पाताहै तैसे चित्तरूपी मृग भोगका सुख जानकर भोगनेको लगताहै, तव तृष्णारूपी खाईमें गिर पडताहै अरु जन्मान्तर दुःखको भोगताहै.

हे मुनीश्वर! यह चित्त कबहूं बडा गंभीरहो वैठताहै, और जव भोगको देखताहै तब तिनकी ओर चीलहकी नाईं लगि गिर पडताहै. जैसे गीदड पक्षी आकाशमें चढा फिरताहै, सो जव पृथ्वीपर मांसको देखताहै तब तहांते आय पृथ्वीपर वैठताहै, अरु मांसको लेताहै. तैसे यह चित्त कभी निराला उडताहै, जब विपय देखे तब आसक्ति पाय विषयमें गिर जाताहै, अरु यह चित्त वासनारूपी शय्यामें सोता रहताहै, अरु आत्मपदमें जागता नहीं. इस चित्तकी जालमें मैं पकराया हौं सो कैसा जाल है तामें वासनारूपी सूत्रहै, अरु संसारकी सत्यतारूपी ग्रंथि है; अरु भोगरूपी तिसमें चूनहै. इसको देखके मैं फँसाहौं, कबहूं पातालमें, कबहूं आकाशमें,

वासनारूपी जेवरीकर घटी यंत्रकी नाईं बँधाहौं, तातें हे मुनीश्वर ! तुम सोई उपाय कहो जिसकर चित्तरूपी शत्रुको जीतों.

अब मुझको किसी भोगकी इच्छा नहीं, अरु जगत्की लक्ष्मी मुझको विरस भासतीहै, जैसे चंद्रमा बादरकी इच्छा नहीं करता, अरु चतुर्मासमें आच्छादित होय जाताहै, तातें मैं भोगकी इच्छा नहीं करता और जगत्की लक्ष्मीको मैं नहीं चाहता, अरु मेरा चित्तहै सो परमशत्रुहै.

हे मुनीश्वर ! महापुरुष जो जीतनेका यत्न करतेहैं, सो जब चित्तको जीतें तब परमपदको पावें, तातें मुझको सोई उपाय कहो जिसकर मनको जीतों, सब दुःख इसके आश्रयतें रहतेहैं, जैसे पर्वतपर वनह सो पर्वतके आश्रयतें रहताहै.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे चित्तदौरात्म्यवर्णनं नाम एकादशः सर्गः ॥ ११ ॥

द्वादशः सर्गः १२.

अथ तृष्णागारुडीवर्णनम्.

श्रीरामोवाच, हे ब्रह्मन् ! चैतन्यरूपी आकाशमें जो तृष्णारूपी रात्रि आई है तामें काम, क्रोध, लोभ, मोहादिक घुबड विचरतेहैं; जब ज्ञानरूप सूर्य उदय होवै तब तृष्णारूपी रात्रिका अभाव होयजावे. जब रात्रि नष्ट भई, तब मोहादिक उलूकभी नष्ट होजाते हैं. जब

सूर्यका उदय होताहै, तब बर्फ उष्ण होय पिघल जाताहै तैसे संतोषरूपी रसको तृष्णारूपी उष्णता सुखातीहै. बहुरि तृष्णा कैसीहै जैसे शून्यवनमें पिशाचनी अपने परिवारसहित फिरती रहती है, अरु प्रसन्न होतीहै सो वन अरु पिशाच कैसाहै, आत्मपदते शून्य जो चित्त सो भयानक शून्य वनहै तिसमें तृष्णारूपी पिशाचनी है. अरु मोहादिक उसका परिवार है, उनको साथ लेकर फिरती है.

हे मुनीश्वर ! चित्तरूपी पर्वतहै; तिसके आश्रयते तृष्णारूपी नदीका प्रवाह चलताहै अरु नानाप्रकारके संकल्परूपी तरंगको पसारतेहैं जैसे मेघको देखकर मोर प्रसन्न होताहै; तैसे तृष्णारूपी मोर भोगरूपी मेघको देखके प्रसन्न होताहै, ताते परमदुःखका मूल तृष्णाहै. जब मैं किसी संतोषादि गुणका आश्रय करता हों तब तृष्णा तिसको नाश करदेतीहै. जैसे सुंदर सारंगीको चूहा तोरडारताहै; तैसे संतोषादि गुणको तृष्णा नाश करतीहै.

हे मुनीश्वर ! सबते उत्कृष्ट पदमें विराजनेका मैं यत्न करता हों. तब तृष्णा विराजने नहीं देती. जैसे जालमें फँसाहुआ पक्षी आकाशमें उडनेका यत्न करता है. परंतु उड नहीं सकता है. तैसे मैं अनात्मपदमेंते आत्मपदको प्राप्त नहीं हो सकता. स्त्री, पुत्र, अरु कुटुंबने जाल बिछाया है. तामें फँसा हों सो निकस नहीं सकता;

सो आशारूपी फाँसीमें बँधा हुआ, कबहूं ऊर्ध्वको जाता हों, कबहूं अधःपात होता हों, सो घटीयंत्रकी नाईं मेरी गति है. जैसे इंद्रका धनुष मेघमें मलीन होता है. सो बडा अरु बहुत रंगसों भरा है, परंतु मध्यते शून्य है. तैसे तृष्णा मलिन अंतःकरणमें होती है सो बडी है. अरु गुण रूपी रंगते रँगी है. देखने मात्रको सुंदर है; परंतु इससे कार्य्य सिद्धि कछु नहीं होती.

हे मुनीश्वर ! तृष्णा रूपी मेघ है; तिससे दुःखरूपी बुंद निकसते हैं. अरु तृष्णारूपी काली नागनी है; उसका स्पर्श तो कोमल है, परंतु विष करके पूर्ण है; तिसके डसेते मृतक होजाता है, अरु तृष्णारूपी बादर है सो आत्म-रूपी सूर्यके आगे आवरण करताहै जब ज्ञानरूपीपवन निकसै तब तृष्णारूपीबादरका नाश होवे; अरु आत्मप-दका साक्षात्कार होवे, अरु अज्ञानरूपी कमलको संकोच करनहारी तृष्णारूपी निशा है, अरु तृष्णारूपी महा भ-यानक कालीरात्रिहै. जिसकर बडे धीरजवान भी भय-भीत हैं, अरु नयनवालेको भी अंध कर डारती है, जब यह आवती है, तब वैराग्य अरु अभ्यासरूपी नेत्रको अंध कर डारती है, अर्थ यह जो सत्य असत्यको विचा-रने नहीं देती.

हे मुनीश्वर ! तृष्णारूपी डाकनी है, सो संतोषादिक पुत्रोंको मार डारती है, अरु तृष्णारूपी कंदरा है तिसमें

मोहरूपी उन्मत्त हस्ती गर्जते हैं अरु तृष्णारूपी समुद्र है, तिसमें आपदा रूपी नदी आय प्रवेश करतीहै ताते सोई उपाय मुझको कहो, जिसकर तृष्णारूपी दुःखते छूटौं॥

हे मुनीश्वर ! अग्निसों भी ऐसा दुःख नहीं होता अरु इंद्रके वज्रकर भी ऐसा दुःख नहीं होता, जैसे दुःख तृष्णाकर होता है. सो तृष्णाके प्रहारसों घायल बडे दुःखको पाता है, अरु तृष्णारूपी दीपकमें परा जरता है, तिसमें संतोषादिक पतंगिये जर जाते हैं. जैसे जलमें मछली रहतीहै. सो जलमें कंकरी, रेती आदि वैसेको देख, मांसजानकर वह मुखमें लेती है; ताते उसका अर्थ सिद्धि कछु नहीं होता तैसे तृष्णा भी जो कछु पदार्थ देखती है, तिसके पास उडती है, अरु तृप्ति किसी कर नहीं होती,अरु तृष्णारूपी एक पंखनीहै, सो सब कहूं उडजाती है, अरु स्थिर कबहूं नहीं होती, तैसे तृष्णाभी कबहूं किसी पदार्थको, कबहूं किसीको ग्रहण करतीहै, परंतु स्थिर कबहूं नहीं होती, अरु तृष्णारूपी वानर है, सो कबहूं किसी वृक्षपर, कबहूं किसीके ऊपर जाता है, स्थिर कबहूं नहीं होता है. जो पदार्थ नहीं प्राप्त होता तिसके निमित्त यत्न करता है, तैसे तृष्णाहूं नाना प्रकारके पदार्थका ग्रहण करती है. अरु भोगकर तृप्त कदाचित् नहीं होती. जैसे घृतकी आहुतिकर अग्नि तृप्ति नहीं पावे, तैसे जो पदार्थ प्राप्ति योग्य नहीं है तिसके और भी तृष्णा दौरती है, शांतिको नहीं पाती है.

हे मुनीश्वर ! तृष्णारूपी उन्मत्त नदी है तिसमें जो बहाया पुरुष, ताको कहांका कहां लेजाती है, कबहूं तो पहारकी बाजूमें लेजाय. कबहूं दिशामें लेजाय, परन्तु इनको ले फिरती है, तैसे तृष्णारूपी नदी है, सो मुझको ले फिरती है, अरु तृष्णारूपीनदी है. इसमें वासनारूपी अनेक तरंग उठते हैं, कदाचित् मिटतेनहीं हैं अरु तृष्णारूपी नटनी है, अरु जगत्‌रूपी अखाडा तिसने लगाया है, तिसको शिर ऊंचा कर देखती है, अरु मूर्ख बडे प्रसन्न होते हैं, जैसे सूर्यके उदय हुए सूर्यमुखी कमल खिलके ऊंचा आताहै; तैसे मूर्ख तृष्णाको देखकर प्रसन्न होतेहैं, तृष्णारूपी वृद्ध स्त्री है; जो पुरुष इसका त्याग करताहै, तब वाके पाछे लगी फिरतीहै, कबहूं इसका त्याग नहीं करती, अरु तृष्णारूपी डोरहै, तिसके साथ जीवरूपी पशु वांधे हुएहैं; तिसकर भ्रमते फिरतेहैं अरु तृष्णा दुष्टनी है; जब शुभ गुणको देखे, तब तिनको मार डारतीहै, तिसके संयोगते मैं दीन होजाता हूँ, जैसे पपैया मेघको देखकर प्रसन्न होता है अरु बूंद ग्रहण करने लगता है; और मेघको जब पवन ले जाता है, तब पपैया दीन होजाता है, तैसे तृष्णा शुभगुणका नाश करती है तब मैं दीन हो जाता हों.

हे मुनीश्वर ! तृष्णाने मुझको दूरते दूर डारा है जैसे सूखे तृणको पवन दूरते दूर डारताहै; तैसे तृष्णा

रूपी पवनने मुझको दूरते दूर डारा है, आत्मपदते दूर पराहौं हे मुनीश्वर ! जैसे भौंरा कमलके ऊपर जाता है; कबहूं नीचे बैठता है, कबहूं आसपास फिरता है; अरु स्थिर नहीं होता; तैसे तृष्णारूपी भौंरा संसाररूपी कमलके नीचे ऊपर फिरता है, कदाचित् ठहरता नहीं है जैसे मोतीका बांस होता है, तिसते अनेक मोती निकसते हैं, तैसे तृष्णारूपी बांसते जगत्‌रूपी अनेक मोती निकसते हैं, तिसपर लोभीका मन पूर्ण नहीं होता है, तैसे तृष्णाते मन पूर्ण नहीं होता, दुःखरूपी रत्नका तृष्णारूपी डब्बा है, तिसमें अनेक दुःख रहते हैं ताते सोई उपाय कहो, जिसकर तृष्णा निवृत्त होवे.

यह तृष्णा वैराग्यसों निवृत्ति पाती है, और किसी उपायकर निवृत्ति नहीं होती है, जैसे अंधकारका नाश प्रकाश कर होता है; और किसी उपाय कर नहीं होता तैसे तृष्णाका नाश और उपायसों नहीं है, अरु तृष्णारूपी जल है, सो गुणरूपी पृथ्वीको खोद डारता है, अरु तृष्णारूपी लताहै, सो गुणरूपी रसको पीती है, अरु तृष्णारूपी धूर है, सो अंतः करणरूपी जलमें उछ-लके मलीन करती है.

हे मुनीश्वर ! तृष्णारूपी नदी है. सो वर्षाकालमें बढती है, फिर घटजाती है. तैसे जब इष्ट भोगरूपी जल प्राप्त

होताहै, तब हर्षकर बढ़ती है, जब भोगरूपी जल घट जाता है. तब सूखके क्षीण होजाती है हे मुनीश्वर ! इस तृष्णाने मुझको दीन किया है, जैसे सूखे तृणको पवन उडाता है; तैसे मुझको उडाती है ताते सोई उपाय तुम कहो. जिसकर तृष्णाका नाश होवे. अरु आत्मपदकी प्राप्ति होवे, अरु दुःख नष्ट होवे, अरु आनंद, होवे.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे तृष्णागारुडीवर्णनं नाम द्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥

त्रयोदशः सर्गः १३.

अथ देहनैराश्यवर्णनम्.

श्रीरामोवाच, हे मुनीश्वर ! यह जो अमंगलरूप शरीर जगत्में उत्पत्ति पाया है, सो बडा अभाग्यरूप है सदा विकारवान्, मांसमज्जा कर पूर्ण है; सदा अपवित्र है, इन करके मैं कछु अर्थ सिद्धि होना नहीं देखता, ताते तिन विकाररूप शरीरकी इच्छा मैं नहीं रखता.

यह शरीर न अज्ञ है, न तज्ञ है, अर्थ यह जो न जड है न चैतन्य है, जैसे अग्निके संयोग कर लोहा अग्निवत् होता है; सो जलाता भी है; परन्तु आप नहीं जलता, तैसे यह देह न जड है; न चैतन्य है, जड़ इस कारणते नहीं कि, इसते कार्य भी होताहै, अरु चैतन्य इस कारणते

नहीं कि इसको आपते ज्ञान कछु नहीं होता; ताते मध्यमभावमें है काहेते जो चैतन्य आत्मा इसमें व्याप रहा है, सो लोह अग्निकी नाईं जानत हों, अरु आपते अपवित्ररूप अस्थि, मांस, रुधिर, मूत्र, विष्ठा करि पूर्ण अरु विकारवान्, ऐसी जो देह है सो दुःखका स्थान है, अरु इष्टके पायेते हर्षवान् होती है, अरु अनिष्टके पाये ते शोकवान् होती है, ताते ऐसे शरीरकी मुझको इच्छा नहीं. यह अज्ञान कर उपजताहै.

हे मुनीश्वर! ऐसे अमंगलरूपी शरीरमें जो अहंपना फुरता है, सो दुःखका कारण है, यह संसारमें स्थित होकर नाना प्रकारके शब्द करता है अरु तूष्णीं कबहूं नहीं धारता है, अरु अहंकाररूपी बिलाडा देहमें रहा हुआ; अहं, अहं, करता है, चुप कदाचित् नहीं रहता है, हे मुनीश्वर! जो किसीके निमित्त शब्द होवें सो सुंदर है; अन्यथा शब्द व्यर्थ है. जैसे जयके निमित्त ढोलका शब्द सुन्दर होता है; तैसे अहंकारते रहित जो पद है; सो शोभनीकहै; और सब व्यर्थ है.

अरु शरीररूपी नौका भोगरूपी रेतीमें परीहै इसको पार होना कठिन है. जब वैराग्यरूपी जल बढै अरु प्रवाह होवे; अरु अभ्यासरूपी पतवारीका बल होवे तब संसारके पाररूपी किनारेपै पहुँचै. अरु शरीररूपी बेडाहै, अरु संसाररूपी समुद्र और तृष्णारूपी जलमें

पराहै, अरु बडा प्रवाहहै. अरु भोगरूपी तिसमें मगरहै, सो शरीररूपी बेडाको पार लगने नहीं देता. जब शरीररूपी बेडाके साथ वैराग्यरूपी वायु लगै, अरु अभ्यासरूपी पतवारीका बललगै, तब शरीररूपी बेडा पारको पावे, हे मुनीश्वर ! जिस पुरुषने ऐसे बेडेको उपायकर आपको संसारसमुद्रते पार कियाहै, सो सुखी भया है, अरु जिसने नहीं किया, सो परम आपदाको प्राप्त होताहै. सो इस बेड़कर उलटे डुबेइंगे जैसे बेडेमें छिद्र होवे, और वामें जल प्रवेश कर आवे. तब वह डूब जाताहै, अरु तिसमें जो मच्छहै, सो खायजाताहै, सो इहां, शरीररूपी बेडेका तृष्णारूपी छिद्रहै, तिस करके इहां संसार समुद्रमें डूब जाताहै अरु भोगरूपी मगर इसको खाताहै. अरु यह आश्चर्यहै कि, बेडा अपने निकट नहीं भासता है, अरु मनुष्य सो मूर्खता करके आपको बेडा मानता है, अरु तृष्णारूपी छिद्र करके दुःखपाताहै.

अरु शरीररूपी वृक्षहै, तामें भुजारूपी शाखा है अरु अंगुरी इसके पत्र हैं, अरु जंघा इसका स्तंभहैं, अरु वासना इसकी जडहै अरु सुख दुःख इसके फूलहैं, अरु तृष्णारूपी घुनहै, सो शरीररूपी वृक्षको खाता रहताहै जब इसको श्वेत फूल लगे, तब नाशका समय पाताहै कारण जो मृत्युके निकटवर्त्ती होता है. बहुरि शरीर रूपी इसके टास हैं, अरु गिटे इसका गुंछा है अरु दाँत फूल हैं

जंघा स्तंभ हैं, अरु कर्म जलकर बढजाता है, जैसे वृक्षते जल निकसता है, सो चिकटा है तैसे जल शरीरके द्वारा- निकसता रहता है. अरु तृष्णारूपी विषते पूर्ण सर्पिनी रहती है. अरु जो कामनाके लिये इस वृक्षका आश्रय लेताहै, तब तृष्णारूपी सर्पिनी तिसको डसती है. तिस विषसों वह मारि जाताहै हे मुनीश्वर! ऐसा जो अमंग- लरूपी शरीर वृक्षहै, तिसकी इच्छा मुझको नहीं है यह परम दुःखका कारणहै.

जब लग यह पुरुष अपने परिवारमें बँधाहुआहै तबलग मुक्ति नहीं होती; जब परिवारका त्याग करै तब मुक्ति होवे. देह, इंद्रिय, प्राण, मन, बुद्धि; इसका परिवार है इनमें जो अहंभावहै, वाका त्यागकरै तब मुक्तिहोवे अन्यथा मुक्ति नहा होती:

हे मुनीश्वर ! जो श्रेष्ठ पुरुषहैं, सो पवित्रही स्थानमें रहते हैं; अपवित्रमें नहीं रहते. सो अपवित्र स्थान यह देहहै; इसमें रहनेवाला भी अपवित्रहै, अरु अस्थिरूपी इस घरमें लकडे हैं; रुधिर, मूत्र, विष्ठाका इसमें कीच लगायाहै; और मांसकी कहगील करीहै अरु अहंकार- रूपी इसमें श्वपच रहताहै अरु तृष्णारूपी श्वपचनी इस- की स्त्रीहै, अरु काम, क्रोध, मोह, लोभ,इसके बेटे हैं. आंत अरु विष्ठादिककरि पूर्ण भराहुआ है ऐसा जो अपवित्र स्थान अमंगलरूप जो शरीर तिसका मैं अंगीकार नहीं

करता. यह शरीर रहो चाहे मत रहो. इसके साथ मेरा अब कछु प्रयोजन नहीं.

हे मुनीश्वर ! एक बडा घरहै, तिसमें बडे पशु रहतेहैं; सो धूरको उडावतेहैं, सो गृहमें कोऊ जाताहै तब सींगसों मारने लगते हैं अरु धूडभी उसके ऊपर गिरती है. सो शरीररूपी बडा गृहहै, तिसमें इंद्रियरूपी पशुहै, जब इस गृहमें पैठताहै, तब बडी आपदाको प्राप्त होताहै; तात्पर्य यह जो इसमें अहंभाव करताहै, तब इंद्रियरूपी पशु सो विषयरूप सींगसो मारते हैं अरु तृष्णारूपी धूड इसको मलीन करतीहै हे मुनीश्वर ! ऐसे शरीरको मैं अंगीकार नहीं करता.

जिसमें सदा कलह पडेही रहते हैं; तिसमें ज्ञानरूपी संपदा प्रवेश नहीं होती. ऐसा जो शरीर रूपी गृह है, तिसमें तृष्णारूपी चंडी स्त्री रहती है. सो इंद्रियरूपी द्वारसों देखती रहती है, सो सदा कल्पना करती रहती है; तिसकर शमदमादिरूप संपदाका प्रवेश नहीं होता. तिस घरमें एक शय्या है, जब उसके ऊपर विश्राम करता है, तब कछुक सुख पाता है; परंतु तृष्णाका जो परिवार है सो विश्राम करने नहीं देता. सो सुषुप्तिरूपी शय्या है; जब उसमें विश्राम करता है, तब काम क्रोधादिक ऊंदन करते हैं. अरु ए चंडी स्त्रीका जो परिवार, काम, क्रोध, लोभ, मोह, इच्छा है सो उठाय देते हैं; विश्राम करने नहीं देते.

हे मुनीश्वर ! ऐसा दुःखका मूल जो शरीर रूपी गृह है, तिसकी इच्छा मैंने त्याग दीनी है. यह परमदुःख देनेहाराहै, इसकी इच्छा मुझको नहीं है.

हे मुनीश्वर ! शरीररूपी वृक्ष है; तिसमें तृष्णारूपी कौवानी आय स्थित भई है. सो जैसे कौवानी नीच पदार्थ के पास उडती है तैसे तृष्णारूपी कौवानी भोगरूपी मलिन पदार्थके पास उड़ती है. बहुरि तृष्णा बंदरीकी नाई शरीररूपी वृक्षको हिलाती है वृक्षको स्थिर होने नहीं देती अरु जैसे उन्मत्त हस्ती कीचमें फँस जाता हैं, अरु निकस नहीं सकता, अरु खेदवान होता है, तैसे अज्ञान रूपी मद कर उन्मत्त हुआ जीव शरीररूपी कीचमें फँसा हैं, सो निकस नहीं सकता हैं, पराया दुःख पावता है. ऐसे दुःख पावनेवारा शरीर हैं, तिसका मैं अंगीकार नहीं करता.

हे मुनीश्वर ! यह शरीर अस्थि, मांस, रुधिर करि पूर्ण है, सो अपवित्र है. जैसे हस्तीके कान सदाही हिलते हैं, तैसे इसको मृत्यु परा हिलाता. कछु कालका विलंब हैं, परंतु मृत्यु इसका ग्रास कर लेवेगा. ताते मैं इस शरीरका, अंगीकार नहीं करता हों.

यह शरीर कृतघ्न है, भोग भुगतता है, बडे ऐश्वर्यको प्राप्त करताहै, परंतु मृत्यु इसकी सखापन नहीं करताहैं. जब जीव इसको छाड कर परलोकको जाता है, तब अके-

लाही जाता है, और शरीरको छोड देता हैं, जीव इसके सुख निमित्त अनेक यत्न करताहै, परंतु संगमें सदा नहीं रहता. ऐसा जो कृतघ्न शरीर है इसका मैंने मनसों त्याग किया है; जो यह दुःख देनेहाराहै.

हे मुनीश्वर ! और आश्चर्य देखो,—जो वाईका भोग करता है, तिसके साथ चलता नहीं, जैसे धर कर मार्ग भासनेते रह जाता है, तैसे यह जीव जब चलने लगता है तब शरीरके साथ क्षोभवान होता अरु वासनारूप धूर संयुक्त चलता है; परंतु दीखता नहीं कि, कहां गया. जब परलोकको जाता है, तब बड़ा कष्ट होता है; काहेते कि, शरीरके साथ स्पर्श किया है.

हे मुनीश्वर ! यह शरीर क्षणभंगुर है. जैसे जलकी बूंद पत्रके ऊपर गिरती है, सो क्षणमात्र रहती है; तैसे शरीर भी क्षणभंगहै, ऐसे शरीरमें आस्था करनी सो मूर्खता है; अरु ऐसे शरीरके ऊपर उपकार करना भी दुःखके निमित्त है, सुख कछु नहा है. और जो धनाढ्य शरीरसों बडे भोग भुगतते हैं अरु निर्धन थोडे भोग भुगतते हैं; परंतु जरावस्था अरु मृत्यु दोनोंको होते हैं. इसमें विशेषता कछु नहीं. शरीरका उपकार करना और भोग भुगतना, सो तृष्णा करके उलटा, दुःखका कारण है जैसे कोऊ नागिनी घरमें रखके उसको दूध प्यावे, सोई आखिर उसको काटके मारैगी, तैसे जीवने तृष्णारूपी नागिनीके साथ सखाई

करी है, सो मरैगा, क्योंकि नाशवन्त है. इसके निमित्त जो भोग भुगतनेका यत्न करना सो मूर्खता है. जैसे पवनका वेग आता है, अरु जाता है, तैसे यह शरीर नाशवंत है, इससों प्रीति करनी, सो दुःखका कारण है सब जीव इसकी अवस्थामें बाँधे हुए हैं, इसका त्याग कोई बिरलानेही किया है, जैसे कोई बिरला मृग होता है, सो मरुथलके जलकी आस्था त्यागता है और सब परे भ्रमते हैं,

हे मुनीश्वर ! विजलीका अरु दीपकका प्रकाश भी आता जाता दीखता है, परन्तु इस शरीरका आदि अन्त नहीं दिखता है कि, कहां ते आता है, अरु कहां जाता है. जैसे समुद्रमें बुद्बुद उपजते हैं, अरु मिटजाते हैं, तिसकी आस्था करनेते कछु लाभ नहीं, तैसे यह शरीरकी आस्था करनी योग्य नहीं. यह अत्यन्त नाशरूप है, स्थिर कदाचित् नहीं होता है. जैसे बिजुरी स्थिर नहीं होती तैसे शरीर भी स्थिर नहीं रहता, इसकी मैं आस्था नहीं करता इस का अभिमान मैंने त्यागा है, जैसे कोई सूखे तृणको त्याग देता है, तैसे मैंने अहंममता त्यागी है.

हे मुनीश्वर ! ऐसे शरीरको पुष्ट करना, सो दुःखके निमित्त है यह शरीर किसी अर्थ आवने योग्य नहीं जलावने योग्य है. जैसे लकडी जलाये विना और काममें नहीं आती है, तैसे यह शरीर भी जड अरु गुंगा जलावनेके अर्थ

है. हे मुनीश्वर ! जिन पुरुषोंने काष्ठरूपी शरीरको ज्ञानाग्नि कर जलाया है, तिनका परम अर्थ सिद्ध भया है. अरु जिनने नहीं जलाया, सो परम दुःख पाया है.

हे मुनीश्वर ! न मैं शरीर हों, न मेरा शरीर है, न इसका मैं हों, न यह मेरा है, अब मुझको कामना कोई नहीं है, मैं निराशी पुरुष हों. अरु शरीरके साथ मुझको प्रयोजन कछु नहीं है. ताते तुम सोई उपाय कहो जिसकर मैं परमपदकी प्राप्ति पाऊं.

हे मुनीश्वर ! जिस पुरुषने शरीरका अभिमान त्यागा है, सो परमानंद रूप है; और जिसको देहका अभिमान है, सो परमदुःखी है. जेते कछु दुःख हैं सो शरीरके संयोग करि होते हैं मान, अपमान, जरा, मृत्यु, दंभ, भ्रांति, मोह, शोक, आदि सर्व विकार देहके संयोग कर होते हैं. जिसको देहमें अभिमान है तिसको धिक्कार है. और सब आपदा भी तिसको प्राप्त होती हैं. जैसे समुद्रमें नदी आयकर प्रवेश करती है, तैसे देहाभिमानमें सर्व आपदा आय प्रवेश करती हैं. जिसको देहका अभिमान नहीं, सो पुरुषोंमें उत्तम है, अरु वंदना करने योग्य है, ऐसेको मेरा नमस्कार है, अरु सर्व संपदा भी तिसको प्राप्त होती हैं. जैसे मान सरोवरमें सब हंस आय रहते हैं. तैसे जहां देहाभिमान नहीं रहा, तहां सर्व संपदा आय रहती हैं.

हे मुनीश्वर! जैसे अपनी छायामें बालक वैताल कल्पता है, अरु तिसकर भय पाताहै, जब इसको विचारकी प्राप्ति होती है, तब वैतालका अभाव होजाता है. तैसे अज्ञानकर मुझको अहंकाररूपी पिशाचने शरीरमें दृढ आस्था बताई है, ताते सोई उपाय कहो, जिस कर अहंकाररूपी पिशाचका नाश होवे अरु आस्था रूपी फांसी टूटे.

हे मुनीश्वर! प्रथम जो मुझको अज्ञानकर संयोग था सो अहंकाररूपी पिशाचका था; तिससे अनंतर शरीरमें आस्था उपजीहै. जैसे बीजते प्रथम अंकुर होताहै; फिर अंकुरते वृक्ष होताहै. तैसे अहंकारसे शरीरकी आस्था होतीहै. हे मुनीश्वर! इस अहंकाररूपी पिशाचने सब जीवनको दीन किये हैं. जैसे बालकको छायामें वैताल भासताहै अरु दीनताको प्राप्त होताहै. तैसे अहंकाररूपी पिशाचने मुझको दीन किया है सो अहंकाररूपी पिशाच अविचारते सिद्ध है, अरु विचार कियेते अभावको प्राप्त होताहै जैसे प्रकाशकर अंधकार नाश होजाताहै, तैसे विचार कियेते अहंकारनाश होजाताहै.

हे मुनीश्वर! जो शरीरमें आस्था रक्खी है; सो शरीर जलके प्रवाहकी नाईं स्थिर नहीं होता, ऐसा चलहै. जैसे बिजुरीकी चमक स्थिर नहीं होती, अरु गंधर्वनगरकी आस्था व्यर्थ है, तैसे शरीरकी आस्था करनी व्यर्थ है,

हेमुनीश्वर ! ऐसे शरीरकी आस्था करके अहंकार करते हैं, अरु जगत्के पदार्थ निमित्त यत्न करते हैं. वे महामूर्ख हैं. जैसे स्वप्न मिथ्या है, तैसे यह जगत् मिथ्याहै. तिसको सत्य जानकर जो इसका यत्न करता है सो अपने बंधनके निमित्त करताहै. जैसे घुरान गुफा वनाती है, सो अपने बंधनके निमित्तहै, अरु पतंग दीपक की इच्छा करताहै सो अपने नाशके निमित्त है तैसे अज्ञानी जो अपने देहका अभिमानंकर भोगकी इच्छा करताहै; सो अपने नाशके निमित्तहै.

हेमुनीश्वर ! मैंतो इस शरीरका अंगीकार नहीं करता इस शरीरका अभिमान परमदुःख देनेहाराहै. जिसको देह अभिमान नहीं रहा. तिसको भोगकी इच्छा भी न रहैगी. ताते मैं निराशहों, अरु परमपदकी इच्छाहै; जिसके पायेते बहुरि संसार समुद्रकी प्राप्ति न होवे.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे देहनैराश्य वर्णनं नाम त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥

चतुर्दश सर्गः १४.

अथ बालावस्था वर्णनम्.

रामोवाच, हे मुनीश्वर ! इस संसारसमुद्रमें जो जन्म पायाहै, तामें बालक अवस्था इसको प्राप्त भई है, सोभी परमदुःखका मूलहै, तिसमें परमदीन होजाताहै, अरु जेते अवगुण इसमें आय प्रवेश करते हैं, सो कहताहों अशक्तता

मूर्खता, इच्छा, चपलता, दीनता अरु दुःख, संताप एते विकार इसको आय प्राप्त होतेहैं. यह बालावस्था महा विकारवान्है, अरु बालक पदार्थकी ओर धावता है, एक वस्तुका ग्रहणकर दूसरीको चाहताहै, स्थिर नहीं रहताहै, फिर औरमें लग जाताहै. जैसे वानर ठहरके नहीं बैठता, अरु जो कोऊ ऊपर क्रोधकरताहै, तब अंतरते परा जलताहै; अरु बडी बड़ी इच्छा करताहै; तिसकी प्राप्ति नहीं होती; सदा तृष्णामें रहताहै अरु क्षणमें भयभीत होजाताहै; शांतिको प्राप्त नहीं होता; फिर महादीन हो जाताहै. जैसे कदली वनका हस्ती सांकरसों बांधाहुआ दीन होजाताहै; तैसे यह चैतन्य पुरुप बालक अवस्थाकर दीन होजाताहै. जो कुछ इच्छा करताहै, सो विचारविना करताहै, तिसकर दुःख पाताहै. अरु मूढ गुंग अवस्थाहै, तिसकर कछु सिद्धि नहीं होती, कोऊ पदार्थकी प्राप्ति होतीहै. तिसमें क्षणमात्र सुखी रहताहै, बहुरि तपने लगताहै. जैसे तपती पृथ्वीपर जलडारिये तब एक क्षण शीतल होतीहै, फिर उसी प्रकारसों तपतीहै, तैसे वह भी तपता रहताहै. जैसे रात्रिके अंतमें सूर्य उदय होताहै तिसकर उलूकादि कष्टवान् होतेहैं, तैसे इस जीवको स्वरूपके अज्ञान कर बालावस्थामें कष्ट होताहै,

हे मुनीश्वर! जो बालक अवस्थाकी संगति करताहै सो भी मूर्ख है, काहेते कि, यह विवेक रहित अवस्थाहै, अरु

सदा अपवित्र है. और सदा पदार्थकी और धावताहै ऐसी मूढ अरु दीन अवस्थाकी मुझको इच्छा नहीं, जिस पदार्थको देखताहै तिसकी ओर धावताहै. और क्षण क्षण अपमानको पाता है. जैसे कूकर क्षण क्षणमें द्वारकी ओर धावता है, अरु अपमान पाता है. तैसे बालक अपमानको प्राप्त होता है अरु बालकको सदा माता अरु पिताकाभय रहता है; बांधवका सदा भय रहता है, अरु आपते बडे बालकका भी भय रहता है, अरु पशु पक्षीहूका भय रहता है. हे मुनीश्वर ! ऐसी दुःखरूप अवस्थाकी मुझको इच्छा नहीं. जैसे स्त्रीके नयन चंचल हैं, अरु नदीका प्रवाह चंचल है,इसते भी मन अरु बालक चंचल है,ऐसेजानता हों. अत्र सब चंचलता बालकते कनिष्ठहै, बालक सबते चंचल है. जैसा मन चंचल है, तैसा बालक भी चंचल है मनका रूप बालकहै.

हे मुनीश्वर ! जैसे वेश्याका चित्त एक पुरुषमें नहीं ठहरता, तैसे बालकका चित्त एक पदार्थमें नहीं ठहरता कि, इस पदार्थ कर, मेरा नाश होवैगा, ऐसा विचार भी तिसको नहीं, अरु इसकर मेरा कल्याण होवेगा सो विचार भी नहीं. ऐसेई परा चेष्टाकरता है, अरु सदा दीन रहता है, अरु सुख दुःख इच्छा दोप करके तपायमान रहता है, जैसे ज्येष्ठ आपाढमें पृथ्वी तपायमान होती है, तैसे बालक तपताई रहता है, शांतिको कदाचित् नहीं पाता.

अरु जब विद्या पढने लगता है; तब गुरुसों बडा भय भीतं होता है, जैसे कोई जमको देखके भय पावे, और गरुडको देखके जैसे सर्प भयपावे, तैसे भयभीत होजाता है. जब शरीरको कोई कष्ट आय प्राप्त होता है, तब बड़े दुःखको प्राप्त होता है परन्तु दुःखके निवारणमें समर्थ नहीं होता, अरु सहनको भी समर्थ नहीं अन्तरते परा जलता है; अरु दुःखते कछु बोल सकता नहीं जैसे वृक्ष कछु नहीं बोल सकता, अरु जैसे अवर तिर्यक् योनि दुःख पावते हैं अरु कहि नहीं सकते हैं अरु दुःखका निवारण नहा कर सकते, न सहार कर सकते, अन्तरते परे जलते हैं; तैसे बालकगूँगा मूढहुआ दुःख पाता है. हे मुनीश्वर! ऐसी जो बालककी अवस्था तिनकी जो स्तुति करता है; सो मूर्ख है.

यह तो परमदुःखरूप अवस्था है, इसमें विवेक विचार कछु नहीं. एक खानेको पाता है, अरु रुदन करता है ऐसी अवगुण रूप अवस्था मुझको नहीं सुहाती है, जैसे विज्जुरी अरु जलके बुद्बुदे स्थिर नहीं रहते तैसे बालकहू स्थिर कदाचित् नहीं होता.

हे मुनीश्वर! यह महामूर्ख अवस्था है; कबहूँ कहताहै, हे पिता! मुझको बर्फका टुकडा भूनि दे. कबहूँ कहता है, मुझको चन्द्रमा उतार दे; ये सब मूर्खताके वचन हैं; ताते ऐसी मूर्खावस्थाको मैं अंगीकार नहीं करता; जैसे दुःखका

अनुभव बालकको होता है, सो हमारे स्वप्नमें भी नहीं आया तात्पर्य यह कि, बालावस्थामें बडा दुःख है; यह बालावस्था अवगुणका भूषण है; सो अवगुण कर सोभती है; ऐसी नीच अवस्थाको मैं अंगीकार नहीं करता. इसकी स्तुति करनी सो मूर्खता है इसमें गुण कोई भी नहीं है.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे बालावस्था वर्णनं नाम चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥

पंचदशः सर्गः १५.

अथ युवागारुडीवर्णनम्.

रामउवाच, हे मुनीश्वर! दुःखरूप बालावस्थाके अनंतर जो युवा अवस्था आती है, सो नीचेते ऊँची चढ़ती है, सो भी उत्तम गिनवेके निमित्त नहींहै अधिकदुःखदायक है, जब युवा अवस्था आती है, तब काम रूपी पिशाच आय लगता है. सो कामरूपी पिशाच युवा अवस्थारूपी गडेलेमें आय स्थित होता है, चित्त फिराता है अरु इच्छामें पसारता है. जैसे सूर्यके उदय हुयेसूर्यमुखी कमल खिल आताहै अरु पँखुरीनको पसारता है, तैसे युवावस्थारूपीसूर्य उदय होता है. तब नाना प्रकारकी इच्छा फुरती है अरु कामरूपी पिशाच इसको स्त्रीमें डार देता है, तहाँ परा दुःख पाताहै जैसे कोईको अग्निके कुंडमें डार दिया होय, अरु वह दुःख पावे, तैसे कामके वश हुआ दुःखको पाताहै.

हे मुनीश्वर ! जो कछु विकार है,सो सब युवा अवस्था में आयके प्राप्त हुए हैं. जैसे धनवानको देखके निर्धन सब धनकी आशा करते हैं. तैसे युवा अवस्थाको देखकर सब दोष आय इकट्ठे होते हैं. अरु जो भोगको सुखरूप जानकर भोगकी इच्छा करता है, सो परम दुःखका काण है. जैसे मद्यका घट भरा हुआ देखने मात्रको सुंदर लगता है, परंतु जब उसका पानकरे तब उन्मत्त हो जाय, तिस उन्मत्तता कर दीन होजाताहै, अरु निरादरको पाता है.तैसे यह भोग देखनेमात्रको सुंदर भासता है; परंतु जब इनको भुगतता है,तब तृष्णाकर उन्मत्त होजाता है. अरु पराधीन हो जाताहै.

हे मुनीश्वर ! यह काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार सब जो चोर हैं, सो युवारूपी रात्रिको देखकर लूटने लगते हैं। अरु आत्मज्ञानरूपी धनको चोर लेजाते हैं, तिसकर यह दीन होता है, यह पुरुष आत्मानंदके वियोग कर दीन हुआ है. हे मुनीश्वर ! ऐसी जो दुःख देनहारी युवावस्था, तिसका मैं अंगीकार नहीं करता, अरु शांति जो है, सो चित्त स्थिर करनेके लिये है, सो चित्त युवा अवस्थामें विषयकी ओर धावता है. जैसे बाण लक्षके ओर जाता है, तब उसको विषयका संयोग होता है, सो विषय की तृष्णा निवृत्त नहीं होती अरु तृष्णाके मारे जन्मते जन्मांतर रूप दुःखको पाता है हे मुनीश्वर ! ऐसी दुःख दायक युवा अवस्थाकी, मुझको इच्छा नहीं है.

हे मुनीश्वर ! जेते कछु दुःख हैं, सो सब युवा अवस्था में आयकर प्राप्त होते हैं. काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, चपलता, इत्यादिक जो दुःख हैं, सो सब युवा अवस्थामें स्थिर होते हैं; जैसे प्रलय कालमें, सब रोग आय स्थिर होते हैं. तैसे युवा अवस्थामें सब उपद्रव आय मिलते हैं और क्षणभंग हैं. जैसे बिजुरीका चमका होयके मिट-जाता है, तैसे जैसे समुद्रमें तरंग होतेहैं अरु मिटि जातेहैं तैसे युवाअवस्था होयके मिट जाती है. जैसे स्वप्नमें कोई स्त्री विकारकर छल जाती है.तैसे अज्ञानकर युवा अवस्था छल जाती है.

हे मुनीश्वर ! युवा अवस्था जीवकी परमशत्रु है. जो पुरुष इस शत्रुके शस्त्रते बचे हैं, वे धन्य हैं ! इसके शस्त्र काम, क्रोध, हैं जो इनते छूटा है सो वज्रके प्रहार कर भी छेदा न जावेगा जो इनकर बाँधा हुआ है, सो पशु है.

हे मुनीश्वर ! युवावस्था देखनेमें तो सुंदर है, परंतु अंतरते तृष्णा करके जरजरित है. जैसे वृक्ष देखनेमें तो सुंदर होय, अरु अंतरते घुन लगा हुआ है; तैसे युवा-वस्था जो भोगके निमित्त यत्न करती है, सो भोग आपात रमणीय है. कारण यह कि, जबलग इंद्रिय अरु विषयका संयोगहै, तबलग अविचारित भला लगताहै, अरु जब वियोगहुआ तब दुःख होताहै. ताते भोग करके मूर्ख प्रसन्न होतेहैं, अरु उन्मत्त होतेहैं, तिसको शांति नहीं होती. अरु अंतरसे सदा तृष्णा रहतीहै. स्त्रीमें चित्तकी आसक्ति

रहतीहै. जब इष्ट वनिताका वियोग होताहै, तब तिसके स्मरण करके जलताहै. जैसे वनका वृक्ष अग्नि करके जलताहै तैसे युवावस्थामें इष्टवियोग करके जीव जलताहै जैसे उन्मत्त हस्ती सांकर करके बंधन पाताहै, तब स्थिर होता है; कहूं जाय नहीं सकता; तैसे कामरूपी हस्तीहै, तिसको सांकररूप युवावस्था बंधन करतीहै, अरु युवावस्थारूपी नदीहै, तिसमें इच्छारूपी तरंग उठतेहैं सो कदाचित् शांतिको नहीं पातेहैं; अरु—

हे मुनीश्वर! यह युवावस्था बडी दुष्टहै. कोऊ बडा बुद्धिमान् होवे, अरु सदा निर्मल प्रसन्न होवे, एते गुण करके प्रसन्न होवे; तिसकी बुद्धिको भी युवावस्था मलिन कर डारतीहै. जैसे निर्मल जलकी बडी नदी होवे; अरु जब वर्षाकाल आवे, तब मलिन होय जावे; तैसे युवावस्थामें बुद्धि मलीन होय जातीहै.

हे मुनीश्वर! शरीररूपी वृक्षहै तिसमें युवावस्थारूपी वल्ली प्रगट होतीहै; सो पुष्ट होता है, तब चित्तरूपी भँवरा आय बैठताहै; सो तृष्णारूपी तिसकी सुगंध करके उन्मत्त होताहै; अरु सब विचार भूल जाताहै. जैसे जब प्रबल पवन चलताहै, तब सूखे पत्रको उडाय लेजाताहै; अरु रहने नहीं देता; तैसे युवावस्था आवती है, तब वैराग्य, संतोषादिक गुणका अभाव करतीहै. अरु दुःखरूपी कमलका युवावस्थारूपी सूर्य है; युवा-

वस्थाके उदयते सब दुःख प्रफुल्लित हो आते हैं; ताते सब दुःखका मूल युवावस्थाहै. जैसे सूर्यके उदयते सूर्यमुखी कमल खिल आतेहैं, तैसे चित्तरूपी कमल संसाररूपी पँखुरी अरु सत्यताह्रूपी सुगंध कर खिल आताहै. अरु तृष्णारूपी भौंरा तिसपर आय बैठताहै, अरु विषयकी सुगंध लेताहै.

हे मुनीश्वर ! संसाररूपी रात्रिहै, तिसमें युवावस्था रूपी तारागण प्रकाशते हैं, कारण यह जो शरीर युवावस्थाकर सुशोभित होताहै, अरु युवावस्था शरीरको जर्जरी भाव करके हो आतीहै. जैसे धानका छोटावृक्ष हरा तबलग रहताहै जबलग उसको फूल नहीं आया जब फूल आतेहैं तब सूखनेको लगताहै; अरु अन्नके कण परिपक्क होतेहैं, तब अन्नके छोटे वृक्ष जर्जरभावको पाते हैं. उसकी हरियावल नहीं रहसकती. तैसे जब लग जवानी नहीं आई, तबलग शरीर सुंदर कोमल रहताहै जब जवानी आई तब शरीर क्रूर होजाताहै, फेर परिपक्क होकर क्षीण होजाताहै; अरु वृद्ध होताहै ताते

हे मुनीश्वर ! ऐसी दुःखकी मूलरूप युवावस्था है तिसकी मुझको इच्छानहीं, जैसे समुद्र बडे जलकर पूर्ण है तरंगको पसारताहै; अरु उछलताहै; तोभी मर्यादाका त्याग नहीं करता; ईश्वरकी आज्ञा मर्यादामें रहनेकीहै; अरु युवावस्थातो ऐसीहै जो शास्त्रकी मर्यादा, अरु लोककी

मर्यादा मेटके चलतीहै; अरु तिनको अपना विचार नहीं रहता जैसे अंधकारमें पदार्थका ज्ञान नहीं होता, तैसे युवावस्थामें शुभ अशुभका त्याग नहीं होता. जिसको विचार नहीं रहा तिसको शांति कहांते होवे; सदा व्याधि तापमें जरा रहताहै; जैसे जल विना मच्छको शांति नहीं होती, तैसे विचार बिना सदा पुरुष जलता रहताहै.

जब युवावस्थारूप रात्रि आती है, तब काम पिशाच आयके गर्जता है; तिसकर इसको यही संकल्प उठते हैं; जो कोऊ कामी पुरुष आवे, तिसके साथमें यही चर्चा करों—हे मित्र ! वह कैसी सुंदर है ? अरु कैसे उसके कटाक्ष हैं ? सो किस प्रकार मोको प्राप्त होय. हे मुनीश्वर ! इस इच्छाके साथ वह सदा जरतारहता है. जैसे मरुस्थलकी नदीको देख मृग दौरता है; अरु जलकी अप्राप्ति कर जलता है तैसे कामी पुरुष विषयकी बासना करकै जलता है, अरु शांति नहीं पाता है.

हे मुनीश्वर ! मनुष्य जन्म उत्तम है, परंतु जिनके अभाग्य हैं, तिनको विषयते आत्मपदकी प्राप्ति नहीं होती. जैसे चिंतामणि कोईको प्राप्त होवे, तो तिसका निरादर करैं और उसको जाने नहीं. और डारि देवे, तैसे जो पुरुष मनुष्य शरीर पाकर आत्मपद नहीं पाया, सो बडे अभागीहैं; अरु मूर्खताकरके अपने जीवनेको व्यर्थ खोय डारता है. अरु युवावस्थामें हैं परमदुःखका क्षेत्र अपने

निमित्त बोते हैं, अरु जेत विकार युवावस्थामें हैं, सो सब आयके इसको प्राप्त होते हैं मान, मोह, मद इत्यादि विकार करके पुरुषार्थका नाश करताहै. हे मुनीश्वर ! ऐसे युवावस्था बडे विकारको प्राप्त करती है. जैसे नदी वायुसों अनेक तरंग पसारती है, तैसे युवावस्था चित्तके अनेक कामको उठावतीहै जैसे पंखी पंख कर बहुत उड़ता है; जैसे सिंह भुजाके बलसों पशुके मारनेको दौडताहै, तैसे चित्त युवावस्था कर विक्षेपकी ओर धावता है.

हे मुनीश्वर ! समुद्रका तरना कठिन है, काहेते कि, तामें जल अथाह है. अरु विस्तार भी बडा है; अरु तिसमें मच्छ, कच्छ. मगर, बडे देहधारी रहते हैं. ऐसा दुस्तर समुद्रका तरना सो मैं सुगम मानता हों परन्तु युवावस्थाका तरना महा कठिन है; कारण यह कि युवावस्थामें निर्दोष रहना कठिन है, ऐसी संकटवारी जो युवावस्थाहै, तिसमें चलायमान नहीं होते सो पुरुष धन्यहैं, अरु वंदना करने योग्य हैं हे मुनीश्वर ! यह युवावस्था चित्तको मलीन कर डारती है. जैसे जलकी बावड़ी है, तिसके निकट राख कांटे रहे होयँ सो पवन चलनेते सब आय बावड़ीमें गिरै तैसे पवनरूपी युवावस्थादोषरूपी धूरकांटेनको चित्तरूपीबावड़ीमें डारके मलीन कर देतीहै, ऐसे अवगुण करके पूर्ण जो युवावस्था, तिसकी इच्छा मुझको नहीं है.

युवावस्था ? मेरे पर यही कृपा करनी, जो तेरा दर्शन नहीं होवे, तेरा आवना मैं दुःखका कारण मानता हूं जैसे पुत्रके मरनेका संकट पिता शोष नहीं सकता अरु सुख का निमित्त नहीं देखता, तैसा तेरा आवनामैं सुखका निमित्त नहीं देखता ताते मुझपर दया करनी जो अपना दर्शन न होवे

हे मुनीश्वर । युवावस्थाका तरना महा कठिन है. जो कोऊ यौवनवान होवे, सो नम्रता संयुक्त होवे. और शास्त्र के गुण, वैराग्य, विचार, संतोप, शांति, इनकर संपन्न होवे सो दुर्लभ है जैसे आकाशमें वन होना आश्चर्य है, तैसे युवावस्थामें, वैराग्य, विचार, शांति संतोप पावना यह बडा आश्चर्य है ताते मुझको सोई उपाय कहो जिसकर युवावस्थाक दुःखकी मुक्ति होजाय अरु आत्मपदकी प्राप्ति होय.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे युवागारुडी वर्णनं नाम पंचदशः सर्गः ॥ १५ ॥

षोडशः सर्गः १६.

अथ स्त्रीदुराशावर्णनम्.

हे मुनीश्वर ! जिस काम विलासके निमित्त स्त्रीकी वांछा करता है, सो स्त्री, अस्थि, मांस, रुधिर, मूत्र, विष्टा- करि पूर्ण है, इसीकी पूतरी बनी हुई है. जैसे जंत्रीकी बनी पूतरी होती है, सो तागेसों कर अनेक चेष्टा करती है, तैसे

यह अस्थि मांसादिककी पुतरीमें कछु और नहीं है. जो विचारकर नहीं देखता तिसको रमणीक दीखती है. जैसे पर्वतके शिखर दूरते सुन्दर अरु निकटते आसार हैं. पडे पत्थरई दीखते हैं, तैसे स्त्री वस्त्र अरु भूषणसों करि सुन्दर भासती है, अरु जो अंगको भिन्न भिन्न बिचार कर देखो तो सार कछु नहीं है जैसे नागनीके अंग बहुत कोमल होते हैं, परंतु उसका स्पर्श करो तो काटके मार डारतीहै तैसे जो कोई स्त्रीको स्पर्श करते हैं तिनको नाश कर डारती है जैसे विषकी बेलि देखनेमात्रको सुंदर लगती है, परंतु स्पर्श कियेते मार डारती है. जैसेहस्तीकोजंजीर से बाँधोतब जिस द्वारपे रहता है, तहाँई स्थिर रहता है; तैसे अज्ञानीका जो चित्तरूपी हस्ती है सो कामरूपी जंजीरसे बँधा हुआ स्त्रीरूपी एक स्थानमें स्थिर रहता है; वहाँसे कहूं जाय नहीं सकता और जब हस्तीको महावत अंकुशका प्रहार करता है, तब बंधनको तोरके निकस जाता है तैसे यह चित्तरूप मूर्खहस्ती है, सो महावतरूपी गुरुका उपदेशरूपी अंकुशका बारंबार प्रहार करता है तब सो भी निर्बंध होय जाता है.

हे मुनीश्वर ! कामी पुरुष जो स्त्रीकी वाञ्छा करता है, सो अपने नाशने निमित्त करताहै; जैसे कदली बनका हस्ती, कागजकी हस्तिनी देखकर छल पायके बंधनमें आता है ताते परमदुःख पाता है; तैसे परमदुः-

खका मूल स्त्रीका संग है, हे मुनीश्वर ! जैसे वनके दाहकी अग्नि सबको जलावताहै, तैसे स्त्रीरूपी अग्नि तिसते अधिक है; काहेते जो उस अग्निके परश कियेते तप्त होते हैं; और स्त्रीरूपी अग्नि तो स्मरण मात्रमें जलाती है और जो सुख रमणीय दिखता है. सो आपात रमणीय है जब स्त्रीके सुखका वियोग होता है तब मुर्देकी नाईं होजाता है. तिस कालमें भी (स्त्रीसंयोगकाल) शव (मुर्दा) जैसा हो जाता है.

हे मुनीश्वर ! यह तो अस्थि, मांस, रुधिरका पिंजरा है, सो अग्निमें भस्म होजायगा; अथवा पशु पक्षीको खानेका आहार होयगा. जिसको देखकर पुरुष प्रसन्न होता है; तिसके प्राण आकाशमें लीन होजाते हैं; ताते इस स्त्रीकी इच्छा करनी सो मूर्खताहै; जैसे अग्निकी ज्वालाके ऊपर श्यामता है, तैसे स्त्रीके शीशऊपर श्यामकेशहैं. जैसे अग्निके स्पर्श कियेते जलता है, तैसे स्त्रीके स्पर्श कियेते पुरुष जलताहै. ताते जलना दोनोंमें तुल्य है. हे मुनीश्वर ! इसको नाश करनहारी स्त्रीरूपी अग्नि है. जो स्त्रीकी इच्छा करते हैं सो महामूर्ख अज्ञानीहैं; सो अपने नाशके निमित्त इच्छा करते हैं, जैसे पतंग अपने नाशके निमित्त दीपक की इच्छा करते हैं; तैसे कामी पुरुष अपने नाशके निमित्त स्त्रीकी इच्छा करताहै.

हे मुनीश्वर ! स्त्रीरूपी विषकी बेलि है; अरु हस्त पाँवके अग्र तिसके पत्र हैं अरु भुजा डारी हैं; और

आस्थिरूपी गुंछेहैं नेत्रादिक इंद्रिय तिसके फूल हैं, अरु कामी पुरुष रूपी भौंरे आय बैठते हैं; अरु काम रूपी धीवरने स्त्रीरूपी जाल पसारी है; तिसपर कामीपुरुष-रूपी पक्षी, आय फँसते हैं कामरूपी धीवर तिसको फँसायकर परमकष्टप्राप्तकरता है. ऐसे दुःखकी देनहारी स्त्रीकी जो वांछा करते हैं; सो महामूर्ख हैं.

हे मुनीश्वर ! स्त्रीरूपी सर्पनी है; जब तिसका फुंकार निकलता है, तब तिसके निकट कमल फूल सब जल जाते हैं; ऐसी स्त्रीरूपी सर्पनी है, तिसका इच्छा रूप फुंकार जब निकसता है, तब वैराग्यरूपी कमल जर जाते हैं, अरु जब सर्पनी डसती है तब विषचढता है. और स्त्रीरूपी सर्पनी जब चितौनी करी तब अंतरते आपेई विष चढ जाता है.

हे मुनीश्वर ! जैसे व्याध छलकर मच्छीको फँसावता है, तैसे कामी पुरुष मच्छीवत, सुंदर स्त्रीरूपीजाल देखके फँसता है और स्नेहरूपी तागेसों कामी पुरुष बंधन पाय खैंचा चला जाता है; फिर तृष्णारूपी छुरीसों काम मार डारता है. हे मुनीश्वर ! ऐसे दुःखके देनेहारी स्त्रीकी मुझ-को इच्छा नहीं अरु कामरूपीपारधीहै, तिसते रागरूपी इंद्रियसों जाल बिछाय कामी पुरुषरूपी मृगको आसक्त कर डारता है, अरु स्त्रीतो स्नेहरूपी डोरी है; तिसकर कामी पुरुषरूप बेलसों बँधा है. अरु स्त्रीका मुखरूपी जो च-

न्द्रमा है तिसको देखकर कामी पुरुषरूपी कमलनी खिलि आती है; जैसे चन्द्रमुखी कमल चन्द्रमाको देखकर प्रसन्न होते हैं; और सूर्यमुखी नहीं होते,तैसे यह कामी पुरुष भोगहू कर प्रसन्न होते हैं, अरु ज्ञानवान प्रसन्न नहीं होते हैं. जैसे नकुल सर्पको बिलमें ते निकासके मारता है, तैसे कामी पुरुषको स्त्री, आत्मानंदमेंते निकालके मार डारती है. जब स्त्रीके निकट जाता है, तब उसको भस्म कर डारती है. जैसे सूखे तृण अरु घृतको अग्नि भस्म कर डारती है; तैसे कामी पुरुषको स्त्रीरूपी नागनी भस्म कर डारती है.

हे मुनीश्वर! स्त्रीरूपी जो रात्रि है, तिसका स्नेह-रूपी अंधकार है; जिसके काम क्रोधादिक उलूक अरु पिशाच हैं. हे मुनीश्वर! जो स्त्रीरूपी खड्गके प्रहारते युवारूपी संग्रामते बचा है; सो पुरुष धन्य है! तिसको मेरा नमस्कार है. स्त्रीका संयोग परम दुःखका कारण है, ताते मुझको इसकी इच्छा नहीं. हे मुनीश्वर! जो रोग होता है, तिसके अनुसार औषधि करताहै, तब रोग निवृत्ति होता है अरु कोऊ कुपथ्य दिये, वाका प्रबल होता है, रोग बढ जाता है; ताते मेरे रोगके अनुसार औषधि करो—

सो मेरा रोग सुनिये-जरा अरु मृत्यु मुझको बडा रोग है; तिसके नाशकी औषधि मुझको दीजिये और स्त्री आदिक

जो भोग हैं, सो सब इस रोगके वृद्धि कर्ता हैं. जैसे अग्निमें घृत डारिये, तब बढ जाती है; तैसे भोग सों जरा मृत्यु आदिरोग सो बढता है; ताते इस रोगकी निवृत्तिका औषध करो, नहीं तो सबका त्याग कर वनमें जाय रहूंगा.

हे मुनीश्वर ! जिसको स्त्रीहै तिसको भोगकी इच्छा भी होती है, और जिसको स्त्री नहीं तिसको स्त्रीकी इच्छा भी नहीं. जिसने स्त्रीका त्याग किया है, तिसने संसारकाभी त्याग किया है; सोई सुखीहै. संसारका बीज स्त्रीहै, ताते मुझको स्त्रीकी इच्छा नहीं, मुझको सोई औषधि दीजिये, जिससे जरा मृत्यु आदि रोगकी निवृत्ति होय.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे स्त्रीदुराशा-
वर्णनं नाम षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥

सप्तदशः सर्गः १७.

अथ जरावस्थावर्णनम्.

श्रीराम उवाच, हे मुनीश्वर ! बालक अवस्थातो महा जड है, अरु अशक्त है; और जब युवावस्था आती है तब बालावस्थाको ग्रहण कर लेती है. तिसके अनंतर वृद्धावस्था आती है, तब शरीर जर्जरीभूत होजाता है अरु बुद्धि क्षीण होजातीहै; बहुरि मृत्युको पाताहै. हे मुन

श्वर ! इस प्रकार अज्ञानीका जीवना व्यर्थ है, कछु अर्थ की सिद्धि नहीं होतीहै. जैसे नदीके तटपर वृक्ष होते हैं सो जलके प्रवाहकर जर्जरीभूत होजातेहैं, तैसे वृद्धावस्थामें शरीर जर्जरीभूत होजाताहै; जैसे पवनसा पत्र उडजाताहै, तैसे वृद्धावस्थामें शरीर नाश पाताहै. जेते कछु रोगहैं, सो सब वृद्धावस्थामें आय प्राप्त होतेहैं; अरु शरीर कृश होजाताहै; अरु स्त्री पुत्रादिक सब वृद्धका त्याग करते हैं; जैसे पक्के फलको वृक्ष त्याग देताहै, तैसे वृद्धको कुटुंब त्याग देताहै, अरु देख हँसते हैं जैसे बावरेको देखते हँसके बोलतेहैं; कि, इनकी बुद्धि सब जात रही. जैसे कमल फूलनके ऊपर बरफ पडता है, अरु कमल जर्जरीभूत होजाताहै, तैसे जरा अवस्थामें पुरुष जर्जरीभाव को प्राप्त होताहै, अरु शरीर कुबरा होजाता है; केश श्वेत होजातेहैं; शक्ति क्षीण होजातीहै. जैसे चिरकालका बडा वृक्ष होताहै, तिसमें घुन होताहै; तैसे शक्ति कछु रहती नहीं.

हे मुनीश्वर ! औरहू सब कृति क्षीण होजातीहै, परंतु एक आसक्ति मात्र रहतीहै, जैसे बडे वृक्षपै उलूक आय रहतेहैं; तैसे इसमें क्रोध शक्ति आय रहतीहै और शक्ति सब क्षीण होजातीहै. हे मुनीश्वर ! जरा अवस्था दुःखका घरहै जब जरा अवस्था आतीहै, तब सब दुःख इकट्ठे होतेहैं तिनकर महादीन होजातेहैं. अरु युवाअवस्थाका जो कामका बल रहताहै, सो जरामें क्षीण होजाताहै; अरु

इंद्रियकी आसक्ति घट जातीहै, तिनते चपलताका अभाव होजाताहै. जैसे पिताके निर्धन हुए पुत्र दीन होजाता है; तैसे शरीर निर्बल हुए इंद्रियांहू निर्बल हो जाती हैं; और एक तृष्णा उन्मत्त हो बढ जाती है.

हे मुनीश्वर ! जब जराह्रूपी रात्रि आतीहै, तब खांसी ह्रूपी गिदडी आय शब्द करती है; अरु आधिव्याधि ह्रूपी उलूक आय निवास करते हैं. हे मुनीश्वर ! ऐसी जो नीच वृद्धावस्था है. तिसकी मुझको इच्छा नहीं यह देह जरा आयेते कुबरी होय जाती है; जैसे फलपकनेसों वृक्ष झुक जाताहै, तैसे जराके आयेते देह कुबरी हो जातीहै. जो युवावस्थामें स्त्री पुत्रादिक चाहते थे, अरु टहल करते थे, सो सब उसको त्याग देते हैं जैसें वृद्ध बैलको बैलवाला त्याग देताहै; तैसे इसको बंधु त्याग देते हैं, और देखके हँसते हैं; अरु अपमान करते हैं. तिनको ऊंटकी नाईं भासता है. हे मुनीश्वर ! ऐसी जो नीच अवस्था है तिसकी मुझको इच्छा नहीं. अब जो कछु कर्तव्य मुझको कहो सो मैं करों.

इस शरीरकी तीनों अवस्थामें कोऊ सुखदाई नहीं है; क्योंकि बालावस्था महामूढ है यह युवावस्था महा विकारवान है; अरु जरावस्था महादुःखका पात्रहै बालावस्थाको युवावस्था ग्रहण कर लेती है और युवा-वस्थाको जरा अवस्था ग्रहण कर लेती है अरु जराव-स्थाको मृत्यु ग्रहण कर लेती है. यह अवस्था सब अल्प-

कालकी हैं; इनके आश्रय करके मेरेको कहा सुख होना है; ताते मुझको सोई उपाय कहो, जिसकर इस दुःखसे मुक्त होजाऊं.

हे मुनीश्वर ! जब जरा अवस्था आती है तब मरना भी निकट आताहै. जैसे संध्याके आये रात्रि तत्काल आय जाती है; और जो संध्याके आये दिनकी इच्छा करते हैं सो महामूर्ख हैं; तैसे जराके आये जीवनेकी आशा रखनी सो महामूर्खताहै. हे मुनीश्वर ! जैसे बिल्ली चितौनी करती है, जो चूहा आवे तो पकर लेउँ तैसे मृत्यु चितवत है कि, जरा अवस्था आवे तो मैं इसका ग्रहण कर लेउँ अरु जरा अवस्था मानो कालकी सखी है. रोगरूपी मशालेकर शरीररूपी मांसको सुखाती है, तब काल जो इसका स्वामी है, सो आयकर भोजन कर लेता है. अरु शरीररूपा घर है, तिसका स्वामी काल है जब काल घरमें आवे, तब तिसके आगे तीन पटरानी आती हैं; पहिली अशक्तता, दूसरी अंगमें पीडा; तीसरी खांसी, सो शीघ्र श्वासको चलावती है, अरु श्वेत केश होते हैं, सो चमरकी नाईं झुलते हैं. ऐसी जो कालकी सहेली हैं, सो प्रथमही आइ प्रवेश करती हैं, अरु जरा रूपी कलँगी शरीरको बनावती है, तब जो वाका स्वामी काल है, सो आय प्रवेश करता है.

हे मुनीश्वर ! जो परम नीच अवस्था है, सो जराही है; सो जब आती है तब शरीर जर्जरीभूत कर देती है;

कँपनेको लगती है, अरु शरीरको निर्बल कर देती है अरु क्रूर कर देती है. जैसे कमलपर बरफकी वर्षा होवे अरु जर्जरीभूत होय जाय तैसे शरीरको जर्जरीभूत कर डारती है. जैसे बनमें बाघिन आयके शब्द करती है अरु मृगका नाश करती है, तैसे खांसी रूपी बाघिन आय मृगरूपी बलका नाश करती है.

हे मुनीश्वर ! जब जरा आवत है तब मृत्यु प्रसन्न होता है. जैसे चन्द्रमाके उदयते. कमलनी खिल जाती है, तैसे मृत्यु प्रसन्न होता है, अरु यह जरा अवस्था बडी दुष्ट है, बडे बडे योद्धे हुए हैं तिनको भी दीन कर दिये हैं; यद्यपि बडे शूरमाने संग्राममें शत्रुको जीते हैं, सो उन-कोहू जराने जीत लिये हैं, अरु बडे पर्वतके चूर्ण कर डारे हैं ताकोहू जरा पिशाचनीने महादीन कर दिये हैं यह जरारूपी जो राक्षसी है, तिसने सबको दीन कर दिये हैं, सो सबको जीतनेवारी है.

हे मुनीश्वर ! यह जरा शरीरको अग्निकी नाईं लगती है. जैसे अग्नि वृक्षको लगाता है, अरु धूम निकसता है, तैसे शरीर रूपी वृक्षमें जरारूपी अग्नि लगके तृष्णारूपी धुँवे निकसते हैं, जैसे डब्बेमें बडे रत्न रहते हैं. जरारूपी डब्बेमें दुःखरूपी अनेक रत्न रहते हैं. अरु जरारूपी वसन्तऋतु है. तिस करके शरीररूपी वृक्ष दुःखरूपी रस करके पूर्ण होता है. जैसे हस्ती साँकरसों

बँधा हुआ दीन होजाता है; तैसे जरारूपी साँकर करके बँधा पुरुष दीन होजाता है; अरु अंग सब शिथिल हो जाता है; बल क्षीण होजाता है; अरु इन्द्रियांभी निर्बल होजाती हैं, अरु शरीर जर्जरी भावको प्राप्त होता है; परंतु तृष्णा नहीं घटती है; नित्य बढती चली जाती है जैसे रात्रि आती है तब सूर्यवंशी कमल सब मूँद जाते हैं; तब पिशाचनी आय विचरने लगती है अरु प्रसन्न होती है; तैसे जरारूपी रात्रिके आयेते सब शक्तिरूपी कमल मूँद जाते हैं अरु तृष्णारूपी पिशाचनी प्रसन्न होती है.

हे मुनीश्वर! जैसे गंगा तटपर वृक्ष रहते हैं, सो गंगाजलके वेगसों जर्जरीभूत होजाते हैं, तैसे जो आयुरूपी प्रवाह चलता है, तिसके वेगकर शरीर जर्जरीभूत हो जाता है. जैसे मांसके टुकडेको देख आकाशसे उडती चील्ह नीचे आय ले जाती है, तैसे जरा अवस्थामें शरीररूपी मांसको काल ले जाता है, हे मुनीश्वर! यह तो कालका ग्रास बना हुआ है जैसे सुन्दर वृक्षको हस्ती खाय जाता है तैसे जरा अवस्थावाले शरीर को, कालदेखके भोजन कर जाता है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे जरावस्था निरूपणं नाम सप्तदशः सर्गः ॥ १७ ॥

अष्टादशः सर्गः १८.

अथ कालवृत्तांतवर्णनम्.

रामोवाच, हे मुनीश्वर ! संसाररूपी गर्त है, तिसमें अज्ञानी गिराहै सो संसाररूपी गर्व अल्पहै; अरु अज्ञानी तो बडा होगयाहै. संकल्प विकल्पकी आधिक्यताते बढा है अरु जो ज्ञानवान् पुरुष हैं सो संसारको मिथ्या जानते हैं, फिर संसाररूपी जालमें फँसते नहीं हैं. अरु जो अज्ञानी पुरुष है सो संसारको सत्य जानकर संसारकी आस्थारूपी जालमें फँसताहै. अरु संसारके भोगकी वांछा करताहै सो ऐसाहै जैसे दर्पणमें प्रतिबिंब देखकर बालक पकरनेकी इच्छा करताहै; तैसे अज्ञानी संसारको सत्य जानकर जगत्के पदार्थकी वांछा करता है. यह मेरको होवे; यह मेरको नहीं होवे अरु यह जो सुख है सो नाशात्मक है, अभिप्राय यह जो आवते हैं अरु जाते हैं, सो स्थिर नहीं रहते हैं; इनका काल ग्रहण करता है. जैसे पक्के अनारको चूहा खाय जाता है, तैसे सब पदार्थको काल खाता है.

हे मुनीश्वर ! जेते कछु पदार्थ हैं, सो कालग्रसित हैं, बडे बडे बली सुमेरु जैसे गंभीर बलवाले पुरुषोंको ग्रास कालने किये हैं जैसे सर्पको नकुल भक्षण कर जाता है, तैसे बडे बलीका ग्रास काल कर जाता है. अरु जगत्रूपी एक गूलरका फल है,तिसमें जो मच्छा है सो ब्रह्मादिक

है, सो फलका जो वृक्ष है तिनका जो वन है, सो ब्रह्मरूप है, तिस ब्रह्मरूप वनमें जेते कछु वन हैं. सो सब इसका आहार है, सबका भक्षण काल कर जाता है.

हे मुनीश्वर ! यह काल बडा बलिष्ठ है; जो कछु देखनेमें आता है; सो सब इसने ग्रास कर लिया है, तब औरकी कहा कहनी है और हमारे जो बडे ब्रह्मादिक तिनका भी काल ग्रास कर जाता है; जैसे मृगका ग्रास सिंह कर लेता है, और काल किसी करके जाना नहीं जाता. छिन, घरी, प्रहर, दिन, मास और वर्षादिक कर जानिये सो काल है और कालकी मूर्त्ति प्रगट नहीं है, ऐसा अप्रगट रूप है; अरु किसीकी स्थिति होने नहीं देता. अरु एक बेलि कालने पसारी है, तिसकी त्वचा रात्रि है; अरु फूल तिसका दिन है, और जीवरूपी भौंरे तिसपर आय बैठते हैं.

हे मुनीश्वर ! जगतरूपी गूलरका फूल है, तिसमें जीवरूपी मच्छर बहुत रहते हैं, तिस फूलका भक्षण काल कर जाता है. जैसे अनारका भक्षण तोता करता है, तैसे काल भक्षण करता है. अरु जगत्‌रूपी वृक्ष है, अरु जीवरूपीतिसके पत्र हैं, तिसका कालरूपी हस्ती भक्षण कर जाता है. अरु शुभ अशुभरूपी भैंसानको कालरूपी सिंह छेद छेदके खाताहै.

हे मुनीश्वर ! यह काल महाक्रूरहै. सो किसीपर दया नहीं करता; सबका भोजन कर जाता है. जैसे

मृग सब फूलनको खाय जाता है, तिससे कोऊ रहता नहीं है, परन्तु एक कमल उससे बचे हैं, सो कमल कैसाहै ? शांति अरु मैत्री तिसके अंकुरहैं, अरु चेतनता मात्र प्रकाश है, इस कारणते वह बचाहै, सो काल रूपी मृग इसको पहुँच नहीं सकता. इससे प्राप्तहुवा कालभी लीन होजाता है और जेता कछु प्रपंचहै, सो सब कालके मुखमेंहै, ब्रह्मा, विष्णु, रूद्र, कुबेर आदिक सब मूर्ति काल की धरी हुईहैं, फिर तिनको भी अंतर्ध्यान करदेताहै. हे मुनीश्वर ! उत्पत्ति, स्थिति, अरु प्रलय; सब कालते होतेहैं. अनेक बेर महाकल्पकाहू ग्रहण करलेताहै, अरु अनेक बेर करेगा. अरु कालको भोजन कियेते तृप्ति कदाचित् नहीं होती; अरु कदाचित् होनहारीहू नहीं. जैसे अग्नि घृतकी आहुतीसों तृप्त नहीं होता, तैसे जगत् अरु सब ब्रह्मांडका भोजन करतेहू काल तृप्त नहीं होता, अरु इसका ऐसा स्वभाव है, जो इंद्रको दरिद्री कर देताहै, अरु दरिद्रीको इंद्र कर देताहै और सुमेरुको राई बनाता है, अरु राईका समूह करता है; सबते बडे ऐश्वर्यवालेको नीच करडारता है; सबते नीचको ऊंच करडारता है. अरु बूँदका समुद्र करडारता है, अरु समुद्रका बूँद करता है ऐसी शक्ति कालमें है. अरु जीवरूपी जो मच्छ हैं, तिनको शुभाशुभ कर्मरूपछुरे सों छेदत रहता है, फिर कैसा है? जो काल कूपका चक्र है; जीवरूपा टटको शुभ अशुभ कर्मरूपी रसरीसों बांधकर लिये फिरता है. फिर कसाहै। जीवरूपी वृक्षको रात्रि अरु दिनरूपी कुहारा कर छेदताहै.

हे मुनीश्वर ! जेता कछु जगत् विलास भासता है, सो सबका ग्रहण काल कर लेवेगा अरु जीवरूपीरत्नका काल डब्बा है, सो अपने उदरमें डारता जाता है, और खेल करताहै. अरु चंद्र सूर्यरूपी गेंदको कबहूं अर्द्ध उछालता है, कबहूं नीचे डारताहै, अरु जो महापुरुष है सो उत्पत्ति प्रलयमें जो पदार्थ हैं, तिनमें स्नेह किसके साथ नहीं करते तिसका नाश करनेको काल समर्थ नहीं. जैसे मुंडकी माला महादेवजी गरेमें धरते हैं; तैसे यह भी जीवकी माला गरेमें डारता है.

हे मुनीश्वर जो बडे बड बलिष्ठ हैं, तिनका भी काल ग्रहण कर लेता है; जैसे समुद्र बडाहै, तिसका बडवाग्नि पान करलेता है और जैसे पवन भोजपत्रको उडाता है, तैसा कालका बल है किसीकी सामर्थ्य नहीं, जो इसके आगे स्थित रहै.

हे मुनीश्वर ! शांति गुण प्राधान्य जो देवताहैं, अरु रजोगुण प्राधान्य जो बडे राजाहैं, अरु तमोगुण प्राधान्य जो दैत्य राक्षस हैं, तिनमें कोऊ समर्थ नहीं, जो इसके आगे स्थित होवे जैसे टोकनीमें अन्न अरु जल धरके अग्निपर चढाय दियेते फिर उछलते हैं, सो अन्नके दाने कडछी कर कबहूं ऊर्ध्व और कबहूं नीचे जाते हैं, तैसे जीवरूपी अनेक दाने जगत् रूपी टोकनीमें पडे हुये राग द्वेष रूपी अग्निपै चढे हैं, अरु कर्मरूपी कडछीकर कबहूं ऊर्ध्व जाते हैं, कबहूं नीचे जाते हैं. हे मुनीश्वर ! यह काल किसीको

स्थिर होने नहीं देता, महा कठोर है. दया किसी पर नहीं धरता इसका भय मुझको रहता है. ताते सोई उपाय मुझको कहो. जिसकर मैं कालते निर्भय होजाऊं.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे कालवृत्तांत निरूपणं नाम अष्टादशः सर्गः ॥ १८ ॥

एकोनविंशतितमः सर्गः १९.

अथ कालविलासवर्णनम्.

श्रीराम उवाच, हे मुनीश्वर ! यह काल बडा बलिष्ठ है. जैसे राजाके पुत्र शिकार खेलने जाते हैं, तब वनमें बड़े पशु पक्षी देखते हैं, फिर मारते हैं. तैसे यह संसाररूपी वनहै, तिसमें प्राणी मात्र पशु पक्षी हैं, जब कालरूपी राजपुत्र तिसमें शिकार खेलने आताहै. तब सब जीव भयको पाते हैं, फिर तिसकोई मारता है.

हे मुनीश्वर ! यह काल महा भैरव है, सबका ग्रासकर लेता है. प्रलयमें सबका प्रलय कर डारता है. अरु इसकी जो चंडिका शक्ति है, तिसका बड़ा उदर है, अरु कालिका सबका ग्रास करती है, पाछे, नृत्य करती है. जैसे वनके मृगको सिंह अरु सिंहनी भोजन करते हैं और नृत्य करते हैं, तैसे जगत्‌रूपी वनमें जीव रूपी मृगका भोजन करके काल अरु कालिका नृत्य करते हैं बहुरि इनते जगत्‌का प्रादुर्भाव होता है. नाना प्रकारके पदार्थनको रचते हैं.

पृथ्वी, बगीचे, बावडी, आदि सब पदार्थ इनहीं ते उत्पन्न होते हैं. अरु सुंदर जीवकी हू उत्पत्ति इनते होती है, और एक समयमें उनका नाशभी कर देती है. सुंदर समुद्र रचके फिर वामें अग्नि लगाय देती है अरु सुंदर कमलको बनायके फिर वाके ऊपरकी बरफकी वरसा करती है, इत्यादि नाना पदार्थनको रचिके तिनका नाश करती है. जहां बडे स्थान बसते हैं तिनको उजाड कर डारती है. फिर उजाडमें बस्ती कर धरती है. अरु नाशभी करती है, स्थिर रहने किसीको नहीं देती. जैसे बागमें वानर आयके वृक्षको ठहरने नहीं देता तैसे कालरूपी बानर किसी पदार्थको स्थिररहने नहीं देता.

हे मुनीश्वर ! इस प्रकारसों सब पदार्थ कालसों कर जर्जरीभूत होते हैं, तिसका मैं आश्रय किस रीतिसों करों ? मुझको तो नाशरूप भासता है. ताते अब मुझको किसी जगत्के पदार्थकी इच्छा नहीं.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे कालविलासवर्णनं नाम एकोनविंशतितमःसर्गः ॥ १९ ॥

विंशतितमः सर्गः २०.

अथ कालकालिकावर्णनम्.

राम उवाच, हे मुनीश्वर ! इस कालका महा पराक्रम है, इसके तेजके सन्मुख रहनेको कोई समर्थ नहीं क्षणमें ऊँचको नीच कर डारता है, अरु नीचको ऊंच कर डारता है

तिसका निवारण कोऊ कर नहीं सकता, सब इसीके भयसे परे काँपते हैं. यह महा भैरव है. सब विश्वका ग्रास कर लेता है. अरु इसकी चंडिकारूप शक्ति है सो बलवान् है, सो नदीरूप है, तिसका उल्लंघन कोई नहीं कर सकता है, अरु महाकालरूप काली है; तिसका बडा भयानक आकार है, अरु कालरूप जो रुद्र है, तिसते अभिन्नरूपी कालिका है, सो सबका पान कर लेती है; पाछे भैरव अरु भैरवी नृत्य करते हैं. सो काल कालिका कैसी है! बडा जिसका आकाशमें शीश है, अरु जिसके पातालमें चरण हैं. दशोंदिशा जिसकी भुजा हैं; सप्त समुद्र जिसके हाथमें कंकन हैं, सम्पूर्ण पृथ्वीरूप तिसके हाथमें पात्र है, तिसके ऊपर जीव है सो भोजन योग्य है. हिमालय अरु सुमेरु पर्वत दोनों कानमें बडे रत्न हैं; चंद्रमा सूर्य जिसके लोचन हैं अरु सब तारागण वाके मस्तकमें विन्दु हैं; अरु हाथमें त्रिशूल अरु मुशल आदि शस्त्र हैं; अरु जिसके हाथमें तंद्रा फांसा है, तिसकर जीवको मारता है. ऐसी जो कालिका देवी है, सो सब जीवका ग्रास करके महाभैरव जो रुद्र है तिसके आगे नृत्य करती है. अरु अट्ट, अट्ट ऐसा शब्द करती है; अरु जीवका भोजन करके उनकी रुंडमाला गरेमें धारण करती है; सो भैरवके आगे नृत्य करती है. अरु भैरव कैसा है? कि जिसके सन्मुख रहनेकी शक्ति काइमें नहीं है, अरु जहाँ उजार है तहाँ क्षणमें वस्ती कर डारते हैं, अरु जहाँ बस्ती होवे तहाँ क्षणमें उजार करते हैं

इसीसे तिनका नाम देव कहते हैं, अरु तिसको कृतांतभी कहते हैं. काहेसे कि, बडे २ पदार्थ होते हैं अरु तिसका नाश भी करता है, अरु स्थिर किसीको रहने नहीं देता तिसते इसका नाम कृतांत है, अरु नित्यरूपीहू यही है जो इस आदि धरा है सोई कर्त्ता अरु कर्मरूप है काहेते कि, परिणाम जिसका अनित्यरूप है इसीते इसका कर्म नाम है; सो कैसे नाश करता है? जब अभावरूपी धनुष हाथमें धरता है, तिसकर राग द्वेष रूपी बाण चलाता है तिस बाणसे जर्जरीभूत करके नाश करता है, अरु उत्पत्ति नाशमें उसको यत्न भी कछु करना नहीं पडता है, इसको तो खेल जैसा है.जैसे बालक मृत्तिकाकी सेना बनाता है. फिर उठाय कर नाशभी करदेताहै, तैसे कालको उपजावने अरु नाश करने में यत्न करना नहीं पडता है. हे मुनीश्वर! कालरूपी धीवर है, तिसने क्रियारूपी जाल पसाराहै, तिसविषे जीवरूपी पक्षी पडे फँसतेहैं, सो फँसे हुए शांतिको नहीं प्राप्त होतेहैं. हे मुनीश्वर! यह तो सब नाशरूप पदार्थ हैं इनमें आश्रय किसका करनां; जिसकर सुखी होवे! स्थावर जंगम जगत् तो सबकालके मुखमेंहैं यह सब नाशरूप मुझको दृष्टिमें आवैहै, ताते जो निर्भयपद होय-सो मुझसों कहो.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे कालकालिका वर्णनं नाम विंशतितमः सर्गः ॥ २० ॥

एकविंशतितमः सर्गः २१.

अथ कालविलासवर्णनम्.

श्रीरामोवाच, हे मुनीश्वर! जेते कछु पदार्थ भासते हैं सो सब नाशरूपहैं; ताते किसकी इच्छा करों ? और कौनको आश्रय करों ? इतनी इच्छा करनी सो मूर्खता है. अरु जेती कछु चेष्टा अज्ञानी करताहै सो सब दुःखकेनिमित्त है अरु जीवनेमें अर्थकी सिद्धि कछु नहीं है, काहेते जो बालक अवस्था होतीहै, तब मूढता रहतीहै, विचार कछु नहीं रहता. अरु जब युवा अवस्था आती है, तब मूर्खता करके विषयको सेवतेहैं, अरु मान मोहादि विकारोंसे मोहेई जाते हैं, तामें भी विचार कछु नहीं होता अरु स्थिरभी नहींरहते, फिर दीनका दीन रहके विषयकी तृष्णा करताहै. शांतिको नहीं पाताहै.

हे मुनीश्वर! आयुष्य जो है सो महाचंचलहै, अरु मृत्यु निकट है, वाको अन्यथाभाव नहीं होता है. हे मुनीश्वर! जेते कछु भोगहै सो रोगहैं, अरु जिसको संपदा जानतेहैं, सो आपदाहै, अरु जिसको सत्य कहतेहैं, सो असत्यरूप है; अरु जिस जिस स्त्री पुत्रादिकको मित्र जानतेहैं, सो सब बंधनका करताहै अरु इंद्रिय जोहैं सो महा शत्रुरूपहै. सो मृगतृष्णाके जलवत्हैं अरु यह देह है सो विकाररूपहै, अरु मन महाचंचल है, और सदा अशांतरूप है अरु अहंकार जो है सो महानीच है. इस-

नेहीं दीनताको प्राप्त कियाहै इसकर जेते कछु पदार्थ इसको सुखदायक भासते हैं, सो सब दुःखके देनेहारेहैं तिसकर इसको कदाचित् शांति नहीं होती, ताते मुझको इतनी इच्छा नहीं. यद्यपि देखने मात्रको सुंदर भासते हें, तो भी इनसे सुख कछु नहीं, सो पदार्थ स्थिर रहनेका नहीं. जैसे समुद्रमें नानाप्रकारके तरंग भासतेहैं, सो सब वडवाग्निकर नाश होतेहैं तैसे यह पदार्थभी नाशको पाते हैं. मैं अपनी आयु विषे कैसे आस्था करों.

हे मुनीश्वर! वडे समुद्र जो दृष्टि आतेहैं अरु सुमेरु आदि वडे पदार्थ हैं सो सब नाशको पाते हैं, तब हमसारिखेकी कहा वार्त्ता है और वडे वडे दैत्य राक्षस हू होयके नाश पाय गयेहैं, तो हम सारिखेकी कहा वार्ता है? अरु देवता, सिद्ध, गंधर्व, हुयेहैं सो सब नाशको पाते हैं. तिनकी नाम संज्ञाभी नहीं रहती तब हम सारिखेकी कहा वार्त्ता! पृथ्वी, जल, अरु अग्नि जो दाहक शक्ति धरनेहारे अरु पवन जोहैं सो वीर्य सहित सब नाश हो जायँगे. कछु इनकी सत्ताभी न रहैगी, तो हम सारिखेकी कहा वार्त्ता, अरु यम, कुबेर, वरुण, इंद्र, बडे तेजवाले हैं सो सब नाश पावेंगे तो हम सारिखेकी कहा कहानी है, और तारा मंडल जो दृष्टि आते हैं, सो सब गिरपडेंगे- जैसे सूखे पात वृक्षते वायुसों गिरजाते हैं, तैसे तारे गिरते हैं तब हम सारिखेकी कहा वार्त्ता है मुनीश्वर! ध्रुव, जो स्थिर भासता है. सो भी अस्थिर होय जायगा, अरु च-

न्द्रमा अमृतमय मंडलका दृष्टिमें आता है और सूर्य अखंड मंडल है जिसका, ऐसा जो प्रकाश संयुक्त दृष्टि आता है, सो सब नाश हो जावेहिंगे, तो हम सारिखेकी कहा-वार्त्ता है औरकी हू कहा वार्त्ता है यह जो बडे ईश्वर जगत्के अधिष्ठाता हैं तिनका भी अभाव हो जाता है. परमेष्ठी जो ब्रह्मा है, तिसका भी अभाव हो जाता है हरि जो विष्णु सो भी हरे जायँगे महा भैरव रूप जो इन्द्र सो भी शून्य हो जायँगे; तो हम सारिखेकी कहा वार्त्ता करनी ? अरु काल जो सबका भक्षणकरने हाराहै सोभी टूक टूक होयके नाशको प्राप्त होवेगा अरु कालकी स्त्री जो नेती है, सोहू अनेतताको प्राप्त होवेगी; अरु सबका आधार जो आकाश है सो भी नाश होजायगा. तो हम सारिखेकी कहा वार्त्ता ? अरु जेता कछु जगत् अर्थ कर सिद्ध होताहै, सो सब नाश हो जावेगा. कोऊहू स्थिर रहनेका नहीं तब हम किसकी आस्था करैं, अरु किसका आश्रय करैं यह जगत् सब भ्रममात्रहै अज्ञानीकी इसमें आस्था होती है और हमारी नहीं है. कि, जगत् भ्रम कैसे उत्पन्न भयाहै; अरु मैं इतना जानता हों कि. संसारमें इतने दुःखी होते हैं, सो अहंकारने किया है.

हे मुनीश्वर ! इसका जो परमशत्रु अहंकार है, इस करके भटकता फिरता है.जैसे जेवरीमें बाँधा हुआ पतंग कबहूं ऊर्ध्व कबहूं नीचे जाता है स्थिर कबहूँ नहीं रहता. तैसे जीवहू अहंकार करके कबहूँ ऊर्ध्व कबहूँ अधो जाता

है. स्थिर कबहूं नहीं होता जैसे अश्वते आरूढ रथ तिन-के ऊपर बैठके सूर्य आकाश मार्गमें भ्रमता है तैसे यह जी-व भ्रमता है स्थिर कदाचित् नहीं होता. हे मुनीश्वर! यह जीव परमार्थ सत्य स्वरूपते भूलाहुआ भटकता है अरु अज्ञान करके संसारमें आस्था करता है अरु भोगहूको सुखरूप जानकर तिसमें तृष्णा करता है. और जिसको सुखरूप जानता है सो रोग समान है और विषकर पूर्ण सर्प जैसे है. सो जीवका नाश करनहारे हैं. और जिसको सत्य जानता है, सो असत्य है. सब कालके मुखमें ग्रसे हुए हैं.

हे मुनीश्वर! विचार बिना अपना नाश आपही करता है; काहेते कि, इसका कल्याण करने हारा बोध है. जो सत्य विचार बोधके शरण जाय तो कल्याण होवे और जेते पदार्थ हैं, सो स्थिर कोई नहीं; इनको सत्य जानना दु:खके निमित्त है. हे मुनीश्वर! जब तृष्णा आती है, तब आनन्द अरु धैर्यको नाश करदेती है; जैसे वायु मेघका नाश कर डारता है, तैसे तृष्णा नाश कर डारती है. ताते मुझको सोई उपाय कहो, जिसकर जगत्का भ्रम मिट जावे, अरु अविनाशी पदकी प्राप्ति होवै. इस भ्रमरूप जगत्की आस्था मैं नहीं देखता; ताते इच्छा चाहे तैसी करो, परन्तु सुख दु:ख इसीको होने हैं सो होइँगे, मिटनेके नहीं भावे पहाडकी कंदरामें बैठो, भावे कोटमें बैठो, परंतु जो होनेका सो मिथ्या नहीं होवै है, इस निमित्त यत्न करना मूर्खता है.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे कालविलास वर्णनं नाम एकविंशतितमः सर्गः ॥ २१ ॥

द्वाविंशतितमः सर्गः २२.

अथ सर्व पदार्थाभाव वर्णनम्.

राम उवाच, हे मुनीश्वर ! यह जो नाना प्रकारके सुन्दर पदार्थ भासते हैं, सो सब नाशरूप हैं इनकी आस्था मूर्ख करते हैं. यह तो मनकी कल्पना करके रचे हुये हैं. तिसमें किसकी आस्था करों ?

हे मुनीश्वर ! अज्ञानी जीवका जीवना व्यर्थ है; काहेते जो जीवनेते उनका अर्थ सिद्धि कछु नहीं होता. जब कुमार अवस्था होती है, तब मूढ बुद्धि होती है. तिसमें विचार कछु नहीं होता. जब युवावस्था आती तब काम क्रोधादिक विकार उत्पन्न होते हैं तिसकर सदा ढंपि रहते हैं. जैसे जालमें पक्षी बँध जाता है, अरु आकाश मार्गको देख नहीं सकता है; तैसे काम क्रोधादिक करि ढपा हुआ विचार मार्गको देख नहीं सकता जब वृद्धावस्था आती है; तब शरीर जर्जरीभूत होजाता है, अरु महादीन होता है. बहुरि शरीरको भी त्याग देता है. जैसे कमलके ऊपर बरफ़ पडता है तब तिसका भौंरा त्याग करता है, तैसे जब शरीर रूपी कमलको जराका स्पर्श होता है, तब जीव रूपी भौंरा त्याग कर देता है.

हे मुनीश्वर ! यह शरीर तबलग सुन्दर है जबलग वृद्धावस्था प्राप्त नहीं होती. जैसे चन्द्रमाका प्रकाश राहु

दैत्यने आवरण नहीं किया तबलग रहता है, जब राहु दैत्य आवरण करताहै, तब प्रकाश नहीं रहता है तैसे जरा अवस्थाके आये युवा अवस्थाकी सुन्दरता जाती रहती है, हे मुनीश्वर! जराके आयेते शरीर कृश होजाता है, अरु तृष्णा बढ जाती है; जैसे वर्षाकालमें नदी बढ जाती है; तैसे जरा अवस्थामें तृष्णा बढ जाती है; अरु जो पदार्थकी तृष्णा करता है, सो पदार्थ भी दुःखरूप है; तृष्णा करके आपही दुःख पाता है.

हे मुनीश्वर! तृष्णारूपी समुद्र है तिसमें चित्तरूपी बेडा परा है; राग द्वेषरूपी मच्छ कबहूँ ऊर्ध्व जाते हैं, कबहूँ नीचे आते हैं.: स्थिर कदाचित् नहीं रहते. हे मुनीश्वर! कामरूपी वृक्ष है, सो वृक्षमें तृष्णारूपी लता लगती हैं. तिसमें विषयरूपी फूल हैं; जब जीवरूपी भौंरा तिसके ऊपर बैठता है; तब विषयरूपी बेलिसों मृतक हो जाता है हे मुनीश्वर! तृष्णारूपी एक बडी नदी है, तिसमें राग द्वेषादिक बडे मच्छ रहते हैं; तिस नदीमें परे हुए जीव दुःख पाते हैं, अरु जो संसारकी इच्छा करता है, सो नाशरूप है.

हे मुनीश्वर! उन्मत्त हस्ती अरु तुरंगके समूह ऐसा जो रणरूपी समुद्र है तिसको तर जाते हैं; तिसको भी मैं शूर नहीं मानता परंतु जो इंद्रियरूपी समुद्र,तिसमें मनोवृत्ति-रूपी तरंग उठते हैं, ऐसे समुद्रको जो तरजाता है, तिसको शूर मानता हौं. जिसके परिणाममें दुःख होवे, तैसी क्रिया

अज्ञानी जीव आरम्भ करते हैं, और जिसके परिणाममें सुख है, तिसका आरंभ नहीं करता है और कामके अर्थकी धारना करता है, ऐसे आरंभ कियेते शरीरकी शांति और सुखकी प्राप्ति नहीं होती. ऐसेई कामना करके सदा जलते रहते हैं; अनात्म पदार्थकी तृष्णा करते हैं, सो शांतिको कैसे प्राप्त होवें ।

हे मुनीश्वर ! यह तृष्णारूपी नदी है, तिसमें बडा प्रवाह है, तिसके किनारे वैराग्य अरु शंतोष दोनों वृक्ष खडे हैं, सो तृष्णा नदीके प्रवाहते उन दोनोंका नाश होता है. हे मुनीश्वर ! तृष्णा बडी चंचल है, किसीको स्थिर होने नहीं देती. अरु मोहरूपी एक वृक्ष है, तिसके चहूंफेर स्त्रीरूपी वलि है, सो विषकरके पूर्ण है, तिसपर चित्तरूपी भौंरा आय बैठता है तब स्पर्शमात्रते नाश पाता है. जैसे मोरका पुच्छ हिलता रहता है तैसे अज्ञानीका चित्त चंचल चलता है, सो मनुष्य पशु समान है; जैसे पशु दिनको जंगलमें जाय आहार करते चलते फिरते हैं, अरु रात्रिको आय घरमें खूटासों बंधन पाते हैं, तैसे मूर्ख मनुष्यहू दिनको घर छोडके व्यवहारमें फिरते हैं अरु रात्रिको आय अपने घरमें स्थिर होतेहैं ताते परमार्थकी सिद्धि कछु नहीं होती जीवन वृथा गवाँते हैं.

बालक अवस्थामें शून्य रहतेहैं; अरु युवा अवस्थामें काम करि उन्मत्त होते हैं सो काम करके चित्तरूपी उन्मत्त हस्ती स्त्रीरूपी कंदरामें जाय स्थित होते हैं;

सोभी क्षणभंगुर है. बहुरि वृद्धावस्था होतीहै, तिसकर शरीर कृश होजाताहै; जैसे बर्फते कमल जर्जरीभाव को प्राप्त होताहै, तैसे जरा करके शरीर जर्जरी भावको प्राप्त होता है; अरु सब अंग क्षीण होजाता है; अरु एक तृष्णा बढजाती है.

हे मुनीश्वर ! यह पुरुष महापशु है, सो आकाशके फूल लेनेकी इच्छा करताहै, जैसे बडे पर्वतपर चढ कर आकाशका फूल लेनेकी इच्छा करताहै, सो फिर बडी कंदरा अरु वृक्षमें गिर पडताहै, तैसे यह जीव मनुष्यरूपी पर्वतपर आय रहाहै, अरु आकाशके फूलरूपी, जगत्के पदार्थकी इच्छा करताहै, सो नीचेको गिर पडनेकोहै सो राग द्वेषरूपी कंटक वृक्षमें जाय पडेगा हे मुनीश्वर ! जेते कछु जगत्के पदार्थ हैं सो सब आकाशके फूलकीनाई नाशवान्हैं. इनमें आस्था करनी सो मूर्खता है यह तो शब्दमात्र जैसाहै, तिसते अर्थसिद्धि कछु नहीं होती अरु जो ज्ञानवान् पुरुष हैं. तिनको विषय भोगकी इच्छा नहीं रहती, काहेते जो आत्माके प्रकाश कर इनको मिथ्या जानते हैं. हे मुनीश्वर ! ऐसे ज्ञानवान् पुरुष सो दुर्विज्ञेय हैं. हमको तो स्वप्नमेंभी नहीं भासतेहैं. और यह विरक्तात्मा दुर्लभहै जिनको भोगकी इच्छा नहीं है, सर्वदा ब्रह्मकी स्थितिकर भासते हैं ऐसे पुरुष को संसारकी इच्छा कछु नहीं रहती काहेते जो यह पदार्थ सब नाशरूपहैं हे मुनीश्वर ! पर्वतको जिस ओर देखिये तहां पत्थरकर पूर्ण दृष्टि आताहै; अरु

पृथ्वी पूर्ण मृत्तिका करि दृष्टि आती है, अरु वृक्ष काष्ठ-करि पूर्ण दृष्टि आता है; समुद्र जलकर पूर्ण दृष्टि आताहै तैसे शरीर अस्थि, मांसकर पूर्ण भासताहै ये सब पदार्थ पांचतत्त्वकरिपूर्ण हैं और नाशरूप हैं. ऐसा रूप ज्ञानी जानके किसीकी इच्छा नहीं करता.

हे मुनीश्वर ! यह जगत् सब नाशरूप है, देखते देखते नाशको पाता है तिसमें मैं किसका आश्रय करके सुख पाऊँ. जब युगकी सहस्र चौकरी होती हैं, तब ब्रह्माका एक दिन होता है, तिस दिनके क्षय हुएते सब जगत्का प्रलय होताहै; बहुरि ब्रह्माहु कालकर नाश होजाताहै; अरु ब्रह्माहू जितने होगयेहैं. तिनकी संख्या नहीं होती; असंख्य ब्रह्मा नाश होगये हैं तो हम सारिखेकी कहा वार्त्ता करनी है ? हम किसी भोगकी बासना नहीं करते, क्यों जो सब चलरूप है, कछु स्थिर रहनेका नहीं सब नाशरूप है इनकी आस्था मूर्ख करते हैं. तिसके साथ हमको कछु प्रयोजन नहीं जैसे मृग मरुस्थलको देख जल पान करनेको दौ-डता है अरु शांतिको नहीं पाता, तैसे मूर्ख जीव जगत्के पदार्थको सत्य मानकर तृष्णा करते हैं, परन्तु शांतिको नहीं पाते, काहेते कि सब असार-रूप है. अरु–

जो स्त्री, पुत्र, कलत्र भासते हैं, सो जबलग शरीर नष्ट नहीं हुआ तबलग भासते हैं, जब शरीर नष्ट हो जायगा

तब जानिबेमेंभी न आवेंगे कि, कहां गये अरु कहांते आयेथे ? जैसे तेल अरु बत्तीकर दीपक प्रकाशता है तब बडा प्रकाशवान् दृष्ट आता है, पाछे जब बुझजाता है, तब जाना नहीं जाता कि, कहाँ गया, तैसे बत्तीरूप बांधव हैं और तिसविषे स्नेहरूपी तेलहै, तिसकर जो शरीर भासता है सो प्रकाश है जब शरीररूपी दीपकका प्रकाश बुझ जाता है तब जाना नहीं जाता कि कहां गया. हे मुनीश्वर ! यह बंधुका मिलाप है. सो जैसे तीर्थ यात्राका संग चलाजाता होवे. सो सब एक क्षणमें वृक्षकी छाया नीचे बैठते हैं. फिर न्यारे न्यारे होय जाते हैं, तैसा बांधवका मिलाप है. जैसे उस यात्रामें स्नेह करना मूर्खता है. तैसे इनमेंभी स्नेह करना मूर्खता है.

हे मुनीश्वर ! अहंममताकी जेवरीके साथ बांधे हुए घटीयंत्रकी नाईं सब भ्रमते फिरते हैं. तिनको शांति कदाचित् नहीं होती. यह देखने मात्रको चेतन दृष्ट आवता है परंतु पशु और बंदर इनते श्रेष्ठ हैं. जिनकी संमति देह इंद्रियनके साथ बांधी हुई है. अरु आगमा पाई है. इसमें आस्था रखनी सो महामूर्खता है; उनको आत्मपदकी प्राप्ति होनी कठिन है. जैसे पवनकर वृक्षके पात टूटके उड जाते हैं, फिर उनको वृक्षकेसाथ लगना कठिन है, तैसे जो देहादिक साथ बांधे हुए हैं तिसको आत्मपद पाना कठिन है.

हे मुनीश्वर ! जब आत्मपदते विमुख होता है तब जगत्के भ्रमको देखता है; अरु जब आत्मपदकी ओर आता

है, तब संसार इसको बडा बिरस लगता है और ऐसा पदार्थ जगत्में कोई नहीं कि, स्थिर रहैगा. जो कछु पदार्थ हैं सो नाशको प्राप्त होते हैं, ताते मैं किसीकी आस्था करों ? और किसका आश्रय करों ? सब नाशवन्त भासते हैं, वह पदार्थ मुझको कहो, जिसका नाश न होवे.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे सर्वपदार्थाभाव वर्णनं नाम द्वाविंशतितमः सर्गः ॥ २२ ॥

त्रयोविंशतितमः सर्गः २३.

अथ जगद्विपर्ययवर्णनम्.

श्रीराम उवाच, हे मुनीश्वर ! जेता कछु स्थावर जंगम जगत दीखता है, सो सब नाशरूप है कछु भी स्थिर रहनेका नहीं जो खाई थी सो जलकर पूर्ण होगई है, अरु जो बडे जलकर समुद्र पूर्ण दीखते थे, सो खाई रूप है गये अरु जो सुन्दर बडे बगीचे थे सो आकाशकी नाईं शून्य होगये, अरु जो न्य स्थान थे सो सुन्दर वृक्ष हुए बनकर दृष्ट आते हैं. जहां बस्ती थी तहां उजार होगई है, अरु उजारथी तहां बस्ती होगई है; अरु जहां गढेले थे तहां पर्वत होगये हैं; अरु जहां बडे पर्वत थे, तहां समान पृथ्वी होगई है. हे मुनीश्वर ! इस प्रकार पदार्थ देखत विपर्यय हो जाते हैं स्थिर नहीं रहते, बहुरि मैं

किसका आश्रय करों ? अरु किस पावनेका यत्न करों ? यह पदार्थ तो सब नाशरूप हैं. अरु जो बडे बडे ऐश्वर्यकर संपन्न थे, अरु जो बडे कर्त्तव्य करते थे और बडे वीर्यवान बडे तेजवान हुए थे; सो भी मरण मात्र हो गये हैं; तब हम सारिखेकी कहा वार्त्ता है ? सब नाश होते हैं, तब हमको भी घडी पलमें चले जाना है, रहना किसीको नहीं.

हे मुनीश्वर ! यह पदार्थ चञ्चलरूप है, सो एकरस कदाचितहू नहीं रहता; एक क्षणमें कछु होजाता है; दूसरे क्षणमें कछु होजाता है, एक क्षणमें दालिद्री हो जाते हैं, दूसरे क्षणमें संपदावान् हो जाते हैं ! एक क्षणमें जीवते दृष्ट आते हैं. दूसरे क्षणमें मरजाते हैं. एक क्षण मुवे भी जी उठते हैं. इस संसारकी स्थिरता कबहूं नहीं होती. ज्ञानवान इसकी आस्था नहीं करते. एक क्षणमें समुद्रके प्रवाहके ठिकाने मरुस्थल होजाते हैं, अरु मरुस्थलमें जलके प्रवाह होजाते हैं. हे मुनीश्वर ! इस जगतका आभास स्थिर नहीं रहता, जैसे बालकका चित्त स्थिर नहीं रहता, तैसे जगत्का पदार्थ एक भी स्थिर नहीं रहता जैसे नट स्वांगको धरता है; सो कबहूं कैसा; कबहूं कैसा सो एक स्वांगमें नहीं रहता, तैसे जगत्के पदार्थ अरु लक्ष्मी एकरस नहीं रहते; कबहूं पुरुष स्त्री होजाता है, कबहूं स्त्री पुरुष हो जाती है; अरु मनुष्य पशु हो जाता है. पशु मनुष्य हो जाता है; और स्थावरका जंगम, अरु जंगमका

स्थावर हो जाता है. मनुष्य देवता हो जाता है और देवता मनुष्य हो जाता है. इस प्रकार घटी यंत्रकी नाईं जगत्की लक्ष्मी स्थिर नहीं रहती. कबहूँ ऊर्ध्वको जाती है, कबहूँ अधोको जाती है, स्थिर कबहूँ नहीं रहती; सदा भटकती रहती है.

हे मुनीश्वर ! जेते कछु पदार्थ दृष्टिमें आते हैं, सो सब नष्ट हो जानेके हैं. कैसेहू स्थिर रहनेको नहीं ए सब नदियाँ हैं सो सब वडवाग्निमें लय होय जायँगी; तैसे जेते कछु पदार्थ हैं सो सब अभावरूपी वडवाग्निको प्राप्त होवेंगे. अरु बड बलिष्ठहू मेरे देखते लीन होगये हैं; अरु जो बडे सुंदर स्थान सो शून्य हो गये हैं; अरु जो सुंदर ताल, अरु बगीचे मनुष्य करि संपूर्ण ऐसे स्थान सो शून्य हो गये हैं; अरु जो मरुस्थलकी भूमिका सो सुंदरताको प्राप्त भई है. अरु घट पट हो गये हैं; बरके सांप हो जाते हैं; सांपके वर हो जाते हैं. इस प्रकार, हे विप्र ! जो जगत् दृष्टिमें आता है, सो कबहुं सम्पदा, कबहूं आपदा दृष्टिमें आवती है; अरु महा चपल दृष्टि आवते हैं. हे मुनीश्वर ! ऐस सब अस्थिररूप पदार्थ हैं. तिसका विचार विना मैं कैसे आश्रय करों, अरु किसकी इच्छा करों ? सब नाशरूप हैं और—

जो यह सूर्य प्रकाश कर दृष्टिमें आता है, सो भी अंधकाररूप हो जायगा; अरु अमृतकर पूर्ण जो चंद्रमा दृष्टिमें आता है, सोभी शून्य हो जायगा; अरु सुमेरु आदिक जो

पर्वत दृष्टि आते हैं, सो सब नाश होयँगे और सब लोक नाश होजांयगे; ताते हे मुनीश्वर! और किसीकी क्या कहनी है ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, जो जगत्के ईश्वर हैं, सो भी शून्य होजायँगे, तो हम सारिखेकी कहा वार्त्ता कहनी है; जेता कछु जगत् दृष्टि आता है, सो स्त्री, पुत्र, बांधव, ऐश्वर्य, वीर्य, तेज, कारिकै नाना प्रकारके जीव जो भासते हैं, सो सब नाशरूप हैं; बहुरि मैं किस पदार्थका आश्रय करों, और किसकी इच्छा करों.

हे मुनीश्वर! जो पुरुष दीर्घदर्शी हैं तिनको तौ सब पदार्थ विरस हो गये हैं; किसी पदार्थकी इच्छा नहीं करते, काहेते कि, सब पदार्थ नाशरूप भासते हैं और अपनी आयुष्यको बिजुरीके चमत्कारवत् देखते हैं; जैसे बिजुरीका चमत्कार होता है, तैसी शरीरकी आयुष्यहै. जिसको अपनी आयुष्यकी अप्रतीति होती है सो किसीकी इच्छा करते नहीं जैसे किसीको बलिदान अर्थ पालते हैं. तब वह खाने, पीने, भुगतनेकी इच्छा नहीं करता; तैसे जिसको अपना मरना सन्मुख भासता है, तिसको भी किसी पदार्थकी इच्छा नहा रहती; यह सब पदार्थ आपही नाशरूप हैं; तो हम किसका आश्रयकर सुखी होवें? जैसे कोऊ पुरुष समुद्रमें मच्छके आश्रय करके कहे कि, मैं इसपर बैठके समुद्रके पार जाऊँगा, अरु सुखी होऊँगा, सो मूर्खता करके डूबही मरेगा; तैसे जिस पुरुषने इस पदार्थका आश्रय लिया है; अरु अपने सुखके निमित्त जानता है सो नाशको प्राप्त होवेगा.

हे मुनीश्वर ! जो पुरुष जगत्को विचारता रहता है. तिसको यह जगत् रमणीय भासता है अरु रमणीय जानके नाना प्रकारके कर्म करता है अरु जो नाना प्रकारके संकल्प करके जगत्में भटकते हैं; कबहूँ ऊपर, कबहूँ नीचे आते हैं, अरु स्थिर नहीं रहते; तैसे यह जीव भटकते फिरते हैं, स्थिर कबहूं नहीं रहते, अरु जिस पदार्थकी इच्छा करते हैं, सो सब कालका ग्रास रूप होगये हैं; जैसे वनमें अग्नि लगती है, तब सब इंधनादिकको जारती है, तैसे जेते कछु पदार्थ हैं सो सब इंधन रूपी जगत् वन है; तिसको कालरूपी अग्नि लगी है, तिसने सबको ग्रास लिया है; बहुरि जो इस पदार्थकी इच्छा करते हैं सो महामूर्ख हैं; अरु—

जिसको आत्मविचारकी प्राप्ति है; तिसको यह जगत् भ्रम रूप भासता है; अरु जिसको आत्मविचारकी प्राप्ति नहीं है, तिसको यह जगत् रमणीय भासता है; अरु जगतको देखते नाश होजाते हैं स्वप्न पुरीकी नाईं संसारकी मैं कैसे इच्छा करौं ? यह तो दुःखके निमित्त है, जैस मिठाईमें विष मिलाया है, तिसका भोजन करनेवाले मृत्युको प्राप्त होते हैं तैसे विषय भुगतनेवाले नाशको प्राप्त होते हैं-

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे जगद्विपर्यय वर्णनं नाम त्रयोविंशतितमः सर्गः ॥ २३ ॥

चतुर्विंशतितमः सर्गः २४.

अथ सर्वान्तप्रतिपादनवर्णनम्.

राम उवाच, हे मुनीश्वर ! इस संसारमें भोगरूपी अग्नि लगी है तिसकर सब जलते हैं; जैसे तालमें हाथीके पाँवसों कचर कमलका चूर्ण होजाता है. तैसे भोगसों मनुष्य दीन हो जाते हैं. तैसे काम क्रोध दुराचारसों शुभ गुण नष्ट हो जाते हैं जैसे कंटारीके पत्तेमें अरु फलमें कांटे होजाते हैं, तैसे विषयकी वासनारूपी कंटक आय लगते हैं.

हे मुनीश्वर ! यह जगत् सब नाशरूप है किसी पदार्थका स्थिर रहना नहीं है.वासनारूपी जाल,अरु इंद्रियाँरूपी गांठी है तिसमें पुरुष कालसों आय फँसा है सो बड़े दुःखको प्राप्त होवेगा हे मुनीश्वर ! वासनारूपी सूतमें जीवरूपी मोती परोये हुए हैं, अरु मनरूपी नट आय परोय कर चैतन्यरूपी आत्माके गरेमें डारता है जब वासनारूपी तागा टूट परा तब यह भ्रमभी निवृत्त होगया. हे मुनीश्वर ! इसको भोगकी इच्छा है सो बंधनका कारण है भोगकी इच्छा कर भटकता है, शांतिको प्राप्त नहीं होता है, ताते मुझको किसी भोगकी इच्छा नहीं न राज्यकी इच्छा है न घरकी न वनकी इच्छा है, न मरनेका दुःख मानता हों न जीनेकर सुख मानता हों. किसी पदार्थका सुख नहीं, सुख जो होना सो आत्मज्ञानकर होना है

अन्यथा किसी पदार्थकर होता नहीं. जैसे सूर्यके उदय हुए विना अंधकारका नाश नहीं होता, तैसे आत्मज्ञान विना संसारके दुःखका नाश नहीं होता; ताते सोई उपाय मुझको कहो, जिसकर मोहका नाश होवे और मैं सुखी होऊं.

हे मुनीश्वर ! भोगको भुगतनेहारा जो अहंकार है, सो मैंने त्याग दिया है; फिर भोगकी इच्छा कैसी होवे. हे मुनीश्वर ! इस विषयरूप सर्पने जिसको स्पर्श किया है, तिसका नाश होजाता है. अरु सर्प जिसको काटता है. सो एकवेर इसको मार डालता है; अरु विषयरूपी सर्प जिनको काटते हैं सो अनेक जन्म पर्यंत मारतेई चले जाते हैं, ताते परम दुःखका कारण विषय भोग है; याते विषयरूपी परमविष है. अरु वज्र करके शरीरका चूर्ण होना सो भी मैं सहूँगा परन्तु विषयका भुगतना मेरेसों कैसेहूं सहा नहीं जाता. यह मुझको दुःखदायक दृष्टिमें आता है, ताते सोई उपाय मुझको कहो, जिसकर मेरे हृदयसे अज्ञानरूपी अंधकारका नाश होवे, अरु जो न कहोगे तो मैं अपनी छातीपर धीरजरूपी शिला धरके बैठा रहोंगा, परंतु भोगकी इच्छा न करोंगा.

हे मुनीश्वर ! जेते कछु पदार्थ हैं, सो सब नाशरूप हैं; जैसे विजुरीकी चमत्कार होय छिप जाता है, अरु अंजलीमें जल नहीं ठहरता, तैसे विषय भोग अरु आयुष्य नाश हो जाते हैं, ठहरतें नहीं. जैसे कंढीकर मच्छा दुःख

पावती है, तैसे भोगकी तृष्णा कर जीव दुःख पावते हैं ताते मुझको किसी पदार्थकी इच्छा नहीं जैसे किसीने मरीचिकाके जलको सत्य जान जलपानकी इच्छा करी और दौऱ्या सो जल पावत नहीं. ताते मैं किसी पदार्थकी इच्छा नहीं करता.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे सर्वोत्प्रतिपादनं नाम चतुर्विंशतितमः सर्गः ॥ २४ ॥

पंचविंशतितमः सर्गः २५.

अथ वैराग्यप्रयोजनवर्णनम्.

श्रीराम उवाच, हे मुनीश्वर! संसाररूपी गढेलेमें अरु मोहरूपी कीचमें मूर्खका मन गिर जाता है, तिसकर परा दुःख पाता है, शांतवान कबहुं नहीं होता जब जरा अवस्था आती है, तव सर्व शरीर जर्जरीभूत होकर कांपने लगते हैं; जैसे पुरातन वृक्षके पत्र पवनकर हिलते हैं, तैसे जरा अवस्था कर अंग हिलते हैं, अरु तृष्णाकी वृद्धि हो जाती है; जैसे नीमका वृक्ष ज्यों २ वृद्ध होताहै त्यों त्यों कटुता बढती है, तैसे तृष्णा बढती है.

हे मुनीश्वर! जिस पुरुषने देह, इंद्रियादिकनका आश्रय अपने सुख निमित्त लिया है सो मूर्ख संसार रूपी अंधकूपमें गिरता है, निकस नहीं सकता; अरु अज्ञानीका चित्त भोगका त्याग कदाचित् नहीं करता

है. हे मुनीश्वर ! जगत्के पदार्थमें मेरी बुद्धि मलीन होगई है.जैसे वर्षाकालमें नदी मलीन होती है अथवा जैसे मार्गशीर्ष मासमें मंजरी सूखि जाती हैं, तैसे जगत्की शोभा देखत देखत बिरस होजाती है जैसे जगत्का पदार्थ मूर्खको रमणीय भासता है; जैसे पानीका गढेला तृणकरि आच्छादित होता है, अरु मृगके बालक तिस तृणको रमणीय जानकर खाने जाते हैं; फिर गिर जाते हैं. तैसे यह मूर्ख भोगको रमणीय जानि भुगतके गिर परे हैं फिर महादुःख पाते हैं. जैसे मृग मृगतृष्णाकर उडता है, सो सुखी नहीं होता, तैसे यह मृगतृष्णारूप संसारके पदार्थनके ऊपर मनरूपी मृग उडनहारा कैसे सुखी होवे.

हे मुनीश्वर ! जगतके पदार्थनसों मेरी बुद्धि चंचल हो गई है; ताते सोई उपाय कहो, जिसकर पर्वतकी नाईं मेरी बुद्धि निश्चल होवे. सो पद कैसा है ? कि, परमानंदके यत्नमें रहते हैं. अरु निर्भय, निराकार पद जिसके पायेते संसार कछु भी नहीं रहता है, बहुरि पावना कछु नहीं रहता है; तैसे संपूर्ण जगत्की नानाप्रकारकी रचना सब दब जाती है; तिस पद पानेका उपाय मुझको कहो. हे मुनीश्वर ! ऐसे पदते मेरी बुद्धि शून्य है ताते मैं शांतिमान नहा होता. यह संसार अरु संसारके कर्म मोहरूप हैं; इसमें पडे हुए शांतिको प्राप्त नहीं होते. अरु—

जनकादिक संसारमें रहे हुए कमलकी नाईं निर्लेप रहते हैं. तैसे शांतिमान संसारमें निर्लेप रहते हैं. सो जैसे

कोऊ कीचसों पूर्ण होय, अरु कहै कि, मुझको कीचका परश नहीं हुआ, तैसे राजाके विक्षेपरूपी कीचमें परे हुए शांतिमान कैसे निर्लेप रहे हैं, तिसकी समुझ कहा है, सो कृपा कर कहो. अरु तुम जैसे जो संतजन हैं सो विषयको भुगतते दृष्टि आवते हैं अरु जगत्की चेष्टा सब करते हैं; सो निर्लेप कैसे रहते हैं, सो युक्ति कहो. जैसे तुम जल कमलवत् रहते हो सो कहो. यह बुद्धि तो मोह करि मोही जाती है. जैसे तालमें हस्ती प्रवेश करता है और पानी मलीन हो जाता है, तैसे मोह करि बुद्धि मलिन होय जाती है, ताते सोई उपाय कहो. जिसकर बुद्धि निर्मल होवे. यह संतोषमें बुद्धि स्थिर कबहूं नहीं रहती. जैसे मूलसों कुहारे कर काटा. वृक्ष स्थिर नहीं होता, तैसे वासनासों कटी बुद्धि स्थिर नहीं रहती. हे मुनीश्वर ! संसाररूपी विषूचिका मुझको लगी है, ताते सोई उपाय कहो, जिसकर दृश्यका नाश होवे, इसने मुझको बडा दुःख दिया है. अरु आत्मज्ञान कब प्रकाश होय, जिसके उदय हुए मोहरूपी अंधकारका नाश होवे. हे मुनीश्वर ! जैसे बादरसों चंद्रमा आच्छादित होय जाता है, तैसे बुद्धिकी मलिनता कर मैं आच्छादित हुआ हूँ ताते सोई उपाय कहो जिसकर आवरण दूर होवे. अरु जो आत्मानंद हैं, सो नित्य है; जिसके पायेते बहुरि पावना कछु नहीं रहता, इसते संपूर्ण दुःख नष्ट हो जाते हैं. अरु अंतर शीतल हो जाताहै, ऐसा जो पद है,

तिसकी प्राप्तिका उपाय मुझसे कहो. हे मुनीश्वर! आत्मज्ञानरूपी चंद्रमाकी मुझको इच्छाहै, जिसके प्रकाशकर बुद्धिरूपी कमलनी खिल आती है, अरु जिसकी अमृतरूपी किरनकर तृप्त वृत्ति होती है सो कहो. हे मुनीश्वर! अब मुझको गृहमें रहनेकी इच्छा नहीं, अरु वन विषे जानेकी भी इच्छा नहीं; मुझको तो इसी पदकी इच्छा है, जिसके पाये ते भीतर शांति हो जाय.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे वैराग्यप्रयोजन-
वर्णनं नाम पंचविंशतितमः सर्गः ॥ २५ ॥

षड्विंशतितमः सर्गः २६.

अथ अनन्यत्यागवर्णनम्.

श्रीराम उवाच, हे मुनीश्वर! जो जीवनेकी आस्था करते हैं, सो मूर्ख हैं; जैसे पत्रपर जलकी बूंद ठहरती नहीं तैसे आयुष्यहू क्षण भंगुर है. जैसे वर्षाकालमें दर्दुर बोलते हैं तब उनका कंठ चंचल सदा फरकता रहता है, तैसे आयुर्दा छिन छिनमें चंचल हो जाती है. जैसे शिवजीके कपालमें चंद्रमाकी रेखा कछुसी है, तैसा यह शरीर है. हे मुनीश्वर! जिसको इसमें आस्था है, सो महामूर्ख है; यह तो कालका ग्रास ह. जसे बिल्ली चूहे को पकर लेती है, तैसे सबको काल पकर लेता है. जैसे बिल्ली चूहेको संभाल करने नहीं देती, तैसे सबको

काल अचानक ग्रहण कर लेता है, अरु किसीको भासता नहीं.

हे मुनीश्वर ! जब अज्ञानरूपी मेघ आय गर्जता है, तब लोभरूपी मोर प्रसन्न होयके नृत्य करता है. जब अज्ञानरूपी मेघ वर्षा करता है, तब दुःखरूपी मंजरी चढ़ने लगती है; अरु लोभरूपी बिजुरी छिनछिनमें होय होय नष्ट हो जाती है, अरु तृष्णारूपी जालमें फँसे हुए जीवरूपी पक्षी परे दुःख पातेहैं;शांतिकी प्राप्ति नहींहोती.

हे मुनीश्वर ! यह जगत्रूपी वडा रोग लगा है तिसके निवारण करनेका कौनसा पदार्थ है, जो पाने योग्य है; जिसकर भ्रमरूपी रोग निवृत्त होवे, सोई उपाय कहो. यह जगत् मूर्खको रमणीय दीखता है, ऐसे पदार्थ पृथ्वीपर, अरु आकाशमें, अरु देवलोकमें, अरु पातालमें कोऊ नहीं जो ज्ञानवान्को रमणीय दीखें. ज्ञानवान्को सब भ्रमरूप भासतेहैं; अरु अज्ञानी जगत्में आस्था करताहै. हे मुनीश्वर ! चन्द्रमामें जो कलंक है, तिसकर शोभा सुंदर नहीं लगती, जब कलंक दूर होय जाय, तब सुंदर लगे; तैसे मेरे चित्तरूपी चंद्रमामें कामरूपी कलंक लगा है, तिसकर उज्वल नहीं भासता तातें सोई उपाय कहो; जिसकर कलंक दूर होजाय.

हे मुनीश्वर ! यह चित्त बहुत चंचलहै; स्थिर कदाचित् नहीं होता. जैसे अग्निमें डारादिया पारा उडजाता है, तैसे चित्तभी स्थिर नहीं होता; विषयकी तरफ सदा धा-

वता है, ताते सोई उपाय कहो, जिसकर चित्त स्थिर होवे. और संसाररूपी वनमें भोगरूपी सर्प रहतेहैं, सो जीवका दंश करतेहैं, तिनसों बचनेका उपाय कहो; अरु जेती कछु क्रियाहै, सो राग द्वेषके साथ मिली हुई है, ताते सोई उपाय कहो जिसकर राग द्वेपका प्रवेश न होय, तैसे यह ससारमें परेहैं तिसको तृष्णा रूपी जलका परश न होय, ऐसा उपाय कहो; जिसकर इस को राग द्वेषका परश न होय; अरु मनमें जो मननरूपी सत्ताहै, सो युक्तिसों दूर होती है अन्यथा दूर नहीं होती. सो निवृत्तिके अर्थ आप मेरेको युक्ति कहो; और आगे जिसको जिस प्रकार निवृत्ति हुई है, सो कहो, अरु जिसप्रकार तुम्हारे अंतरमें शीतलता हुई है, सो कहो. हे मुनीश्वर ! जैसे तुम जानते हो सो कहो, अरु जो तुम्हारे विद्यमान यह युक्ति नहीं पाई, तब मैं तो कछु नहीं जानता. तो मैं सब त्यागकर निर अहंकार होय रहोंगा जबलग वह युक्ति मुझको न प्राप्त होवेगी तबलग मैं भोजन नहीं करूँगा, अरु जलपानभी नहीं करूँगा. अरु स्नानादिक क्रियाभी नहीं करूंगा. संपदाका कार्यभी नहीं करूंगा, और आपदाका कार्यभी नहीं करूंगा निर अहंकार होऊंगा. और ये न मेरी देहहै, और न मैं देहही सब त्याग करके बैठि रहोंगा. जैसे कागजके ऊपर मूर्ति चित्रित होती है, तैसे होय रहोंगा. श्वास आते जाते आपही क्षीण होय जायँगे जैसे तेल विना दीपक बुझता

है, तैसे अर्थ विन देह होय जायगा तब महाशांतिको प्राप्त होऊंगा.

वाल्मीकि उवाच, हे भारद्वाज ! ऐसे कहि करि रामजी चुप होय रहे. जैसे बडे मेघको देखके मोर शब्द करके चुप होजाता है.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे अनन्यत्याग दर्शनं नाम षड्विंशतितमः सर्गः ॥ २६ ॥

सप्तविंशतितमः सर्गः २७.

अथ देवसमाजवर्णनम्.

वाल्मीकि उवाच, हे पुत्र ! जब इस प्रकार रघुवंशरूपी आकाशके रामचंद्ररूपी चन्द्रमा बोले, तब सबही मौन होगये, अरु सबके रोम खडे हो आय, मानो रोमहू खडे होकर रामजीके वचन सुनते हैं, अरु जेते कछु सभामें बैठेथे, सो सब निर्वासनारूपी अमृतके समुद्रमें मग्न होगये. वशिष्ठ, वामदेव, विश्वामित्र, आदि जो मुनीश्वरथे और जेते दृष्टि आदिक जो मंत्री थे और राजा दशरथ अरु जेते मंडलेश्वरथे, और जेते नौकर चाकर थे और माता कौशल्या आदिक सब मौन होगये. अर्थ यह तो अचल होगये अरु पिंजरेमें पक्षी जोथे सोभी मौनहो-गये अरु बगीचेमें पशु आदिथे; सोभी मौन होगये अरु चारा तृण खात रहिगये. अरु जो पक्षी आलयमें बैठे थे;

सो भी सुनकर मौन होगये; अरु आकाशके पक्षी जो निकट थे सो भी स्थिर होगये; अरु आकाशमें देव, सिद्ध, गंधर्व, विद्याधर किन्नरथे; सो भी आय सुनने लगे; अरु फूलोंकी वर्षा करने लगे; सब धन्य धन्य शब्द करनेलगे. और फूलोंकी वर्षाभई सो मानो बर्फकी वर्षा होती है; अरु क्षीरसमुद्रके तरंग उछलते आवते होयँ. अरु मोतीकी मालाकी वृष्टि आवत होय; और जैसे माखनके पिंड उड़ते होयँ. इस प्रकार आधी घडी पर्यंत फूलनकी वर्षा भई, अरु बडी सुगंध आयपसरी; अरु फूलोंपर भौंरे फिरने लगे और बडा विलास तिस कालमें होरहा अरु नमोनमः शब्द करने लगे.

देव उवाच; हे कमलनयन रघुवंशी आकाशमें चंद्रमारूप आप रामजी! तुम धन्य हो. तुमने बडे श्रेष्ठस्थान देखे हैं अरु बहुत प्रकारके वचन सुने हैं; याते जैसे आप वचन कहे हैं ऐसे वचन कबहुं नहीं सुने; इस वचन सुनके हमारा जो देवताका अभिमान था सो सब निवृत्तभया है. अमृतरूपी वचन सुनकर हमारी बुद्धि पूर्ण होगई है. हे रामजी! जैसे वचन तुमने कहे हैं; ऐसे वचन बृहस्पतिहू कहनेको समर्थ नहीं, तुम्हारे वचन परमानन्दके करनहारे हैं; ताते तुम धन्य हो.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे देवसमाजवर्णनं नाम सप्तविंशतितमः सर्गः ॥ २७ ॥

अष्टाविंशतितमः सर्गः २८.

अथ मुनिसमाजवर्णनम्.

वाल्मीकिरुवाच, हे भरद्वाज ! ऐसे वचन देवता कहके विचार करत भये. रघुवंशका कुल पूजने योग्य है; तिसमें रामजी बडे उदार वचन मुनीश्वरके विद्यमान कहे हैं; अब जो मुनीश्वरका उत्तर होयगा, सो भी श्रवण किया चाहिये. जैसे फूलके ऊपर भौंरा स्थिर होते हैं, तैसे व्यास, नारद, पुलह, पुलस्त्य, आदि सब साधु सभामें आय स्थिर भये; तब वशिष्ठ, विश्वामित्र आदि मुनीश्वर उठके खडे हुये, अरु तिनकी पूजा करने लगे. प्रथम पूजा राजा दशरथने करी, फिर नानाप्रकारसों सबने उनकी पूजा करी और यथायोग्य आसनके ऊपर बैठे सो कैसे हैं?जो नारद बहुत सुंदर मूर्त्ति वारे हाथमें वीणालेयके बैठे अरु श्याममूर्ति व्यास आय बैठे और नाना प्रकारके रंगसों रंजित वस्त्र पहिरे हुए, मानों तारामें महा श्याम घटा आई है. ऐसे अरु दुर्वासा, वामदेव, पुलह, पुलस्त्य, अरु बृहस्पतिके पिता अँगिरा, अरु भृगु और मैं भी तहां था; और ब्रह्मर्षि, राजर्षि, देवर्षि, देवता, मुनीश्वर सब आयके सभामें स्थिर हुए. किसीके बड़ीजटा है; कोई मुकुट पहरे; किसीने रुद्राक्षकी माला पहरी है; किसीने मोतीकी माला पहरी है. किसीके कंठमें रत्नकी माला है; और हाथमें कमंडलु, मृगछाला किसीके महा सुन्दर वस्त्र; ऐसे बडे तपस्वी

आयके बैठे. तामें कोई राजसी स्वभावके, कोई सात्त्विक-स्वभावके; ऐसे बडे बडे आये; अरु सब विद्वान् वद पढनहारे प्राप्त हुए. और किसीका सूर्यवत्, किसीका चन्द्रवत्, किसीका तारावत् ऐसे बडे प्रकाशवाले पुरुषार्थ पर यत्न करनेहारे सो यथायोग्य आसन पर स्थिर भये; और मोहनी मूर्त्ति रामजी अरु दीन स्वभाववारे हाथ जोरके सभामें बैठे. तिनकी सब पूजा करत भये, कहते हैं कि, हे रामजी ! तुम धन्य हो ! और नारद सबके विद्यमान कहत भये कि; हे रामजी ! तुमने बडे विवेक अरु वैराग्यके वचन कहे सो सबको प्यारे लगे. सबके कल्याण करनेहारे हैं और परम बोधके कारण हैं. हे रामजी ! तुम बडे बुद्धिमान् उदारात्मा दृष्टि आवते हो; अरु महा वाक्यका अर्थ तुमते प्रगट होता है. ऐसा उज्ज्वल पात्र साधुमें और अनन्त तपस्वियोंमें कोई एक होते हैं.अरु जेते कछु मनुष्य हैं सो सब पशु जैसे दृष्टिमें आवते हैं. क्योंकि, जिसको संसार समुद्रके पार होनेकी इच्छा है और जो पुरुषार्थ पर यत्न करते हैं, सोई मनुष्य हैं. हे साधो ! वृक्ष तो बहुत होतेहैं; परंतु चंदनका वृक्ष कोई होता है तैसे शरीरधारी बहुत हैं; परंतु ऐसा कोई होता है; और सब अस्थि मांसके पुतरे साथ मिले हुये भटकते फिरते हैं; सो जैसी यंत्रीकी पुतरी होती है, तैसे अज्ञानी जीव हैं; और हस्ती तो ब त हैं; परंतु जिसके मस्तकमेंसे मोती निकसता है, सो विरला है. तैसे मनुष्य

तो बहुत हैं, परंतु पुरुपार्थपर यत्न करने हारे कोई होते हैं. ऐसे पात्रको थोरा अर्थ कहाभी बहुत हो जाता है; जैसे तेलकी बूंद थोरी जलमें डारी विस्तारको पाती है; तैसे थोरे वचन सों आपके हियेमें बहुत होते हैं; आपकी बुद्धि बहुत विशेप है; अरु दीपक जैसी प्रकाशवारी है; अरु बोधका परमपात्र हैं; और कहने मात्रते आपको शीघ्र ज्ञान होवेगा, अरु हमारे विद्यमान आपको ज्ञान होवेगा. ऐसा निश्चय करि जानना.

- इति श्रीयोगवाशिष्ठे वैराग्यप्रकरणे - मुनिसमाजवर्णनं नाम अष्टाविंशतितमः सर्गः ॥ २८ ॥

इति

योगवासिष्ठे

वैराग्य-प्रकरण समाप्तम् ।

परमात्मनेनमः ।

अथ श्रीयोगवासिष्ठे-

मुमुक्षुप्रकरणप्रारंभः ॥ २ ॥

प्रथमःसर्गः १.

अथ शुकनिर्वाणवर्णनम्.

वाल्मीकि उवाच, हे साधो ! यह जो वचन हैं सो परमानंदरूप हैं, अरु कल्याणके कर्त्ता हैं. इसमें श्रवणकी प्रीति तब उपजती है; जब अनेक जन्मके बडे पुण्य आय इकट्ठे होते हैं; जैसे कल्पवृक्षके फलको बड़े पुण्यसों पाते हैं; तैसे जिसके बडे पुण्य कर्म इकट्ठे आय होते हैं. तिसकी प्रीति इन वचनोंके श्रवणम होतीहै; अन्यथा प्राप्ति नहीं होती ये वचन परम बोधके कारण हैं. हे भारद्वाज ! इस प्रकार जब नारदजी कहा तब विश्वामित्रजीने बोले.

विश्वामित्र उवाच, हे ज्ञानवानोंमें श्रेष्ठ रामजी ! जेता कछु जानने योग्यथा सो तुमने जाना है, इसते जानना और नहीं रहा. अरु तिसमें विश्राम पावने निमित्त कछुक मार्जन करना है, जसे अशुद्ध आदर्शकी मलिनता दूर करी

होय, तव मुख स्पष्ट भासता है तैसे कछु उपदेशकी तुझ को अपेक्षा है. हे रामजी ! तेरे जैसा भगवान् व्यासजीका पुत्र शुकदेवजी भया है, सोभी बडा बुद्धिमान् था; तिसनें जो जानने योग्यथा सो जाना है. अरु विश्रामके निमित्त तिसको भी अपेक्षा थी सो विश्रामको पाय शांतिमान् भये हैं.

राम उवाच, हे भगवान् ! शुकजी कैसा बुद्धिमान् अरु ज्ञानवान् थे; अरु कैसी विश्रामकी अपेक्षा थी; फिर कैसे विश्रामको पावत भये ? सो कृपा करिके कहो.

विश्वामित्र उवाच. हे रामजी ! अंजनके पर्वतकी नाईं जिनका आकार है, ऐसे जो भगवान् व्यासजी ये स्वर्णके सिंहासन पर राजा दशरथके पास बैठे हैं अरु सूर्यकी नाईं प्रकाशमान् जिनकी कांति है. तिनके पुत्र शुकजी सो सब शास्त्रके वेत्ताथे. सत्यको सत्य जानतेथे असत्यको असत्य जानते थे, सो शांतिरूप और परमानंद-रूप आत्मामें विश्राम न पावते भये तब उनको विकल्प उठा कि, जिसको मैं जाना है, सो न होवेगा. काहेतें कि, मुझको आनंद नहीं भासता है सो संशयको धरके एक कालमें व्यासजी सुमेरु पर्वतकी कंदरामें बैठेथे, तिनके निकट आयकर कहत भये. हे भगवन् ! यह संसार सब भ्रमात्मक कहांसे भया है; वाकी निवृत्ति कैसे होयगी और आगे कोईको इसकी निवृति भई है सो कहो.

हे रामजी ! इस प्रकार जब शुकजीने कहा, तब विद्वत् वेद शिरोमणि जो वेदव्यासजी हैं, सो तत्काल उपदेश करते

भये. तव शुकजीने कहा—हे भगवन् ! जो कछु तुम कहो हो, सो तो मैं आगेसों जानता हों, इसकर मुझको शांति प्राप्त नहीं होती.

हे रामजी ! जब इस प्रकार शुकजीने कहा तब सर्वज्ञ जो वेदव्यासजी हैं, सो विचार करतभये कि, मेरे वचनकर इसको शांति प्राप्त न होवेगी. क्योंकि, अब पिता पुत्रका संबंध भासताहै; ऐसे विचार करके व्यासजी कहते भये—हे पुत्र ! मैं सर्व तत्त्वज्ञ नहीं तू राजा जनकके निकट जावे, वे सर्व तत्त्वज्ञहैं अरु शान्तात्माहैं, उनसों तेरा मोह निवृत्ति होवेगा.

हे रामजी ! जब इसप्रकार व्यासजीने कहा तब शुक-देवजी वहांसों चले; तब जो मिथिला नगरी राजा जन-ककी थी; तिसमें आयकर राजा जनकके द्वारपैं स्थिर भये. तब ज्येष्टीने जायकर राजा जनकको कहा कि व्यासजीके पुत्र कजी आय खडे हैं; तब राजाने जाना कि; इसको जिज्ञासा है, तव कहा खडा रहो, तब खडेई रहे. इसी प्रकार ज्येष्टी जाय कहा, तब सात दिन खडे रहत बीत गये, तब राजाने फिर पूँछा शुकजी खडे हैं कि चलते रहेहैं ? तब ज्येष्टीने कहा खडे हैं. तब राजाने कहा आगे ले आओ; तब आगे ले आये; उस दरवज्जेपै भी सात दिन खडे रहे. बहुरि राजाने पूँछा कि शुकजी हैं ? तब ज्येष्टीने कहा कि, खडे हैं तब राजाने कहा अंतःपुरमें ले आओ. उसको नाना प्रकारके भोग भुगताओ. तब अंतःपुरमें

लेगये, वहाँ स्त्रियनके पास सात दिन खडे रहे, तब राजाने ज्येष्ठीसे पूछा कि तिसकी दशा कैसी है और आगे कहा दशाथी ? तब ज्येष्ठीने कहा जो आगे निरादर करके न शोकवान हुवाथा, अरु अब भोगकर न प्रसन्न हुआ है; इष्ट अनिष्टमें समान है. जैसे मंद पवनकरके मेरु चलायमान नहीं होवे, तैसे यह बडे भोगका निरादरकर चलायमान नहीं भये. जैसे पपैयेको मेघके जल विना नदी, ताल, आदिक जलक इच्छा नहीं होती, तैसे उसको किसी पदार्थकी इच्छा नहीं. तब राजाने कहा इहाँ ले आओ; तब सो लेआये.

जब शुकजी आये, तब राजा जनकने उठके खडे हो प्रणाम किया. फिर, दोऊ बैठ गये, तब राजाने कहा कि, हे मुनीश्वर ! तुम किस निमित्त आये हो; तुमको कहा वांछा है ? सो कहो, किसकी प्राप्ति मैं करदेऊं.

श्रीशुकउवाच, हे गुरु ! यह संसारका आडंबर कैसे उत्पन्न हुआ है; फिर कैसे शांत होवेगा, सो तुम कहो. विश्वामित्रउवाच, हे रामजी ! जब इस प्रकार शुकदेवजीने कहा तब राजा जनकने यथाशास्त्र उपदेश जो कछु व्यासजीने कहा था, सोई कहा बहुरि शुकजीन कहा— हे भगवन्, जो कछु तुम कहोहो, सोई मेरा पिताजी कहताथा,अरु सोई शास्त्र कहता है और विचारसों मैं भी ऐसा जानताहों कि, यह संसार अपने चित्तम उत्पन्न होताहै अरु चित्तका निर्वेद हुए भ्रमकी निवृत्ति होती है फिर विश्राम मुझको नहीं प्राप्त होताहै.

जनक वाच; हेमुनीश्वर ! जो कछु मैंने कहा है; अरु जो तुम जानतेहो, इससे और उपाय कछु है, ऐसा जानना नहीं, अरु कहनाभी नहीं यह संसार चित्तके संवेदनकर हुआ है. जब चित्त फुरनेते रहित होता है, तब भ्रमनिवृत्त होजाता है; अरु आत्मतत्त्व नित्य शुद्ध है; अरु परमानंद स्वरूप है केवल चैतन्य है तिसका अभ्यास करैगा तब तू विश्रामको पावेगा; अरु तू मुक्ति स्वरूप है. काहेते कि, तेरा यत्न आत्माकी ओर है, दृश्यकी ओर नहीं, ताते तू बडा उदारात्माहै. हे मुनीश्वर ! तू मोको व्यासते अधिक जान मेरे पास आयाहै; और तू मेरे तेभी अधिक है; काहेते कि, हमारी चेष्टा बाहिरते दृष्ट आवती है और तुम्हारी चेष्टा बाहरते कछुभी नहीं अरु अंतरते हमारी कछुभी नहीं.

विश्वामित्र उवाच, हे रामजी ! जब इस प्रकार राजा जनकने कहा, तब शुकजी निःसंग, निःप्रयत्न निर्भय होकर चले. सुमेरु पर्वतकी कंदरामें जाय निर्विकल्प समाधि दश सहस्र वर्ष ताईं करी. बहुरि निर्वाण होगये जैसे तेल विना दीपक निर्वाण होजाता है, तैसे निर्वाण होगये, जैसे समुद्रमें बूंद लीन होजाता है. जैसे सूर्यका प्रकाश संध्याकालमें सूर्यके पास लीन होजाता है, तैसे कलनारूप कलंकको त्यागकर ब्रह्मपदको प्राप्त भये.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे शुकनिर्वाण-
वर्णनं नाम प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥

द्वितीयः सर्गः २.

अथ विश्वामित्रोपदेशवर्णनम्.

विश्वामित्रउवाच, हे राजा दशरथ! जैसे शुकजी शुद्ध बुद्धिवारे थे, तैसे रामजी भी हैं. जैसे शांतिके निमित्त उसका कछुक मार्जन कर्त्तव्यथा, तैसे रामजीको विश्रामके निमित्त कछुक मार्जन चाहिये; काहेते कि, आवरण करनहारे भोग हैं; सो इच्छा तिनते निवृत्ति भई हैं; अरु जो कछु जानवे योग्य था सो जाना है अब हमको कछुक युक्ति करनी है. तिस करके उसको, विश्राम होवेगा. जैसे शुकजीको थोडेसे मार्जन करके शांतिकी प्राप्ति भई थी, तैसे इनको भी होवेगी.

हे राजन्! अब रामजीकों भोगकी इच्छा स्पर्श नहीं करती. जैसे ज्ञानवान्को अध्यात्मिक आदि दुःख स्पर्श न हीं करते, तैसे रामजीको भोगकी इच्छा स्पर्श नहीं करती, भोगकी इच्छा सबकों दीन करती है. इसकाही नाम बन्धन है. अब भोंगकी वासनाका क्षय करना इसका ही नाम मोक्ष है. ज्यों ज्यों भोगकी इच्छा करता है, त्यों त्यों लघु हो जाता है; अरु ज्यों ज्यों भोगकी वासना क्षय होती है, त्यों त्यों गरिष्ठ होता है. जबलग इसको आत्मानन्द प्रकाश नहीं होता; तबलग विषयकी वासना दूर नहीं होती; जब आत्मानन्द प्राप्त होता है, तब विषय वासना कोई न हीं रहती. जैसे मरुस्थलमें लताकी उत्पत्ति नहीं होती, तसे ज्ञानवानको विषयवासनाकी उत्पत्ति नहीं होती.

हे साधो ! ज्ञानवान् जो विषय भोगका त्याग करता है, सो किसी फलकी इच्छा करके नहीं करता; स्वभाव तेंई ज्ञानवान्की विषयवासना उठजाती है. जैसे सूर्यके उदय हुए अन्धकारका अभाव हो जाता है; तैसे रामजीको अब किसी भोग पदार्थकी इच्छा रही नहीं. अब विदित् वेद हुआ है, अब आप विश्रामकी इच्छा चाहता है; ताते जो कहो सोई करो, जिसकर विश्रामवान् होय.

हे राजन् ! यह जो भगवान् वशिष्ठजी हैं, इनकी युक्ति करके शांत होवेगा; अरु आगे भी सोई रघुवंश कुलके गुरु हैं; इनके उपदेशद्वारा आगे भी रघुवंशी ज्ञानवान् भये हैं. जो सर्वज्ञ हैं, अरु साक्षीरूप हैं; और त्रिकालज्ञ हैं और ज्ञानके सूर्य हैं, इनके उपदेशकर रामजी आत्मपदको प्राप्त होवेगा.

हे वशिष्ठजी ! वह ब्रह्माका उपदेश तुम्हारे स्मर्णमें है क्योंकि, जब तुम्हारा हमारा विरोध हुआ था, तब उपदेश किया. और जो सब ऋषीश्वर अरु वृक्ष कारि पूर्ण है, ऐसा जो मन्दराचल पर्वतमें आयकर ब्रह्माजीने संसार वासनाके नाश निमित्त उपदेश किया था, अरु तुम्हारा हमारा विरोध था, तिसके निमित्त अरु और जीवके कल्याण निमित्त जो उपदेश किया था; अब वही उपदेश तुम रामजीको करो, यह भी निर्मल ज्ञानपात्र हैं. अरु ज्ञान भी वही है; अरु विज्ञान भी वही है, अरु निर्मल युक्ति वही है कि, शुद्ध पात्रमें अर्पण होवे; अरु पात्र

बिना उपदेश नहीं सुहाता है, अरु जिसमें शिष्यभाव न होवै, अरु विरक्तता न होवे, ऐसा जो अपात्र मूर्ख होवे, तिसको उपदेश करना व्यर्थ है. अरु जो विरक्त होवे, अरु शिष्य भावना न होवे, तऊभी उपदेश नहीं करना; अरु दोनों करि संपन्न होवे तब करना. पात्र विना उपदेश व्यर्थ होता है. अर्थ यह कि; अपवित्र हो जाता है. जैसे गौका दूध महापवित्र है, परन्तु श्वानकी त्वचा में डारिये तब वह अपवित्र हो जाता है, तैसे अपात्रको उपदेश करना व्यर्थ है. हे मुनीश्वर ! जो शिष्य वैराग्य करि संपन्न होता है, अरु उदार आत्मा है, सो तुम्हारे उपदेशके योग्य है. तुम कैसे हो; कि वीतराग हो, भय अरु क्रोधते रहित हो; परम शांतिरूप हो, सो तुम्हारे उपदेशका पात्र रामजी है.

वाल्मीकि उवाच, इसप्रकार जब विश्वामित्रने कहा तब नारद अरु व्यासादिकनने साधो, साधो, करके कहा. अर्थ यह कि, भला,भला,कहा. ऐसेई यथार्थ है तब राजा दशरथके पास बहुत प्रकारके साधु बैठे हुए थे.

वशिष्ठ उवाच, ब्रह्माजीके पुत्र वशिष्ठजीने तिनसे कहा कि-हे मुनीश्वर ! जो कछु तुमने आज्ञा करी है, सो हमने मानी है. ऐसा समर्थ कोऊ नहीं,जो संतकी आज्ञा निवारण करै. हे साधो ! जेते कछु राजा दशरथके पुत्र हैं; तिन सबके हृदयमें जो अज्ञानरूपी तम है सो मैं ज्ञानरूपी सूर्यकर निवारण करोंगा; जैसेसूर्यके प्रकाशकर अंधकार

दूर होताहै. हे मुनीश्वर ! जो कछु ब्रह्माजीने उपदेश किया था, सो मुझको अखंड स्मरण है, सोई उपदेश करौंगा. जिसकर रामजी निःसंशय पदको प्राप्त होवेगा.

वाल्मीकि उवाच, इस प्रकार वशिष्ठजीने विश्वामित्रसे कहा ताके अनंतर मोक्षका उपाय सब रामजीको कहत भया.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे विश्वामित्रो-
पदेशो नाम द्वितीयः सर्गः ॥२॥

तृतीयः सर्गः ३.

अथ असंख्यसृष्टिप्रतिपादनवर्णनम्.

वशिष्ठ उवाच, हे रामजी ! जो कछु कमलज जो ब्रह्माजी, तिसने मुझको जीवके कल्याण निमित्त उपदेश किया है, सो भलेप्रकार मेरे सुमिरणमें आता है, सो अब तुमको कहता हों.

श्रीराम उवाच, हे भगवन् ! कछुक प्रश्न करनेका अवसर आया है, अब एक संशयको दूर करो. मोक्ष उपाय जो कहते हो, सो सब तुम कहोगे, परंतु यह जो तुमने कहा कि, शुकदेवजी विदेहमुक्त होगये; तो भगवान् व्यासजी जो सर्वज्ञ हैं, सो विदेहमुक्त क्यों न हुए.

वशिष्ठ उवाच, हे रामजी ! जैसे सूर्य किरणसों त्रसरेणु उडती देख परती है, तिनकी संख्या कछु नहीं होती, तैसे परम सूर्यके संवेदनरूपी किरणमें त्रिलोकी

रूपी त्रसरेणु है; सो असंख्य हैं; और अनंत होकर मिट जाते हैं; अरु और अनंत होते हैं; और अनंत त्रिलोकी ब्रह्म समुद्रमें होवेंगे; तिसकी संख्या कछु नहीं.

श्रीराम उवाच, हे भगवन् ! जो आगे व्यतीत होगये हैं और जो आगे होवेंगे, तिनकी संख्या केती है अरु वर्त्तमानको तो जानता हों.

वशिष्ठ उवाच, हे रामजी ! अनंत कोटि त्रिलोकीके गण उपजे हैं, अरु मिटगये हैं, अरु कई होवे हैं; अरु कई होवेंगे, गिननेकी संख्या कछु नहीं. काहेते कि, जीव असंख्य हैं, अरु जीव जीव प्रति अपनी अपनी सृष्टि है. जब यह जीव मृतक हो जाते हैं तब उसी स्थानमें अपने अंतवाहक संकल्परूपी पुरविषे इसका बांधव भास आता है. अरु इसी स्थानमें परलोक भास आता है. पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश पंचभूत भासता है, अरु नानाप्रकारकी वासनाके अनुसार अपनी अपनी सृष्टि भास आतीहै, बहुरि जब वहाँते मृतक होता है तब वही सृष्टि भास आती है नाम रूप संयुक्त वही जाग्रत् सत्य होकर भास आती है. बहुरि जब वहाँते मरता है, तब इस पंचभूत सृष्टिका अभाव होजाता है और अपर भासती है. अरु तहांके जो जीव होतेहैं, तिनको भी इसी प्रकार अनुभव होता है; इसी प्रकार एक एक जीवकी सृष्टि होती है, अरु मिटजाती है, तिसकी संख्या कछु नहीं, तब ब्रह्माकी सृष्टिकी संख्या कैसे होवे ?

जैसे पुरुष फेर लेताहै, अरु तिसको सब पदार्थ भ्रमते दृष्टि आवतेहैं, अरु जैसे नौकामें बैठे हुए नदी तटके वृक्ष चलते दृष्टि आते हैं, जैसे नेत्रके दोषकर आकाशमें मोती की माला दृष्टि आती है. जैसे स्वप्नेमें सृष्टि भासती है, तैसे जीवको भ्रम करके यह लोक परलोक भासताहै वास्तवते जगत् कछु उपजाई नहीं, एक अद्वैत परमात्मतत्त्व अपने आपविषे स्थितहै, तिसविषे द्वैत भ्रम अविद्या करके भासता है, जैसे बालकको अपने परछैयामें वैताल भासता है, अरु भयको पाताहै, तैसे अज्ञानीको अपनी कल्पना जगत्रूप हो भासती है.

हे रामजी ! यह व्यासदेव बत्तीस बेर मेरे देखनेमें आया है, तिसमें दशतो एक आकार रूप है; अरु एकही जैसी क्रिया; अरु एकही जैसे निश्चय हुआ है ? अरु अपर दश समानहीं सम हुए हैं. अरु बारे विलक्षण आकार, विलक्षण क्रिया चेष्टावारे हुए हैं जैसे समुद्रमें तरंग होते हैं, तामें कई सम अरु कई विलक्षण उपजते हैं. तैसे व्यास हुए है; अरु सम जो दश हुए हैं तिनमें दश व्यास यही हैं; अरु आगे भी अष्टबेर यही होवेगा बहुरि महाभारत कहेगा. बहुरि नौमी बेर ब्रह्मा होकर विदेहमुक्त होवेगा; अरु हमभी होवेंगे अरु वाल्मीकिभी होवेगा अरु भृगुभी होवेगा, अरु बृहस्पतिका पिता अंगिराभी होवेगा; इत्यादिक और भी होवेंगे.

हे रामजी ! एक सम होते हैं, एक विलक्षण होते हैं; अरु मनुष्य, देवता, तिर्यंगादिक जीव कई बेर समान होते हैं; कई बेर विलक्षण होते हैं. कई जीव समान आकार आगे जैसे कुल क्रिया सहित होते हैं; अरु कई संकल्प कर उडते फिरते हैं. आवना, जावना, जीवना, मरना, स्वप्न भ्रमकी नाई दीखता है. अरु वास्तवते कोऊ आता है; न जाता है; न जन्मता है, न मरता है. यह भ्रम अज्ञानसों कर भासता है; विचार कियेते कछु निकसता नहीं जैसे कदलीका स्तंभ देखनेमें बडा पुष्ट आता है, फिर खोल देखो तो सार कछु नहीं निकलता; तैसे जगत् भ्रम अविचार करके सिद्ध है; विचार कियेते कछु भासता नहीं.

हे रामजी ! जो पुरुष आत्मसत्तामें जागा है, तिसको द्वैत भ्रम नहीं भासता है; वह आत्मदर्शी, सदा शांत आत्मा परमानन्द स्वरूप है; अरु सब कलनाते रहित है. ऐसे जीवन्मुक्तको कोई चलाय नहीं सकता. ऐसे जो व्यास-देवजी हैं, तिसको सदेह मुक्ति, अरु विदेह मुक्तिकी कोऊ कलना नहीं सदा अद्वैत रूप है. हे रामजी ! जीवन्मुक्तको सब सर्वात्मा पूर्ण भासता है; अरु स्वस्वरूप भासता है. स्व-रूपसार शांतिरूप अमृत करि पूर्ण है; अरु निवार्णमें स्थित है,

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे असंख्यसृष्टि प्रतिपादनो नाम तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥

चतुर्थः सर्गः ४.

अथ पुरुषार्थोपक्रमवर्णनम्.

वशिष्ठ उवाच, हे रामजी! जीवन्मुक्ति अरु विदेह मुक्तिमें भेद कछु नहीं. जैसे स्थिर जल है, तो भी जल है; अरु तरंग फिरते हैं? तौ भी जल है, तैसे जीवन्मुक्ति अरु विदेह मुक्तिमें भेद कछु नहीं. हे रामजी! जीवन्मुक्ति अरु विदेह मुक्तिका अनुभव तुझको प्रत्यक्ष नहीं भासता. काहेते जो स्वसंवेद्य है; अरु तिनमें जो भेद भासता है; सो असम्यग्दर्शीको भासता है, ज्ञानवानको भेद कछु नहीं भासता है. जेते वायुस्पंद रूप होता है तौ भी वायु है; अरु निष्पंदरूप होता है तौ भी वायु है; उसके वायेते निश्चय विषे भेद कछु नहीं. पर अपर जीवको स्पंद होती है, तो भासती है, अरु निष्पंद होती है, तो नहीं भासती है; तैसे ज्ञानवान् पुरुषको जीवन्मुक्ति अरु विदेह मुक्तिमें भेद कछु नहीं. वह सदा अद्वैत कलनाते रहित है. जब जीवको उसका शरीर भासता है, तब जीवन्मुक्ति कहते हैं. जब शरीर अदृश्य होता है, तब विदेह मुक्ति कहते हैं, अरु उसको दोनों तुल्य हैं.

हे रामजी! अब प्रकृत प्रसंगको सुन—जो श्रवणका भूषण है—जो कछु सिद्ध होता है सो अपने पुरुषार्थ कर सिद्ध होता है, पुरुषार्थ बिन सिद्ध कछु नहीं होता. और कहते हैं जो दैव करैगा सो होवेगा सो मूर्खता है. यह

चन्द्रमा हृदयको शीतल अरु उल्लासकर्त्ता भासता है, सो इसमें शीतलता पुरुषार्थ कर हुई है. हे रामजी ! जिस अर्थकी प्रार्थना करै, अरु यत्न करै, अरु तिसमें फिरै नहीं तो अवश्य कर जरूर पाता है और पुरुष प्रयत्न किसका नाम है, सो श्रवण कर. संतजन अरु सत्य शास्त्रके उपदेश रूप उपाय कर तिसके अनुसार चित्तका विचरना होय सो पुरुषमें यत्न है; तिससे इतर जो चेष्टा करता है, तिसका नाम उन्मत्त चेष्टा है, अरु जिस निमित्त यत्न करता है सोई पावता है. एक जीव था, सो पुरुषार्थपर यत्न करते अपुन इंद्रकी पदवी पाई; त्रिलोकीका पतिहोय सिंहासनपर आरूढ हुआ.

हे रामचंद्र ! आत्मतत्त्वमें जो चैतन्य स्पंद, इस स्पंदरूप होकर स्फूर्ति है, सो अपने पुरुषार्थ कर ब्रह्माके पदको प्राप्त भई है ताते देख. जिसको कछु सिद्धता प्राप्त हुई सो अपने पुरुषार्थ कर हुई है. केवल चैतन्य जो आत्मतत्त्व है, तिसमें चित्त संवेदन यही स्पंद रूप है. यह चैतन्य संवेदन अपने पुरुषार्थ करके गरुडपर आरूढ होय विष्णुरूप होता है, अरु यह चैतन्य संवेदन अपने पुरुषार्थ करके रुद्ररूप भया है, अरु अर्द्धाङ्गमें पार्वतीको धर रहा है, अरु मस्तकमें चंद्रमाको धरा है. अरु नीलकंठ परम शांतरूप है, ताते जो कछु सिद्ध होता है सो पुरुषार्थ कर होता है.

हे रामजी! पुरुषार्थ करके सुमेरुका चूरण किया चाहै तौभी कर सकता है. जैसे पूर्व दिनमें दुष्कृत किया होय, अरु अगले दिनमें सुकृत करै, तब दुष्कृत दूर हो जाता है. जो अपने हाथ द्वारा चरणामृत भी ले नहीं सकता, अरु पुरुषार्थ करै तो वही पृथ्वी खंड खंड करनेको समर्थ होता है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे पुरुषार्थोपक्रमो नाम चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥

पंचमः सर्गः ५.

अथ पुरुषार्थवर्णनम्.

वशिष्ठ उवाच, हे रामजी! जो चित्त कछु वांछा करता है, अरु शास्त्रके अनुसार पुरुषार्थ नहीं करता सो सुखको न पावेगा; उसकी उन्मत्त चेष्टा है, अरु पुरुषार्थ भी दो प्रकारका है, एक शास्त्र अनुसार है; एक शास्त्र विरुद्ध है, जो शास्त्रको त्याग करि अपनी इच्छाके अनुसार विचरता है सो सिद्धताको न पावेगा. अरु जो शास्त्रके अनुसार पुरुषार्थ करता है, सो सिद्धताको प्राप्त होवेगा; अरु दुःख भी न होवेगा. अनुभवते स्मर्ण होता है, अरु स्मरणते अनुभव होता है, सो दोनों इसहीते होते हैं दैव तो कछु न हुआ.

हे रामजी! और दैव कोई नहीं, इसका किया इसको प्राप्त होता है. परंतु जो बलिष्ठ होता है, सो तिसके

अनुसार विचरता है. जो पूर्वके संस्कार बली होते हैं तो उसकी जय होती है, अरु जो विद्यमान पुरुषार्थ बली होता है, तब उसको जीति लेते हैं. जैसे एक पुरुषके दो बेटे हैं अरु जो तिनको लड़ावता है तो दोनों विषे जो बली होता है, तिसकी जय होती है, परन्तु दोनों उसके हैं तैसे दोनों कर्म इसके हैं, जो पूर्वका संस्कार बली होता है. तो इसकी जय होती है.

हे रामजी ! यह जो सत्संग करता है, अरु सत् शास्त्र हूका बिचार करता है; बहुरि पक्षीकी नाईं संसार वृक्षहूकी ओर उडता है, तो पूर्वका संस्कार बली है तिस करि स्थिर हो नहीं सकता, ऐसे जानकर तैं पुरुष प्रयत्नका त्याग नहीं करना; जो पूर्वके संस्कारते अन्यथा नहीं होता। पूर्वका संस्कार बलीभी होवे, परंतु जब सत्संग करे अरु सत् शास्त्रहूका दृढ अभ्यास होवे तो पूर्वके संस्कारको पुरुष प्रयत्न जीत लेताहै;जैसे पूर्वके संस्कारमें दुष्कृत किया है, आगे सुकृत किया है तो अगलेका अभाव होजाताहै; सो पुरुषप्रयत्न होता है. सो पुरुषार्थ क्या है अरु तिसकर सिद्ध क्या होता है ? सो श्रवण करके ज्ञानवान् जो संत हैं अरु सतशास्त्र जो ब्रह्मविद्या है; तिसके अनुसार प्रयत्न करना; तिसका नाम पुरुपार्थ है. अरु पुरुषार्थ करके पावने योग्य आत्मा है जिसकरि संसार समुद्रसे पार होवे.

हे रामजी ! जो कछु सिद्ध होता है सो अपने पुरुषार्थ करि होता है; अपर देव कोऊ नहीं, अरु जो शास्त्रके

अनुसार पुरुषार्थको त्याग करि कहता है, जो जो कछु करना है; सो देव करेगा, सो मनुष्य गर्दभ है. तिसका संग न करना, उसकी संगति करनी सो दुःखका कारण है. इस पुरुषको प्रथम तो यह कर्त्तव्य है—कि, अपने वर्णाश्रम विषे शुभ आचारको ग्रहण करना, अरु अशुभक त्याग करना; बहुरि संतका संग, अरु सत्शास्त्रका विचारना; और तिसके विचार कर अपने गुण दोषहूका विचार करना; कि दिन अरु रात्रिमें शुभ क्या करता हों अरु अशुभ क्या करता हों. आगे गुण अरु दोषहूका साक्षीभूत होकर जो संतोष, धीरज, वैराग्य, विचार, अरु अभ्यास गुण हैं तिसका बढावना अरु जो दोष विपरीत हैं, तिनका त्याग करना. जब ऐसे पुरुषार्थको अंगीकार करैगा, तब परमानंदरूप आत्मतत्त्वको प्राप्त होवेगा. ताते—

हे रामजी ! बनके घायल हुए मृगकी नाईं नहीं होना जो घास, तृण, पातको रसीला जानके परा चुगता है, तैसे स्त्री, पुत्र, बांधव, धनादिक विषे मग्न हो रहना, सो नहीं होना, इनते विरक्त होना. दंतहु साथ दंतहूको चबाय करि संसार समुद्रको पार होनेका यत्न करना. अरु बलते बंधनको तोड करि निकस जाना. जैसे केसरी सिंह बल करके पींजरेमेंते निकस जाता है तैसे निकस जाना, सोई पुरुषार्थ है.

हे रामजी ! जिसको कछु सिद्धताकी प्राप्ति हुई है. सो अपने पुरुषार्थकर हुई है, पुरुषार्थ बिना नहीं होती, जैसे

प्रकाश विन पदार्थका ज्ञान नहीं होता जिस पुरुषने अपना पुरुषार्थ त्याग दियाहै- अरु दैवके आश्रय हुएहैं, कि हमारा दैव कल्याण करैगा, सो न होवेगा. जैसे पत्थरसों तेल निकासाचाहै, सो नहीं निकलता, तैसे उनका कल्याण दैवते न होवेगा- हे रामजी ! तुम तो दैवका आश्रय त्याग कर अपने पुरुषार्थका आश्रय करो.

जिसने अपना पुरुषार्थ त्यागाहै, तिसको सुंदर कांति, लक्ष्मी त्याग जातीहै. जैसे वसंतऋतुकी मंजरी वसंतऋतुके गये तें बिरस होजातीहै. तैसे उनकी कांति लघु होजातीहै. जिस पुरुषने ऐसे निश्चय कियाहै कि, हमारा पालनेहारा दैवहै, सो पुरुष ऐसाहै, जैसे कोई अपनी भुजाको सर्प जानके भय पायके दौरतेहैं, और जानते नहीं कि, अपनी भुजाहै; तैसे अपने पुरुषार्थ को त्यागके दैवका आश्रय लेताहै. अरु भयको पाता है.

पुरुषार्थ नाम इसकाहै-कि, संतहूका संग अरु सत्शास्त्रोंका विचार करके तिनके अनुसार विचरना अरु जो तिनको त्यागके अपनी इच्छाके अनुसार विचरते हैं. सो सुखको नहीं पावेंगे, न सिद्धताको पावेंगे. अरु जो शास्त्रके अनुसार विचरतेहैं. सो यहांभी सुख पावेंगे, अरु आगेभी सुख पावेंगे तैसेई सिद्धताका पावेंगे, ताते संसाररूपी जाल विषे नहीं गिरना, सो पुरुषार्थ है. संतजनहूके संग अरु सत् शास्त्रके अर्थ हृदयरूपी पत्रपै लिखना, बोधरूपी कानी करनी अरु विचाररूपी स्याही करनी जब ऐसे पुरुषार्थ करि लिखैगा, तब संसाररूपी जालमें न गिरैगा.

हे रामजी ! जैसे यह आदिनेति हुई है, जो पटहै सो पटही है, जो घटहै, घटही है, घट है सो पट नहीं. और पट है सो घट नहीं. तैसे यहभी नेति हुई है अपने पुरुषार्थ विना परमपदकी प्राप्ति नहीं होती.

हे रामजी ! जो संतहूकी संगति करता है, अरु सतशास्त्रभी विचारता है. अरु उनके अर्थमें पुरुषार्थ नहीं करता तिसकरि सिद्धता प्राप्त नहीं होती. जैसे अमृतके निकटई बैठा होवे, अरु पान किये बिना अमर नहीं होता. तैसे अभ्यास किये बिना सिद्धता प्राप्त नहीं होती.

हे रामजी ! अज्ञानी जीव अपना जन्म व्यर्थ खोवते हैं. जब बालक होते हैं; तब मूढ अवस्थामें लीन रहते हैं, अरु युवा अवस्थामें विकारहूको सेवते हैं; अरु जरामें जर्जरीभूत होते हैं, इसी प्रकार जीवना व्यर्थ खोवतेहैं अरु जो अपना पुरुषार्थ त्याग करके दैवका आश्रय लेताहै, सो अपने हंता होतेहैं, सुखको नहीं पावेंगे हे रामजी ! जो पुरुष व्यवहार विषे अरु परमार्थविषे आलसी हुए हैं, अरु परमार्थको त्यागके मूढ होरहे हैं, सो दीन हुएहैं. मानो पशुहैं अरु दुःखको प्राप्त हुएहैं; यह मैंने विचार करके देखाहै; ताते पुरुषार्थका आश्रय करो. सतसंग अरु सत शास्त्ररूपी आदर्श करके, अपने गुण करके दोषको देखके दोषका त्यागकरो. अरु शास्त्रका सिद्धांत जो है तिसका अभ्यास करो. जब दृढ अभ्यास करोगे, तब शीघ्रही आनन्दवान् होगे.

वाल्मीकि उवाच, जब इस प्रकार वशिष्ठजीने कहा, तब सायंकालका समय हुआ; सब स्नानके निमित्त उठके खडे भये और परस्पर नमस्कार करके अपने अपने घरको गये बहुरि सूर्यकी किरणन साथ आय स्थित भये.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे पुरुपार्थ वर्णनो नाम पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥

षष्ठः सर्गः ६.

अथ परमपुरुषार्थवर्णनम्.

वशिष्ठ उवाच, हे रामजी ! इसका जो पूर्वका किया पुरुपार्थ है, तिसका नाम दैव है, और दैव कोऊ नहीं. जब यह सत्संग अरु सतशास्त्रका विचार पुरुषार्थ करै तब पूर्वके संस्कारको जीत लेता है. जिस पुरुष इष्ट पाहनेका यह शास्त्रद्वारा यत्न करैगा; तिसको अवश्यमेव अपने पुरुषार्थते पावेगा; अन्यथा कछु नहीं होती, न हुई है, न होवेगी. पूर्व जो कोऊ पाप किया होता है, तिसका फल जब दुःख पावता है तब मूर्ख कहाता है, कि हाय दैव, हाय दैव, हाय कष्ट, हाय कष्ट.

हे रामजी ! इसका जो पुरुषार्थ पूर्वका है, तिसका नाम दव है, और दैव कोऊ नहीं और जो कोऊ दैव कलपते हैं, सो मूर्ख हैं. अरु जो पूर्वके जन्म सुकृत करके आया होता ह; वही सुकृत सुख होयके दिखाई देता है. जो पूर्वका

सुकृत बली होता है तो उसहीकी जय होती है. जो पूर्वका दुष्कृत बली होता है, अरु शुभका पुरुपार्थ करता है; सत्संग अरु सतशास्त्रहूका विचार श्रवण करता है, तो पूर्वके संस्कारको जीत लेता है. जैसे प्रथम दिन पाप किया होवे, दूसरे दिन बडा पुण्य करै, तो पूर्वका पाप निवृत्त हो जाता है; तैसे जब यहां दृढ पुरुपार्थ करै, तो पूर्वके संस्कारको जीत लेता है. ताते जो कछु सिद्ध होता है, सो इसको पुरुपार्थ करके सिद्ध होता है कि, एकत्र भाव करि प्रयत्न करना, इसीका नाम पुरुपार्थ है. जिसका यत्न एकत्र भाव होयके करेगा तिसको अवश्यमेव प्राप्त होवेगा. जो पुरुप अपर दैवको जानके अपना पुरुषार्थ त्याग बैठा है, सो दुःखको पावेगा; शांतिवान कबहूं न होवेगा.

हे रामजी! मिथ्या दैवके अर्थको त्यागके तुम अपने पुरुषार्थका अंगीकार करो. जो संतजन अरु शतशास्त्रहूके वचन अरु युक्ति साथ, यत्न करके आत्मपदको अभ्यास करके प्राप्त होना, इसीका नाम पुरुषार्थ है. प्रकाश करके जैसे पदार्थहूका ज्ञान होता है, तैसे पुरुषार्थ कर आत्मपदकी प्राप्ति होती है. जो पूर्वके कियेसे बडा पापी होता है; अरु इहां दृढ पुरुषार्थ कियेते उसको जीत लेता है. जैसे बडा मेघ होता है, अरु तिसका पवन नाश करता है. अरु जैसे वर्ष दिनहूका क्षेत्र पक्का होता है, अरु बर्फ तिसका नाश कर देता है; तैसें पूर्वका संस्कार पुरुष प्रयत्न करकें नाश होता है.

हे रामजी! श्रेष्ठ पुरुष सोई है, जाने सत्संग अरु सतशास्त्र द्वारा बुद्धिको तीक्ष्ण करके संसार समुद्र तरवेका पुरुषार्थ किया है. अरु जिनने सत्संग अरु सतशास्त्रद्वारा बुद्धि तीक्ष्ण नहीं करी, अरु पुरुषार्थको त्याग बैठे हैं, सो पुरुष नीचते नीच गतिको पावेंगे. अरु जो श्रेष्ठ पुरुष हैं, सो अपने पुरुषार्थ करके परमानंद पदको पावैंगे जिसके पायेते बहुरि दुःख नहीं होता. अरु जो देखने करि दीन होते हैं; अरु सत्संगति अरु सतशास्त्रके अनुसार पुरुषार्थ करते हैं, सो उत्तम पदवीको प्राप्त होते दृष्टि आवते हैं. हे रामजी! जिस पुरुषने पुरुष प्रयत्न किया है, तिसको सब संपदा आय प्राप्त होती हैं, अरु परमानंद करि पूर्ण हो रहतेहैं. जैसे रत्नहूकरि समुद्र पूर्ण है तैसे वह परमानंद करके पूर्ण हुए हैं. ताते जो श्रेष्ठ पुरुष हैं, सो अपने पुरुषार्थ द्वारा संसारके बंधनते निकस जाते हैं. जैसे केसरी सिंह अपने बलसों पिंजरेते निकस जाता है, तैसे वह अपने पुरुषार्थ करि संसार बंधनते निकस जाता है.

हे रामजी! यह पुरुष और कछु न करै तब करै कि, अपने वर्णाश्रमके अनुसार विचरै, अरु सार पुरुषार्थ करै; जो संतहू अरु शास्त्रहूका आश्रय होवे तिसके अनुसार पुरुषार्थ करे; तब सब बंधनते मुक्त होवेगा अरु जो अपने पुरुषार्थ त्याग किया है; किसी और देवको मानके कहता है कि, वह मेरा कल्याण करैगा; सो जन्म मरणको प्राप्त होवेगा. हे रामजी! इस जीवको

संसाररूपी विपूचिका रोग है, तिसको दूर करनेका उपाय मैं कहता हों. संतजन अरु सतशास्त्रहूके अर्थ विपे दृढ भावना करनी; जो कछु तिनहूते सुना है, तिसका वारंवार अभ्यास करना; और सब कल्पना त्यागके एकांत होयके तिसका चिंतन करना, तब इसको परमपदकी प्राप्ति होवेगी; अरु द्वैत भ्रम निवृत्त हो जावेगा. अद्वैतरूप पडा भासेगा; इसकाही नाम पुरुपार्थ है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे परमपुरुपार्थ वर्णनं नाम षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥

सप्तमः सर्गः ७.

अथ पुरुपार्थउपमावर्णनम्.

वशिष्ठ उवाच, हे रामजी ! अन्य पुरुपार्थ करके इसको अध्यात्मक आदि ताप आय प्राप्त होते हैं; तिसकारि शांतिको नहीं पाता. तुम रोगी नहीं होना. अपने पुरुपार्थ द्वारा जन्म मरणके बंधनते मुक्त होवो और कोई दैव मुक्ति नहीं करनेका; अपने पुरुपार्थ द्वारा संसार बंधनते मुक्त होना है. जिस पुरुपने अपने पुरुपार्थका त्याग किया है, अरु किसी और दैवको मानि कारि तिसमें परायण हुआ है, तिसका धर्म, अर्थ काम, नष्ट हो जावेगा. अरु नीचते नीच गतिको प्राप्त होवेगा.

रामजी ! शु[illegible] जो इसका अपना आपहै, अरु वास्तवरूप है तिसके आश्रय जो आदि चित्त संवेदन

स्फूर्ति है; जो अहंमम संवेदन होयके फुरने लगती है, बहुरि इंद्रिय अहं स्फूर्त्ति है. जब यह स्फुर्ना संत अरु शास्त्रके अनुसार होवे, तब वह पुरुष परमशुद्धताको प्राप्त होता है अरु जो संत और शास्त्रके अनुसार न होवे, तब वासनाके अनुसार भाव अभाव रूप जो भ्रम जाल है; तिसविषे परा घटीयंत्रकी नाईं भटकता है, शांतिवान् कबहूँ नहीं होता.

हे रामजी ! जिस किसीको सिद्धता प्राप्त हुई है, सो अपने पुरुषार्थकर हुई है; बिन पुरुषार्थ सिद्धताको प्राप्त न होवेगा. जब किसी पदार्थको ग्रहण करना होता है; तब भुजा पसारिये तो ग्रहण करना होता है; अरु जो किसी देशको प्राप्त होना होवे, सो जब चले तब जाय पहुँचिये, अन्यथा नहीं होता; ताते पुरुषार्थ बिना सिद्ध कछु नहीं होता. जो कोऊ कहता है, दैव करैगा सो होवेगा सो मूर्ख है. हे रामजी ! और दैव कोऊ नहीं इस पुरुषार्थका नाम दैव है. यह दैव शब्द मूर्खहू का परचावा है; जो किसी कष्ट साथ दुःख पाया; तिसको कहते हैं, दैवका किया है सो और तो दैव कोऊ नहीं.

हे रामचंद्र ! जो अपना पुरुषार्थ त्यागके दैवके आश्रय होरहेगा, सो सिद्धताको प्राप्त न होवेगा, काहेते कि, अपने पुरुषार्थ बिना सिद्धता किसीको प्राप्त नहीं होती. अरु बृहस्पतिने जो दृढ पुरुषार्थ किया है तब सब देवताओंके राजा इंद्रका गुरु हुआ है. अरु शुक्रजी अपने पुरुषार्थ

द्वारा सर्व दैत्योंका गुरु हुआ है; अरु अवर जो समान जीव हैं तिन विपे जिस पुरुपने प्रयत्न किया है सो पुरुष उत्तम हुआहै-जिसको जाते सिद्धता प्राप्त भई है; सो अपने पुरुपार्थ कारि भई है; अरु जिस पुरुपने संत अरु शास्त्रनके अनुसार पुरुपार्थ नहीं किया, सो मेरे देखते देखते बडे राजा, अरु प्रजा. धनते और विभूतिते क्षीण हो गये है; अरु नरकहू विपे परे जलते हैं जिस करके कछु अर्थ सिद्धि होवे तिसका नाम पुरुपार्थ है, अरु जिस करके अनर्थ सिद्धि होवे; तिसका नाम अपुरुपार्थ है.

हे रामजी ! इस पुरुपको कर्तव्य यही है कि, सतशास्त्र अरु संतहूका संगकारि बुद्धि तीक्ष्णकरै, अरु शुभगुणको पुष्ट करै दया, धीरज, संतोप, वैराग्यके अभ्यास करके बुद्धि तीक्ष्णकरै. अरु तीक्ष्ण बुद्धि करके इनको पुष्ट करै. जैसे वडे तालमें मेघ पुष्ट होता है, बहुरि वर्षा करके मेघ तालको पुष्ट करता है. तैसे शुभ गुण करके बुद्धि पुष्ट होती है अरु पुष्ट बुद्धि कारि शुभगुण पुष्ट होते हैं.

हे रामजी ! जो बालक अवस्थाते लेकारि अभ्यास किया होता है. उसको शुद्धता प्राप्त होती है. अर्थ यह कि, दृढ अभ्यास बिना शुद्धता प्राप्त नहीं होती है. जो किसी देश अथवा तीर्थ जाना होवे तब मार्गविषे निरआलस होके चला जावे तो जाय पहुँचेगा. अरु जब भोजन करैगा तब क्षुधा निवृत्त होवेगी, अन्यथा नहीं होवेगी. अरु जब मुख विषे जिह्वा शुद्ध होवेगी तब पाठ स्पष्ट होवेगा; गूंगासों

पाठ नहीं होता. ताते जो कछु कार्य सिद्ध होता है, सो अपने पुरुषार्थ कर सिद्ध होता है,तूष्णीं हो रहनेते कोई कार्य सिद्ध नहीं होता. अरु सबही गुरु बैठे हैं, इनहूते पूंछ देखो, आगे जो तेरी इच्छा हो सो कर. अरु जो मुझसों पूछे तो सब शास्त्रका सिद्धांत कहता हों, जिस करि सिद्धताको प्राप्त होवेगा.

हे रामजी ! संत जोहैं, ज्ञानवान् पुरुष, अरु सतशास्त्र जो है, ब्रह्मविद्या, तिनके अनुसार संवेदन अरु मन अरु इंद्रियोंका विचारना होवे; अरु इससे विरुद्ध होवे तिससे वर्ज्य रखना; तिस करके तुझको संसारका राग द्वेष स्पर्श नहीं करेगा; सबसे निर्लेप रहैगा जैसे जलते कमल निर्लेप रहता है, तैसे तू निर्लेप रहैगा.

हे रामजी ! जिस पुरुषते शांति प्राप्तहोवे, तिसकी भली प्रकार सेवा करिये काहेते कि, उसका बडा उपकार है; जो संसार समुद्रते निकासिलेताहै. हे रामजी ! संत जनभी वही हैं, अरु सतशास्त्रभी वही हैं; जिनके विचार करि अरु संगति करि संसारते चित्त उपरति होवे, मोक्षका उपाय वही है; ताते और सब कल्पनाको त्यागके अपने पुरुषार्थ को अंगीकार करो, तब जन्म मरणका भय निवृत्त होजावे.

हे रामजी ! जब यह वांछा करताहै अरु तिसके निमित्त दृढ पुरुषार्थ करता है; तब अवश्यमेव तिसको पावे अरु जो बडे तेज अरु विभूति करके संपन्न तुझको दृष्टि आते हैं अरु सुनता है; सो अपने पुरुषार्थ करि भये हैं. अरु जो

महानिष्ट सर्प कीट आदिक तुझको दृष्टि आते हैं, तिनने अपने पुरुपार्थका त्याग कियाहै; तब ऐसे हुए हैं.

हे रामजी! अपने पुरुपार्थको आश्रयकर; नहीं तो सर्प कीटादिक नीच योनिको प्राप्त होवेगा. जिस पुरुपने अपना पुरुपार्थ त्यागा है और किसी दैवका आश्रय धरा है; सो महामूर्ख है. काहेते कि, यह वार्त्ता व्यवहारमेंभी प्रसिद्ध है कि, अपने उद्यम किये बिना किसी पदार्थकी प्राप्ति नहीं होती; तो परमार्थकी प्राप्ति कैसे होवे? ताते दैवको त्याग करि संतजन अरु सतशास्त्रोंके अनुसार यत्न करो परमपद पानेके निमित्त जो दुःखनते मुक्त होवे. हे रामजी! जो जनार्दन विष्णु जी हैं सो अवतार धर कर दैत्यहूको मारताहै, अरु अपर चेष्टा भी करता है, परंतु पापका स्पर्श उसको नहीं होता. काहेते जो अपने पुरुषार्थ करके अक्षय पदको प्राप्त हुआहै, तुम भी पुरुषार्थका आश्रय करो, अरु संसार समुद्रको तरिजावो.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे पुरुषार्थउपमा वर्णनं नाम सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥

अष्टमः सर्गः ८.

अथ परमपुरुषार्थवर्णनम्.

वशिष्ठ उवाच, हे रामजी! यह जो दैव शब्द है सो मूर्खोंने कल्पा है, कि दैव हमारी रक्षा करैगा, हमको दैव का आकार कोऊ दृष्टि नहीं आवता, न कोऊ दैवका काल

है, न दैव कछु करताही है मूर्ख लोग दैव दैव परे कहते हैं, अपर दैव कोऊ नहीं. इसका पूर्वका कर्म ही दैव है.

हे रामजी ! जिन पुरुषोंने अपनें पुरुषार्थका त्याग किया है; अरु दैव परायण हुए हैं कि, दैव हमारा कल्याण करैगा, सो मूर्ख हैं. काहेते जो अग्नि विषे यह जाय पडे, अरु दैव इसको निकासि लेवे; तब जानिये कि, कोऊ दैव भी है, सो तो है नहीं. अरु जो दैव करता है, तो यह स्नान, दान, भोजन, आदिहूका त्याग करि तूष्णीं होय बैठे; आपही दैव कर जावैगा; सो भी इसके किये विना नहीं होता; ताते और दैव कोऊ नहीं अपना पुरुषार्थ ही कल्याण कर्त्ता है.

हे रामजी ! जो इसका किया कछु नहीं होता, अरु दैवही करने हारा होता; तो शास्त्र अरु गुरुका उपदेशभी नहीं होता. सो सतशास्त्रके उपदेश करके अपने पुरुषार्थद्वारा इसको वांछित पदकी प्राप्ति होती है; ताते और जो कोऊ दैव शब्द है, सो व्यर्थ है; इस भ्रमको त्याग करके संत अरु शास्त्रहूके अनुसार पुरुषार्थ करै तब दुःखनते मुक्त होवेगा. हे रामजी ! और दैव कोऊ नहीं इसका पुरुषार्थ जो है स्पंद, सोई दैव है.

हे रामजी ! जो कोऊ और दैव करने हारा होता तो जब उस शरीरको त्यागता है, अरु शरीर जब नाश होजाता है; क्रिया शरीरसों कछु नहीं होती काहेते जो चेष्टा करनेहारा त्याग जाता है तब दैव होता तो

सभी शरीरसों चेष्टा करावता सो तो चेष्टा कछु नहीं होती, ताते जानना कि, दैव शब्द व्यर्थ है. हे रामजी ! पुरुषार्थकी वार्ता है, सो अज्ञानी जीवोंको भी प्रत्यक्ष है कि, अपने पुरुषार्थ बिना कछु होता नहीं. गोपाल भी जानता है जो मैं गौवोंको चराऊँ नहीं तो भूखी ही रहेंगी. ताते और दैवके आश्रय बैठि नहीं रहता आपही चराय ले आवता है.

हे रामजी ! और दैवकी कल्पना भ्रम करके परे करते हैं, अपर दैव तो हमको कोऊ दृष्टि नहीं आवता. हस्त, पाद, शरीर, दैवका कोऊ दृष्टि नहीं आवता. अपने पुरुपार्थ करि सिद्धता दृष्टि आती है. अरु जो कोऊ, आकारते रहित दैव कल्पिये तो नहीं बनता, काहेते कि, निराकार अरु साकारका संयोग कैसे होवे ? हे रामजी ! और दैव कोऊ नहीं, अपना पुरुपार्थ दैवरूप है. जो राजा ऋद्धि, सिद्धि, संयुक्त भासता है, सो भी अपने पुरुपार्थ करि हुए हैं.

हे रामजी ! यह जो विश्वामित्र है, याने दैव शब्द दूरहीते त्याग किया है; सो भी अपने पुरुषार्थ करके क्षत्रियते ब्राह्मण हुए हैं; अरु अपर जो बडे विभूतिवान हुए हैं, सो भी अपने पुरुपार्थ करि दृष्टि आवते हैं. हे रामजी ! जो दैव पढे बिना पंडित करै तौ जानिये दैवने किया सो तो पढे बिना पंडित कहूँ नहीं होता, अरु जो अज्ञानीते ज्ञानवान होते हैं, सो भी अपने पुरुषार्थ करि होते हैं, ताते

अपर दैव कोऊ नहीं. मिथ्या भ्रमको त्याग करि, संतजन अरु सतशास्त्रहूके अनुसार संसार समुद्र तरनेका प्रयत्न करो; तेरे पुरुषार्थ बिना अपर दैव कोऊ नहीं. जो अपर दैव होता तो बहुत बेर क्रिया बल भी. अपनी क्रियाको त्यागके सोई रहता, आप दैवही पडा करैगा, सो ऐसे तो कोऊ नहीं करता; ताते अपने पुरुषार्थ बिना कछु सिद्ध नहीं होता. अरु जो इसका किया कछु न होता तो पाप करने हारे नरक न जाते, अरु पुण्य करनेहारे स्वर्ग न जाते; परन्तु पाप करनेहारे नरकमें जाते हैं, अरु पुण्य करनेहारे स्वर्गमें जाते हैं, ताते सो कछु प्राप्त होता है, सो अपने पुरुषार्थ करि होता है.

हे रामजी ! जो कोऊ अपर दैव करता है, ऐसा कहै तिसका शिर काटिये; अरु दैवके आश्रय जीवता रहै तो जानिये कि, कोऊ दैव है, सो तो जीवता कोऊ रहता नहीं ताते दैव शब्दको मिथ्या भ्रम जानके संतजन अरु सत-शास्त्रहूके अनुसार अपने पुरुषार्थ करि आत्मपद विषे स्थित होवो.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे परमपुरुषार्थ वर्णनं नाम अष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

नवमः सर्गः ९.

अथ परमपुरुषार्थवर्णनम्.

राम उवाच ! हे भगवन् ! सर्व धर्म वेत्ता ! तुम कहते हो कि, और दैव कोई नहीं, परन्तु ब्राह्मण भी दैव है ऐसा

कहते हैं; और दैवका किया सब कछु होता है, अरु सुख दुःखका देनेहारा दैव है, यह लोकविषे प्रसिद्ध है.

वसिष्ठ उवाच, हे रामजी! मैं तुझको ऐसे कहता हों, जो तेरा भ्रम निवृत्त होजावे; इसहीका कर्म किया हुआ है, शुभ अथवा अशुभ तिसका फल अवश्यमेव भोगना है, सो दैव कहो, पुरुषार्थ कहो, अपर दैव कोऊ नहीं. अरु कर्त्ता, क्रिया, कर्म आदिकहू विषे तो दैव कोऊ नहीं. और कोऊ दैवका स्थान नहीं रूप नहीं, तो अपर दैव क्या कहिये. हे रामजी! मूर्खहूके परचावने निमित्त दैव शब्द कहा है. जैसे आकाश शून्य है. तैसे दैवभी शून्य है.

राम उवाच, हें भगवन्! सर्व धर्महूके वेत्ता! तुम कहते हो कि, अपर दैव कोऊ नहीं, सो आकाशकी नाईं शून्य है, सो तुम्हारे कहने परभी दैव सिद्ध होता है तुम कहते हो कि, इसके पुरुषार्थका नाम दैवहै. अरु जगत् विषे भी दैव शब्द प्रसिद्ध है.

वसिष्ठ उवाच, हे रामजी! मैं ऐसे तुझको कहता हों. जिस करि दैव शब्द तेरे हृदयसों उठि जावे. अर्थ यह कि, शून्य होजावे. दैव नाम अपनें पुरुषार्थका है. अरु पुरुषार्थ नाम कर्मका अरु कर्म नाम वासनाका है; वासना मनते होती है. अरु मनरूपी पुरुष है. जिसकी वासना करता है, सोई इसकों प्राप्त होता है. जो गांवको प्राप्ति होनेकी वासना करताहै, सो गांवको प्राप्त होता है; जो पत्तनकी वासना करताहै, सो पत्तनको प्राप्त होता है;

ताते अपर दैव कोऊ नहीं. पूर्वका जो शुभ अथवा अशुभ दृढ पुरुषार्थ किया तिसका परिणाम सुख दुःख अवश्य होता है और तिसीकाही नाम दैव है.

हे रामजी! तुम विचारकर देखो कि, अपना पुरुषार्थ कर्महूतें भिन्ननहीं तो सुख दुःख देनहारा अरु लेनहारा दैव कोऊ नहीं हुआ. क्योंकि यह जो पापकी वासना करताहै अरु शास्त्र विरुद्ध कर्म करता है, सो किसकरके करताहै? पूर्वका जो इसका दृढ पुरुषार्थ कर्म तिसकरके यह पाप करताहै; अरु जो पूर्वका पुण्यकर्म किया होता है तो यह शुभ मार्ग विषे विचरता है.

राम उवाच, हे भगवन्! जो पूर्वकी दृढ वासनाके अनुसार यह विचारताहै कि, मैं क्या करूं? मुझको पूर्व की वासनाने दीन कियाहै; अब मुझको क्या कर्तव्य है?

वसिष्ठ उवाच,हे रामजी! जो कुछ इसकी पूर्वकीवासना दृढ होरहीहै; तिसके अनुसार यह विचारणा होता है; अरु जो श्रेष्ठ मनुष्य है, सो अपने पुरुषार्थ करके पूर्वके मलिन संस्कारको शुद्ध करता है तिसके मल दूर हो जाते हैं, शतशास्त्र अरु ज्ञानहूके वचन अनुसार दृढ पुरुषार्थ करो, तब मलीन वासना दूर हो जावेगी.

हे रामजी! पूर्वके मलीन कर्म कैसे जानिये, अरु शुभ कर्म कैसे जानिये; सो श्रवण करिये जो चित्त विषयकी ओर धावै, अरु शास्त्र विरुद्ध मार्ग की ओर जावे अरु शुभकी ओर न धावे, तो जानिये कि, पूर्वका कर्म कोई

मलीनहै; अरु जो संतजन अरु सतशास्त्रहूके अनुसार चेष्टाकरै, अरु संसार मार्गते विरक्त होवे, तब जानिये कि पूर्वका कर्म शुद्धहै. ताते हे रामजी! तुमको दोनों करके सिद्धताहै; जो पूर्वका संस्कार शुद्धहै. ताते तेरा चित्त शीघ्रही सत्संग अरु सतशास्त्रहूके वचनको ग्रहण करलेवेगा, अरु शीघ्रही तुमको आत्मपदकी प्राप्ति होवेगी, अरु जो तेरा चित्त इस शुभमाग विषे स्थिर नहीं होसके तो दृढपुरुषार्थ करि संसार समुद्रते पार होवो.

हे रामजी! तू चेतनहै, जड तो नहीं अपने पुरुषार्थ का आश्रय करहु मेरा भी यही आशीर्वाद है. जो तुम्हारा चित्त शीघ्रही शुभ आचरण विषे स्थित होवे अरु ब्रह्मविद्याका जो सिद्धांत सारहै, तिसविषे स्थित होवे. हे रामजी! श्रेष्ठ पुरुषभी वहीहै, जिसका पूर्वका संस्कार यद्यपि मलीनभीथा, परंतु संत अरु सतशास्त्रके अनुसार दृढ पुरुषार्थ करके, सिद्धताको प्राप्त भयाहै. अरु जो मूर्ख जीव है तिसने अपना पुरुषार्थ त्याग किया है. ताते संसारते मुक्त नहीं होते; पूर्वका जो कोऊ पाप कर्म किया होता है तिसके मलीनता करके पापमें धावता है, अपना पुरुषार्थ त्यागनेते अंध होजाता है; अरु विशेषकरि धावता है.

जो श्रेष्ठ पुरुषहै तिसको यह कर्तव्य है—प्रथम तो पाँचों इंद्रियाँ वश करनी; शास्त्र अनुसार तिसको वर्त्तावनी; शुभवासना दृढ करनी; अशुभका त्याग करना; यद्यपि त्या-

गनी दोनों वासनाहैं. प्रथम शुभ वासनाको इकट्ठी करनी; अरु अशुभका त्याग करना. जब शुद्ध वासना करके कषाय परिपक्क होवेंगे, अर्थ यह जो अंतःकरण जब शुद्ध होवेगा तिस हृदयविषे संत अरु सत शास्त्रका जो सिद्धांतहै, तिसका विचार उत्पन्न होवेगा, और ताते तुमको आत्मज्ञानकी प्राप्ति होवेगी. तिस ज्ञानद्वारा आत्माका साक्षात्कार होवेगा; बहुरि क्रिया ज्ञानका भी त्याग हो जावेगा. केवल शुद्ध अद्वैतरूप अपना आप शेष भासेगा. ताते हे रामजी ! और सब कल्पनाका त्याग करि संतजन अरु सतशास्त्रहूके अनुसार पुरुषार्थ करो.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे परमपुरुषार्थ वर्णनं नाम नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

दशमः सर्गः १०.

अथ वसिष्ठोत्पत्ति तथा वासिष्ठोपदेशागमनवर्णनम्.

वसिष्ठ उवाच, हे रामजी ! मेरे वचनको ग्रहण करो, सो वचन बांधव जैसे हैं; बांधव कहिये जो तेरे परममित्र होवेंगे, अरु दुःखहूते तेरी रक्षा करेंगे. हे रामजी ! यह जो मोक्ष उपाय तुमको कहता हों, तिसके अनुसार तू पुरुषार्थ करैगा, तब तेरा परम अर्थ सिद्ध होवेगा. अरु यह चित्त जो संसारके भोगकी ओर धावता है, तिस भोगरूपी खाड विषे चित्तको गिरने मत देवो भोगको विरस जानिके त्याग

देवो; वह त्याग तेरा परममित्र होवेगा. अरु त्यागभी ऐसा करो जो बहुरि भोगका ग्रहण न होय.

हे रामजी ! यह मोक्ष उपाय संहिता है. चित्तको एकाग्र करके इसको श्रवण कर तिसकरि परमानंद की प्राप्ति होवेगी. प्रथम शम अरु दमको धारि अर्थ यह जो सम्पूर्ण संसारकी वासनाका त्याग करहु, अरु उदारता करके तृप्त रहना, इसका नाम शम है. अरु दम अर्थ यह जो बाह्य इंद्रियोंको वश करना. जब इसको प्रथम धारेगा तब परम-तत्त्वका विचार आय उत्पन्न होवेगा. तिस विचारते विवेक द्वारा परमपदकी प्राप्ति होवेगी जिस पदको पाय करि बहुरि दुःख कदाचित् न होवेगा; अविनाशी सुख तुझको आय प्राप्त होवेगा. ताते जो कछु मोक्ष उपाय यह संहिता है; तिसके अनुसार पुरुषार्थ करहु, तब आत्मपदको प्राप्त होवेगा. पूर्व जो कछु ब्रह्माजीने हमको उपदेश किया है, सो मैं तुमको कहताहूं.

राम उवाच, हे मुनीश्वर ! तुमको जो ब्रह्माजीने उपदेश किया था, सो किसकारण किया था, अरु कैसे तुमने धारा सो कहो.

वसिष्ठ उवाच, हे रामचंद्र ! शुद्ध चिदाकाश एक है अरु अनंत है, अविनाशी है, परमानंदरूप है, चिदानंद स्वरूप है, ब्रह्म है, तिस विषे संवेदन स्पंदरूप होवे है, सो विष्णु होइकर स्थित भई है, सो विष्णुजी कैसा है ? जो स्पंद अरु निस्पंद विषे एक रस है. कदाचित् अन्यथा भावको

नहीं प्राप्त हुआ. जैसे समुद्र विषे तरंग उपजते हैं, तैसे शुद्ध चिदाकाशते स्पंद करके विष्णु उत्पन्न हुआ है; तिस विष्णुजीके स्वर्णवत् किरण नाभि कमलते ब्रह्माजी प्रगट भया है. तिस ब्रह्माजीने ऋषि, मुनीश्वर सहित स्थावर जंगम प्रजा उत्पन्न करी, तिस मनोराज करि जगत्को उत्पन्न किया; तिस–जगत्के कोन विषे जो जंबूद्वीप, भरतखंड है; तिस विषे मनुष्यको दुःखकारि आतुर देखि ब्रह्माजी को करुणा उपजी, जैसे पुत्रको देखि पिताको करुणा उपजती है. तब तिसके सुख निमित्त ब्रह्माजीने तप उत्पन्न किया, कि सुखी होय; अरु आज्ञा करी कि, तप करो. तब तप करत भये; तिस तप कारि स्वर्गादिकहूकों जाय प्राप्त होने लगे; तिन सुखहूको भोगि करि बहुरि गिरहिं, तब दुःखी रहे. ऐसे ब्रह्माजी देखि करि सत्यवाक् धर्मको प्रतिपादन करत भये; तिनके सुखके निमित्त आज्ञा करी; तिस धर्मकी प्रतिपादना करी लोकहूको सुख प्राप्त होने लगे; तहाँ केतिक काल सुख भोग करी बहुरि गिरहिं, तब दुःखीके दुःखी रहे; बहुरि ब्रह्माजीने दान तीर्थादिक पुण्यकिया उत्पन्न करके, उनको आज्ञा करी कि, इनके सेवने कारि तुम सुखी होहुगे जब वह जीव उनको सेवने लगे. तब बडे पुण्य लोकहूको प्राप्त भये; अरु तिनके सुख भोगने लगे. बहुरि केतिक काल अपने कर्मके अनुसार भोग भोगि गिरे; तब तृष्णाकारि बहुत सुख दुःखके अनुभव करते भये; अरु दुःखकारि आतुर

हुए, तब ब्रह्माजी देखत भया, जो जन्म अरु मरणके दुःख करि महादीन होते हैं, ताते सोई उपाय करिये, जिस करि उनका दुःख निवृत्त होवे.

हे रामचन्द्र ! ब्रह्माजी विचारत भया, कि इसका दुःख आत्मज्ञान बिना निवृत्त नहीं होनेका; ताते आत्मज्ञानको उत्पन्न करिये, जो यह सुखी होवहि, इस प्रकार विचार करि: आत्मतत्त्वका ध्यान करता भया आत्मतत्त्वके ध्यानते संकल्प किया; तिस ध्यानके करनेसे जो शुद्ध तत्त्वज्ञान है, तिसकी मूर्त्ति होकर मैं प्रगट भया. सो मैं कैसा हूँ ? ब्रह्माजीके समान हूँ जैसे उनके हाथ विषे कमंडलु है, तैसे मेरे हाथ विषे कमंडलु है; जैसे उनके कंठ विषे रुद्राक्षकी माला है. तैसे मेरे कंठमें भी रुद्राक्षकी माला है, जैसे उनके ऊपर मृगछाला है, तैसे मेरे ऊपर मृगछाला है, इस प्रकार ब्रह्माजीका अरु मेरा समान आकार है, अरु मेरा शुद्धज्ञानी स्वरूप है, मुझे जगत् कछु नहीं भासता; सुषुप्तिकी नाईं जगत् मुझको भासता है, तब ब्रह्माजीने विचार किया कि, इसको मैं जीवहूके कल्याण निमित्त उत्पन्न किया है, अरु यह तो शुद्धज्ञान स्वरूप है, अरु अज्ञान मार्गको उपदेश तब होवे, जब कछु प्रश्न उत्तर होवे, अरु तब मिथ्याका विचार होवे.

हे रामजी ! जीवहूके कल्याण निमित्त मुझको ब्रह्माजीने गोदमें बिठाया, अरु शीशपै हाथ फेरा, तिस करि मैं शीतल हो गया. जैसे चन्द्रमाकी किरणहू करि शीतलता

होती है, तैसे मैं शीतल भया. तब ब्रह्माजी मुझको जैसे हंसको हंस कहै, यों कहा—हे पुत्र ! जीवहूके कल्याण निमित्त एक मुहूर्त्त पर्यंत तुम अज्ञानको अंगीकारकरहु. श्रेष्ठ पुरुष जो है सो औरहूके निमित्त भी अंगीकार करकै आये हैं. जैसे चन्द्रमा बहुत निर्मल है, परन्तु श्यामताको अंगीकार किया है, तैसे तू भी एक मुहूर्त्त अज्ञानको अंगीकार कर.

हे रामजी ! इस प्रकार मुझको कहकर ब्रह्माजीने शाप दिया, "कि, तू अज्ञानी होवेगा" तब मैंने ब्रह्माजीकी आज्ञा मानि शापको अंगीकार किया. तब मेरा जो शुद्ध आत्मतत्त्व अपना आप था, तिससे मैं अन्यकी नाईं होत भया, मेरी स्वभावसत्ता मुझको विस्मरण होगई, अरु मेरा मन जागि आया भाव अभाव रूप जगत् मुझको भासने लगा. अरु आपको मैं वशिष्ठ अरु ब्रह्माजीका पुत्र यों जानताभया अरु नाना प्रकारके पदार्थ सहित जगत् जानत भया अरु तिनकी ओर चंचल होता भया; तब मैं संसार जालको दुःखरूप जानि करि ब्रह्माजीते पूछत भया: हे भगवन् ! यह संसार कैसे उत्पन्न भया अरु कैसे लीन होता है ? हे रामजी ! जब इस प्रकार पिता ब्रह्माजीसों प्रश्न किया, तब भली प्रकार मुझको उपदेश करत भया, तिस करि मेरा अज्ञान नष्ट होगया. जैसे सूर्य उदय हुए तम निवृत्त होजाता है, तैसे मेरा अज्ञान निवृत्त होगया; अरु मैं शुद्धताको प्राप्त भया. जैसे आदर्शको मार्जन करता है अरु ___ द्ध हो आवता है; तैसे मैं शुद्ध हुआ.

हे रामजी ! मैं ब्रह्माजीसे भी अधिक होत भया, तब मुझे को परमेष्ठी ब्रह्माजीने आज्ञा करी-हे पुत्र ! जंबूद्वीप भरत खंडमें जा. तुझको सृष्टिपर्यंतविषे अधिकार है तहाँ जाइकरि जीवनको उपदेश करहु; जिसको संसारके सुखकी इच्छा होवे, तिसको कर्ममार्गका उपदेश करना; तिसकरि स्वर्गादिक सुख भोगेंगे अरु संसारते विरक्त होवें. और जिनको आत्मपदकी इच्छा होवे, तिनको ज्ञान उपदेश करना; तातें तुम अब भूलोक विषे जाहु. हे रामजी ! इस प्रकार मेरा उपदेश अरु उपजना हुआ है, अरु इस प्रकार मेरा आवना हुआ है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे वसिष्ठोत्पत्ति, तथा वसिष्ठोपदेशागमनो नाम दशमः सर्गः ॥१०॥

एकादश :सर्गः ११.

अथ वसिष्ठोपदेशवर्णनम्.

वसिष्ठ उवाच, हे रामजी ! इस प्रकार पृथ्वी विषे मेरा आना भया. मैं कैसाहों ? जाको आत्मज्ञानकी वांछा होवे सो पूर्ण करिवेके लिये ब्रह्माजी मुझको उत्पन्न करत भये.

राम उवाच, हे मुनीश्वर ! तिस ज्ञानकी उत्पत्ति ते अनंतर जीवनकी शुद्धि कैसे भई ? सो कहो.

वसिष्ठ उवाच, हे रामजी ! जो शुद्ध आत्मतत्त्वहै, तिसका स्वभाव रूप संवेदन स्फूर्त्तिहै; सो ब्रह्माजीरूप होकर स्थित

भई है. जैसे समुद्र अपनी द्रवता करके तरंग रूप होता है; तैसे ब्रह्माजी भयाहै. बहुरि संपूर्ण जगत्को उत्पन्न किया, अरु तीनों काल उत्पन्न किये, तब केता काल व्यतीतहुआ; अरु कलियुग आया; तिसकरि जीवहूकी बुद्धिं मलीन होगई; अरु पापविषे विचरनेलगे; शास्त्र वेदकी आज्ञा माननेते रहगये. इस प्रकार धर्मकी मर्यादा छिपगई, अरु पाप प्रगट भया; जेती कछु राजधर्मकी मर्यादा थी, सो सब नष्ट होगई; अरु अपनी इच्छाके अनुसार जीव विचरने लगे, ताते कष्ट पावनेलगे. तिनको देखि करि ब्रह्माजीको करुणा उपजी. तिस दयाको धारि करि भूलोक विषे मुझको भेजा, अरु कहा-हे पुत्र! जायकरि तुम धर्मकी मर्यादा स्थापन करो; अरु जीवनको शुद्ध उपदेश करो. जिसको भोगहूकी इच्छा होवे, तिसको कर्मकांडका उपदेश करना और जप, तप, स्नान, संध्या यज्ञादिकका उपदेश करना, अरु जो संसारते विरक्त हुएहैं, अरु मुमुक्षुहैं, जिनको परमपद पानेकी इच्छाहै. तिनको ब्रह्मविद्याका उपदेश करना.

हे रामचंद्र! जिस प्रकार ब्रह्माजी मुझको आज्ञाकरि भूमिलोक विषे भेजते भये, तैसेई सनत्कुमार, नारदकोहू कहतेभये, तब हम सब ऋषीश्वर इकट्ठे होकर विचारते भये-कि; जगत्की मर्यादा किस प्रकार होवे अरु जीव शुभमार्ग विषे कैसे विचरहि। तब हमने यह विचार किया कि, प्रथम राज्यहूका स्थापन करना

जो जीव तिनकी आज्ञानुसार विचरहिं. प्रथम दण्डकरता राज्य स्थापन किया, सो कैसा राजा ? जो बडा वीर्यवान्, अरु तेजवान्, बडा उदार आत्मा भया, तिस राजाहूको हम अध्यात्मक विद्या उपदेशकरि; तिस करि परमपदको प्राप्त भये. जो परमानंदरूप अविनाशी पदहै, तिस ब्रह्मविद्याका उपदेश तिसको भया, तब सुखी भये. इसकारणते ब्रह्मविद्याकानाम राजविद्याहै. तब हमहूने वेद, शास्त्र, श्रुति, पुराणकरि धर्मकी मर्यादा स्थापनकरी. सो जप, तप, यज्ञ, दान, स्नान, आदिक क्रियाको प्रगट कीनी. अरे जीव ! तुम इसके सेवने करि सुखी होगे; तब सब फलको धारि करि तिनको सेवने लगे; तामें कोऊ विरला निरहंकार हृदयशुद्धताके निमित्त कर्म करतेथे.

हे रामजी ! जो मूर्ख हैं सो कामनाके निमित्त मनमें फूलके कर्म करते हैं सो घटी यंत्रकी नाईं भटकते फिरते हैं सो कबहूँ ऊर्ध्व अरु कबहूँ नीचे आते हैं. और जो निष्काम करते हैं, तिसका हृदय शुद्ध होताहै; फिर सो ब्रह्मविद्याके अधिकारी होते हैं; ताके उपदेशद्वारा आत्मपदकी प्राप्ति होती है, इस प्रकार सो जीवन्मुक्त हुए हैं; कई राजा प्रसिद्ध हुए हैं; सो राजको परंपरा चलावता हमारे उपदेश द्वारा ज्ञानको प्राप्त भयेहैं, और राजा दशरथहू ज्ञानवान् भयाहै और तूभी इसी दशाको आयके प्राप्त हुआहै, सो तू सबसे श्रेष्ठ हुआहै जैसे तू विरक्तआत्मा हुआहै, तैसे आगेहू, स्वाभाविक विरक्त आत्मा भये हैं. सो स्वभावकर

देहशुद्धि कर हुए हैं; इसीकारणते तू श्रेष्ठहै. जो कोऊ अनिष्ठ दुःख प्राप्त होताहै, तिस कर विरक्तता उपजती है; सो तुझको नहीं भई तुझको सब इंद्रियके विषय विद्यमानहैं; तैसे होते तेरेको वैराग्य हुआहै, ताते तू श्रेष्ठहै.

हे रामजी! जो मशान आदिक कष्टके स्थान कहे; ता ठिकाने सबको वैराग्य उपजताहै. "जो कछु नहीं! मरजाना है!" तिनमें जो कोई श्रेष्ठ पुरुष होता है, सो वैराग्यको दृढ कर रखताहै और जो मूर्ख है सो फिर विषयमें आसक्त होजाता है, ताते जिनको अकारण वैराग्य उपजता है, सो श्रेष्ठ हैं. हे रामजी! जो श्रेष्ठ पुरुष हैं, सो अपने वैराग्य अरु अभ्यासके बल करके संसार बंधनते मुक्त होजाते हैं. जैसे हस्ति बंधनको तोरके अपने बलसों निकस जाताहै तब सुखी होता है, तैसे वैराग्य अभ्यासके बलकर बंधनते ज्ञानी मुक्त होता है.

हे रामजी! यह संसार बड़ा अनर्थरूप है; जिस पुरुषने अपने पुरुषार्थ करके बंधनको नहीं तोरा, तिनको राग द्वेष रूपी अग्नि जरावत है; अरु जिन पुरुषोंने अपने पुरुषार्थ करके शास्त्र और गुरुको प्रणाम करके ज्ञान साधा है, सो उस पदको प्राप्त भये हैं. तिनको अध्यात्मक, अधिदैविक, अधिभौतिक, ताप जलाय सकतानहीं; जैसे वर्षाकालमें बहुत वर्षाको होते वनको दावानल जलाय नहीं सकता, तैसे ज्ञानीको अध्यात्मक आदि ताप कष्टको नहीं देते.

हे रामजी ! जिन श्रेष्ठ पुरुषोंने संसारको विरस जान-कर त्याग किया है, तिनको संसारका पदार्थ गिराय नहीं सकता. अरु जो मूर्ख हैं तिनको गिराय देते हैं; जैसे अंधयारी चलत पवनके वेगसों वृक्ष गिर जाते हैं परंतु कल्पवृक्ष गिरता नहीं. तैसे हे रामजी ! श्रेष्ठपुरुष वहीहै जिसको संसार विरस होगयाहै; सो केवल आत्मतत्त्वकी इच्छा करके तिसमें परायण भये हैं; तिनकोही ब्रह्मविद्याका अधिकार है, सोई उत्तम पुरुष हैं. हे रामजी ! तूभी तैसा उज्ज्वल पात्र है. जैसे कोमल पृथ्वीमें बीज बोते हैं, तैसे तुमको मैं उपदेश करता हों और जिसको भोगकी इच्छा है और संसारकी ओर यत्न करता है, सो पशुवत हैं. श्रेष्ठ पुरुष वही है जिसको संसार तरनेका पुरुषार्थ होता है.

हे रामजी ! प्रश्न तिनके पास करिये, जिनको जानिये कि, मेरे प्रश्नका उत्तर देनेको समर्थ है और जिसमें उत्तर देनेकी सामर्थ्यता दीखनेमें नहीं आवै; तिससों प्रश्न करना नहीं और उत्तर देनेको जो समर्थ देखिये, और तिसके वचनमें भावना न होय, तब भी तिससों प्रश्न न करिये काहेते कि, दंभकर प्रश्न करनेमें पाप होता है और गुरु भी उपदेश तिनको करता है जो संसारते विरक्त होय अरु केवल आत्मपरायण होनेकी श्रद्धा होवे अरु आस्तिक भाव होवे, ऐसा पात्र देखके उपदेश करै. हे रामजी ! जो गुरु अरु शिष्य दोनों उत्तम होते हैं, तब वचन शोभते हैं. तुम उपदेशका शुद्ध पात्र हो, जेते

कछु गुण शिष्यके शास्त्रमें वर्णन किये हैं, सो सब तेरेमें प्राप्त हैं और मैं उपदेश करनेमें समर्थ हों, ताते कार्य्य शीघ्र होवेगा.

हे रामजी ! शुभ गुण साथ तेरी बुद्धि निर्मल होय रही है, मेरा जो सिद्धांतका सार वचनहै सो तेरे हृदयमें प्रवेश कर रहैगा. जैसे उज्ज्वल वस्त्रमें केशरका रंग शीघ्र चढ़ जाता है, तैसे तेरे निर्मल चित्तमें उपदेशका रंग लगैगा. जैसे सूर्यके उदयते सूर्यमुखी कमल खिलते हैं, तैसे तेरी बुद्धि शुभ गुण कर खिल आई है. हे रामजी ! जो कछु शास्त्रका सिद्धांत आत्मतत्त्व मैं तुमको कहता हों, तिसमें तेरी बुद्धि शीघ्र प्रवेश करेगी. जैसे निर्मल जलमें सूर्यकी कांति प्रवेश करती है, तैसे तेरी बुद्धि आत्मतत्त्वमें शुद्धता करके प्रवेश करैगी.

हे रामजी ! मैं तुम्हारे आगे हाथ जोरके प्रार्थना करताहूँ, जो कछु मैं तुझको उपदेश करता हों तिस विषे तुम आस्तिक भावना करियो, जो इन वचन कर मेरा कल्याण होवेगा, अरु जो तुमको धारणा न होवे तो प्रश्न मत करना. जो शिष्यको गुरुके वचनमें आस्तिक भावना होती है, तिसका शीघ्र कल्याण होता है, ताते मेरे वचनमें आस्तिक भावना करियो, और जिसकर तू आत्मपदको प्राप्त होवेगा सो मैं कहता हों. प्रथम तो यह कर जो अज्ञानी जीवनमें असत्य बुद्धि है तिनका संग त्यागकर अरु

मोक्षद्वारके जो चार द्वारपाल हैं, तिनसों मित्र भावनाकर-और जब तिनसों मित्रभाव होयगा, तब वह मोक्षद्वारमें पहुँचाय देयँगे, तब आत्मदर्शन तुमको होवेगा. सो द्वार-पालके नाम श्रवण कर-सम, संतोष, विचार, सत्संग. यह चारों द्वारपाल हैं. जिस पुरुषने इनको वश किया है तिसको यह शीघ्र मोक्षरूपी द्वारके अन्तर कर देते हैं. हे रामजी! जो चारों वश न होवें, तो तीनोंको वश कर, अथवा दोको वश करले अथवा एकको वशकर, जो एक वश होवेगा तो चारोंई वश होजायँगे, इन चारोंका पर-स्पर स्नेह है, जहाँ एक आता है तहाँ चारों आयके रहते हैं. जो पुरुषने इनसे स्नेह किया है सो सुखी भया है, और जिनने इनका त्याग किया है, सो दुःखी हैं. हे राम-जी! यद्यपि प्राणका त्याग होवें, तो भी एक साधन तो बल करके वश करना, एकके वश कियेते चारोंही वश होयँगे अरु तेरी बुद्धिमें शुभ गुणने आयके निवास किया है. जैसे सूर्यमें सब प्रकाश आये हुए हैं, तैसे संतने अरु शास्त्रने जो निर्मल गुण कहे हैं. सो सब तेरेमें प्राप्त हैं. हे रामजी! अब तू मेरे वचनका अधिकारी भया है, जैसे चन्द्रमाके उदयते चन्द्रमुखी कमल खिल आते हैं, तैसे शुभ गुण कर तेरी बुद्धि खिल आई है.

हे रामजी! सत्संग अरु सतशास्त्र द्वारा बुद्धिको तीक्ष्ण कियेते शीघ्र आत्मतत्त्वमें प्रवेश होता है. ताते श्रेष्ठ पुरुष वही है—जिसने संसारको विरस जानके त्याग किया है.

अरु संत अरु सतशास्त्रके वचन द्वारा आत्मपद पानेका यत्न करता है, सो अविनाशी पदको प्राप्त होता है. और जो संसारका त्याग करके संसारकी ओर लगे हैं सो महामूर्ख जड हैं. जैसे जल शीतलता करके बर्फ हो जाता है, तैसे अज्ञानी मूर्खता करके आत्ममार्गते जड होइ रहे हैं, हे रामजी ! अज्ञानीके हृदयरूपी बिलमें दुराशारूपी सर्प रहता है सो कदाचित् शांति नहीं पाता; अरु आनंदसों कबहूं प्रफुल्लित नहीं होता. अरु आशा करके सदा संकुचित रहता है. हे रामजी ! आत्मपदके साक्षात्कारमें विशेष आवरण आशाही है जैसे सूर्यके आगे मेघका आवरण होता है, तैसे आत्म तत्त्वके आगे दुराशा का आवरण है. जब आशारूपी आवरण दूर होवे; तब आत्मपदका साक्षात्कार होवे. हे रामजी ! आशा तब दूर होवे जब संतकी संगति अरु सतशास्त्रका विचार होवे.

हे रामजी ! संसाररूपी एक बडा वृक्ष है; सो बोध रूपी खड्ग कर छेदा जाता है; सब सत्संग अरु सतशास्त्र कर तीक्ष्ण बुद्धि होवे, तब संसाररूपी भ्रमका वृक्ष नष्ट हो जाता है. जब शुभ गुण होते हैं, तब आत्मज्ञान आयके विराजता है; जहाँ कमल होते हैं. तहाँ भौंरे आयके स्थित होते हैं; तब शुभ गुणमें आत्मज्ञान रहता है. हे रामजी ! शुभ गुणरूप पवन कर जब, इच्छारूपी मेघ निवृत्त होता

है, तब आत्मरूपी चंद्रमाका साक्षात्कार होता हैं,जैसे चंद्रमाके उदय हुए आकाश शोभता है; तैसे आत्माके साक्षात्कार हुए तेरी बुद्धि खिलैगी.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे वसिष्ठोपदेशो नाम एकादशः सर्गः ॥ ११ ॥

द्वादशः सर्गः १२.

अथ तत्त्वज्ञमाहात्म्यवर्णनम्.

वसिष्ठ उवाच, हे रामजी ! अब तू मेरे वचनका अधिकारीहै–काहेते कि, तप, वैराग्य, विचार, संतोष आदि जो शुभ गुण संत अरु शास्त्रने कहेहैं, सो सब तेरेमें प्राप्त हैं, ताते तू मेरे वचनको सुन, सो रज तम गुणको त्यागकर शुद्ध सात्त्विकवान् होकर सुन राजस जो विक्षेप अरु तामस जो लय निद्रामें होताहै, सो दोऊका त्याग करके सुन. जेते कछु जिज्ञासुके गुण शास्त्रमें वर्णन कियेहैं, सो सब कर तू संपन्नहै, अरु जेते कछु गुरुके गुण शास्त्रमें वर्णन कियेहैं, सो सब मेरेमें हैं. जैसे रत्नाकर समुद्र संपन्नहै. तैसे मैं सम्पन्न हौं ताते मेरे वचनका तू अधिकारीहै और मूर्खको मेरे वचनका अधिकार नहीं. हे रामजी ! जैसे चंद्रमाके उदयते चंद्रकांत मणि द्रवीभूत होतीहै, तब तामें तें अमृत सरताहै; और पत्थरकी शिलाहै, तिनते द्रवीभूत नहीं होताहै; तैसे जो जिज्ञासु होताहै तिसको परमार्थ वचन

लगताहै, अरु अज्ञानीको नहीं लगता-हे रामजी ! शिष्यतो शुद्ध पात्र होवे, अरु उपदेश करनेहारा ज्ञानवान् न होवे, तो उसको आत्माका साक्षात्कार नहीं होवे, जैसें चंद्रमुखी कमलनी निर्मलहोय, अरु चंद्रमा न होय तब प्रफुल्लित नहीं होती- तैसे ताते तू मोक्षकापात्र है- अरु मैं भी परमगुरु हों मेरे उपदेश कर तेरा अज्ञान नष्ट होय जावेगा-

मैं मोक्षका उपाय कहता हों, जब तिसको तू भलें प्रकार विचारेगा; तब जेती कछु मलीन मनकी वृत्ति हैं, तिनका अभाव होजायगा; जैसे महाप्रलयके सूर्यकर मन्दराचल पर्वत जलजाता है- ताते हे रामजी ! वैराग्य अरु अभ्यासके बलकर इस मनको अपने विषे लीन कर शांतात्माहोवहु- तैंनें बालकावस्थासों लेकर अभ्यास कर रक्खा है ताते मन उपशम पायके आत्मपदको प्राप्त होवेगा- हे रामजी ! सत्संग अरु सतशास्त्रद्वारा जो आत्मपद पाया है, सो सुखी भये हैं फिर तिनको दुःख नहीं लगता, काहेते जो दुःख देहाभिमानकर होता है सो देहका अभिमान तो उनने त्याग दिया है, तैसे जिसने देहका अभिमान त्याग दिया है अरु देहका आत्मता करके बहुरि ग्रहण नहीं करता ताते सुखी रहता है- हे रामजी ! जिनने आत्माबल धरके विचारद्वारा आत्मपदको पाया है, सो अकृत्रिम आनन्दकर सदा पूर्ण हैं; सब जगत् तिसको आनंदरूप भासता है; अरु जो

असम्यग्दर्शी हैं, तिनको जगत् अनर्थरूप भासता है. हे रामजी! संसरन रूप जो यह संसार सर्प है; सो अज्ञानीके हृदयमें दृढ होगया है, सो योगरूपी गारुड मंत्र करके नष्ट होजाता है; अन्यथा नहीं होता. और सर्पका विष है, सो एक जन्ममें मारता है; अरु संसरनरूप जो विष है तिस करके अनेक जन्म पायके मरता चला आता है, शांतिवान कदाचित नहीं होता.

हे रामजी! जिन पुरुषोंने सत्संग अरु सत्शास्त्रके वचनद्वारा आत्मपदको पाया है, सो आनंदित भये हैं; अरु अंतर्बाहिर सब जगत् इनको आनंदरूप भासता है. अरु सब क्रिया करनेमें आनंद विलास है. और जिनने सत्संग अरु सत्शास्त्रका विचार त्यागा है, अरु संसारके सन्मुख हैं; तिसकर तिनको संसार अनर्थरूप है सो ऐसा दुःख देता है—जैसे सर्पके दंशते दुःखी होते हैं, अरु शस्त्रकर घायल होतेहैं, अरु अग्निमें पारेकी नाईं जलते हैं, अरु जेवरीके साथ बंध होते हैं अरु अंध कूपमें गिरनेते कष्ट पाते हैं; तैसे संसारमें मनुष्य दुःख पाते हैं. हे रामजी! जिन पुरुषोंने सत्संग अरु सत्शास्त्र द्वारा आत्मपदको नहीं पाया, सो ऐसे कष्ट पाते हैं जो नरकरूपी अग्निमें जरते हैं; अरुचिके विष पीते हैं, पाषाणकी वर्षाकर चूर्ण होते हैं, कोल्हूमें पीस डारते हैं; अरु शस्त्र साथ कटते हैं; इत्यादिक जो बडे कष्ट हैं सो तिनको प्राप्त होते हैं; हे रामजी! ऐसा दुःख कोई

नहीं ? जो इस जीवकों प्राप्त नहीं होता, आत्माके प्रमाद सों सब दुःख होते हैं. अरु जिन पदार्थोंको यह रमणीक जानते हैं, सो चक्रकी नाईं चंचल हैं; कबहूं स्थिर नहीं रहते सतमार्गको त्यागकर जो इनकी इच्छा करते हैं सो महादुःखको प्राप्त होते हैं. अरु जिस पुरुषने संसारको विरस जाना है और पुरुषार्थकी तरफ दृढ भये हैं; तिनको आत्मपदकी प्राप्ति होती है.

हे रामजी ! जिन पुरुषनको आत्मपदकी प्राप्ति भई है तिनको फिर दुःख नहीं होता; और तिनके दुःख जो नष्ट नहीं होते; तो ज्ञानके निमित्त पुरुषार्थ कोऊ नहीं करता. जो अज्ञानी हैं तिनको संसार दुःखरूपहै; अरु ज्ञानीकों सब जगत् आनंदरूपहै; अपने आपुई हैं; उनको भ्रम कोई नहीं रहता. हे रामजी ! ज्ञानवानमें नानाप्रकारकी चेष्टा भी दृष्टि आती हैं, तौ भी सदा शांतरूप है, अरु आनंदरूप है; संसारका दुःख कोऊ नहीं परश कर सकता, काहेते कि तिनने ज्ञानरूपी कवच पहिरा है.

हे रामजी ! ज्ञानवानको भी दुःख होता है; बडे बडे ब्रह्मर्षि; अरु राजर्षि बहुत ज्ञानवान भये हैं, सोहू दुःखको प्राप्त होते हैं, परन्तु दुःखसों आतुर नहीं होते, क्योंकि जो ज्ञानवानने ज्ञानका कवच पहिरा है, ताते कोऊ दुःख स्पर्श नहीं करता, सदा आनंदरूप हैं, जैसे ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, नानाप्रकारकी चेष्टा करते, और जीवको दृष्टि आवते हैं; अरु अंतरते सदा शांतरूपहैं; इस प्रकार और भी

जो ज्ञानवान उत्तम पुरुष हैं. सो शांतरूप हैं ताको कर्त्ताका अभिमान कोऊ नहीं फुरता. हे रामजी! अज्ञानरूपी जो मेघ है, तिसकर मोहरूपी कुहाडाका वृक्ष है, सो ज्ञानरूपी शरत्काल करके नष्ट होजाता है, ताते स्वसत्ताको प्राप्त होवै है; अरु सदा आनंदकर पूर्ण है. हे रामजी! जो कछु क्रिया करते हैं, सो तिनके विलास रूप है, अरु सब जगत् आनंदरूप है, अरु शरीररूपी रथ, इंद्रियरूपी अश्व और मनरूपी रस्सा, तासों अश्वको खैंचता है, अरु बुद्धिरूपी रथवाही है, तिस रथमें यह पुरुष बैठा है; अरु इंद्रियरूपी अश्व इसको खोटे मार्गमें डारते हैं. अरु ज्ञानवानको इंद्रियरूपी अश्व हैं सो ऐसे हैं कि, जहाँ जाते हैं तहाँ आनंदरूप हैं, किसी ठौरमें खेद नहीं पाता; सब क्रियामें उनको विलास है; सर्वदा आनंद कर तृप्त रहते हैं.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे तत्त्वज्ञमाहात्म्य वर्णनं नाम द्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥

त्रयोदशः सर्गः १३.

अथ समवर्णनम्.

वसिष्ठ उवाच, हे रामजी! इसी दृष्टिको आश्रयकर जो हृदय पुष्ट होवे, बहुरि संसारके इष्ट अनिष्ट कर्म कर चलायमान न होवे, जिस पुरुषको इस प्रकार आत्मपदकी प्राप्ति भई है, सो परम आनंदित भये हैं; सोकके कर्त्ता

नहीं हैं, न याचना करता है, उपाधिते रहित परम शांत-रूप अमृतकर पूर्ण होय रहे हैं सो पुरुष नाना प्रकारकी चेष्टा करते दृष्टि आते हैं, परन्तु कुछु नहीं करते, जहाँ उनके मनकी वृत्ति जातीहै, तहाँ आत्मसत्ता भासतीहै, सो आत्मानंदकर पूर्ण होय रहेहैं. जैसे पूर्णमासीका चन्द्रमा अमृतकरि पूर्ण रहताहै, तैसे ज्ञानवान परमानंद करि पूर्ण रहता है. हे रामजी ! यह जो मैंने तुमको अमृतरूपी वृत्ति कही है, इसको जब जानेगा तब तुमको साक्षात्कार होवेगा. जब जिसको आत्मज्ञानकी प्राप्ति होती है. तब सर्वदुःख नष्ट होजाते हैं; जैसे चंद्रमाके मंडलमें अंधकार नहीं होता, तैसे ज्ञानीको अशांति कबहूँ नहीं होती और जो कछु क्रिया करते हैं, तिसमें दुःख पाता है; जैसे कंकरके वृक्षमें कंटककी उत्पत्ति होती है, तैसे अज्ञानीको दुःखकी उत्पत्ति होती है.

हे रामजी ! इस जीवको मूर्खता करके बडे दुःख प्राप्त होते हैं ऐसा अद्भुत दुःख और कोई नहीं, अरु किसी आपदा करके भी ऐसा दुःखनहीं होता; जैसा दुःख मूर्खता करके पाते हैं; ऐसा दुःख कोई नहीं, हे रामजी ! हाथमें ठीकरा ले चंडालके घरकी भिक्षा ग्रहण करै, और आत्मतत्त्वकी जिज्ञासा होवे, तौभी और ऐश्वर्यते श्रेष्ठ है. परंतु मूर्खतासों जीवना व्यर्थ है, तिस मूर्खताको दूर करनेको मोक्ष उपाय मैं कहता हों:

हे रामजी ! यह मोक्ष, उपाय परम बोधका कारणहै; कछुक बुद्धि संस्कारी होवे, अर्थ यह जो पद पदार्थके जानने हारी होवे, अरु मोक्ष उपाय शास्त्रको विचारे, तो तिसकी मूर्खता नष्ट हो जावेगी. अरु आत्मपदकी प्राप्ति होवेगी. जैसा आत्मबोधका कारण यह शास्त्र है, तैसा और शास्त्र त्रिलोकी विषे कोई नहीं. नाना प्रकारके दृष्टांत सहित इतिहास हैं जामें, तिसको जब विचारेगा तब परमानंदको प्राप्त होवेगा; अज्ञानरूपी तिमिर नाश करनेको ज्ञानरूपी शलाकाहै, जैसे अंधकारको सूर्य नाश करता है तैसे अज्ञानको यह शास्त्रका विचार नाश करता है. हे रामजी ! जिस प्रकार इसका कल्याण होता है सो श्रवणकर गुरु जो ज्ञानवान है सो शास्त्रका उपदेश करै, अरु अपने अनुभवसों ज्ञान पावे. जब गुरु अरु शास्त्र और अपना अनुभव यह तीनों इकट्ठे मिलें तब इसका कल्याण होवे; जबलग अकृत्रिम आनंदको प्राप्त नहीं भया, तबलगि दृढ अभ्यास करै; तिस अकृत्रिम आनंदको प्राप्ति करने हारा मैं गुरु हों, जीवमात्रका मैं परम मित्र हों, ऐसा अपर कोऊ नहीं; हमारी संगति जीवको आनंद प्राप्त करनहारी है, तातें जो कछु मैं कहता हों सो तू कर.

हे रामजी ! जो संसारके भोग हैं सो क्षणमात्रहैं; तातें इनको त्याग करहु, और विषयके परिणाममें दुःख अनंत हैं; इनको दुःखरूप जानकर त्याग दे, अरु हम सारिखे ज्ञानवानका संग कर, और हमारे वचनके विचा

रते तेरे सब दुःख नष्ट होजायँगे. हे रामजी ! जिस पुरुषने हमारे संग प्रीति करी है,तिसको हमने आनंदके पदकी प्राप्ति कर दीनी है जिस आनंदते ब्रह्मादिक आनंदित भये हैं और ज्ञानवानहू आनंदित भयेहैं; सो निर्दुःख पदको प्राप्त भये हैं. हे रामजी ! श्रेष्ठ पुरुष सोई हैं; जाने हमारे साथ प्रीति कीनी है. जिसने संत अरु शास्त्रके विचारद्वारा दृश्यको अदृश्य जाना है अरु निर्भय हुआहै आत्माका प्रमाद जीवको दीन करता है; अज्ञानीका हृदयरूपी कमल तबलग सकुचा रहता है, जबलग तृष्णारूपी रात्रि होती है; जब ज्ञानरूपी सूर्य उदय होता है, तब तृष्णारूपी रात्रि नष्ट हो जाती है अरु हृदयरूपी कमल, आनंद कर खिली आते हैं.

हे रामजी ! जिस पुरुषने परमार्थ मार्गको त्यागा है,अरु संसारके खान पान आदि भोगमें मग्न हुआ है, तिसको तू मेढुक जान, जैसे कीचमें मेढुक परा शब्द करता है, तैसा वह पुरुष है. हे रामजी ! यह संसार बड़ा आपदाका समुद्र है; तामें जो कोऊ श्रेष्ठ पुरुष है. सो सत्संग अरु सत्शास्त्रके बिचार करके संसार समुद्र उलंघता है, अरु परमानंदको प्राप्त होताहै, आदि, अंत, मध्य रहित निर्भय पदको प्राप्त होताहै; अरु जो संसार समुद्रके सन्मुख हुआहै, सो दुःखते दुःखरूप पदको प्राप्त भयाहै, कष्टते कष्ट, नरकते नरकको प्राप्त होताहै. जैसे विषको विष जान तिसका पान करताहै, सो विष उसको नाश करताहै,

तैसे जो पुरुष संसार असत्य जानके बहुरि संसारकी ओर यत्न करताहै, सो मृत्युको प्राप्त होताहै. हे रामजी ! जो पुरुष आत्मपदको कल्याणरूप जानताहै,अरु आत्मपदके अभ्यासका त्यागकर संसारकी ओर धावताहै सो जैसे किसीके घरमें अग्नि लगी, अरु तृणका घर, अरु तृणकी शय्या करिके शयन करताहै, सो जैसे नाशको पावे तैसे जन्म मृत्युको प्राप्त होवहिंगे- और संसारके पदार्थ देखकर राग दोषवान् हुएहैं, सो सुख बिजुरीका चमक जैसाहै, क्यों जो होयके मिटजावे, स्थिर नहीं रहै तैसा संसारके दुःख आगमापायी है.

हे रामजी ! यह संसार अविचार करके भासताहै अरु विचार कियेते लीन होजाता है; विचार कियेतें लीन जो न होता, तो तुमको उपदेश करनेका काम नहीं था; सो तो विचार कियेते लीन होजाताहै इसी कारणतें पुरुषार्थ चाहिये. जैसे हाथमें दीपक होवें. अरु अंधकूपमें गिरै सो मूर्खताहै तैसें संसारके भ्रमके निवारण हारे गुरु शास्त्र विद्यमानहैं; तिनकी शरण न आवे सो मूर्ख है. हे रामजी ! जो पुरुष संतकी संगति, अरु सत्शास्त्रके विचार-द्वारा आत्मपदको पायाहै, सो पुरुष केवल कैवल्य भावको प्राप्त भये; अर्थ यह जो शुद्ध चैतन्यको प्राप्त हुएहैं अरु संसार भ्रम तिनका निवृत्त होगया है.

हे रामजी ! यह संसार मनके स्मरणते उपजाहै, सो इसका कल्याण बांधव करके नहीं होना है अरु धन करके

भी नहीं होनाहै, प्रजा करके भी नहीं होना है, अरु तीर्थ अरु देवद्वार करकेभी नहीं होना है, ऐश्वर्य करके भी नहीं होनाहै, एक मनके जीतनेते कल्याण होताहै.

हे रामजी! जिसको ज्ञानी परमपद कहते हैं और जिसको रसायन कहते हैं; जिसके पायेते इसका नाश नहीं होय, अरु अमर होवे, अरु सब सुखकी पूर्णता होवे, इसका साधन समता अरु संतोष है, इनकर ज्ञान उत्पन्न होता है सो आत्मज्ञान रूपी एक वृक्ष है, तिसका फूल शांति है, अरु स्थिति इसका फल है; जिस पुरुषको यह ज्ञान प्राप्तहुआहै, सो शांतिमान् हुआ है; सो निर्लेप रहताहै, तिसको संसारका भावाभावरूप स्पर्श नहीं होताहै. जैसे आकाशमें सूर्य उदय होताहै, तब जगत्की क्रिया होती है, फिर जब सो अदृश्य होता है, तब जगत्की क्रिया भी लीन हो जाती है; जैसे तिस क्रिया होने न होनेमें आकाश ज्योंकात्यों है, तैसे ज्ञानवान् सदा निर्लेप है; तिस आत्मज्ञानकी उत्पत्तिका उपाय यह मेरा श्रेष्ठ शास्त्र है.

हे रामजी! जो पुरुष इस मोक्षोपाय शास्त्रको श्रद्धासंयुक्त पढै अथवा सुने तो थाई दिनसों मोक्षका भागी होय रहै, अरु मोक्षके चार द्वारपाल हैं सो मैं तुमको कहता हों; सो इनमेंते एकहू जब अपने वश होय तब मोक्षद्वारमें इसका शीघ्र प्रवेश होवे. सो चारोंका नाम कहों सो सुन. हे रामजी! यह सम इसको परम विश्रामका कारण है, अरु यह संसार जो दीखता है; सो

मरुथलकी नदीवत है, इसको देखकर मूर्ख अज्ञानी रूपी जो मृग है सो सुखरूपी जल जानकर दौरता है, अरु शांतिको नहीं प्राप्त होता. जब समरूपी मेघकी वर्षा होवे, तब सुखी होवे. हे रामजी! सम सो परम आनंद है, अरु सम सो परमपद है और शिवपद है, जिस पुरुषने सम पायाहै सो संसारसमुद्रते पार हुआहै, तिसको शत्रु सो मित्र हो जाते हैं. हे रामजी! जब चन्द्रका उदय होता है तब अमृतकी कण फूटती हैं अरु शीतलता होती है, तैसे जिसके हृदयमें समरूपी चन्द्रमा उदय होता है, तिसके सब ताप मिट जाते हैं अरु परम शांतिमान होते हैं हे रामजी! यह सम देवताके अमृत समान है नहीं, परम अमृत है, सम करके इसको परम शोभा प्राप्त होती है. जैसे पूर्णमासीके चन्द्रमाकी कांति परम उज्ज्वल होती है, तैसे समको पायके उसकी उज्ज्वल कांति होती है. जैसे विष्णुके दो हृदय हैं, सो एकतो अपने शरीरमें है, दूसरा संतमें है. तैसे इसके दो हृदय होते हैं, एक अपने शरीरमें, दूसरा सम भी इनका हृदय होताहै; ऐसा आनंद अमृतके पान कियेते हू नहीं होता, अरु लक्ष्मीकी प्राप्तिते भी नहीं होता, जो आनंद समवानको होता है.

हे रामजी! प्राणहूते भी प्रिय कोई होवै, सो अन्तर्द्धान कर फिर प्राप्त होवे, तैसा आनंद नहीं होवे ऐसा आनंद समवानको होवे. तिसके दर्शनकरभी आनंद प्राप्तहोता है. अरु ऐसा आनंद राजाको भी नहीं होता, जो बाहरते श्रेष्ठ

मंत्री होताहै, अरु अंतरते सुंदर स्त्रियां होतीहैं, तिनकरभी ऐसा आनंद नहीं होता जैसा आनन्द समसंपन्न पुरुषको होताहै- हे रामजी ! जिस पुरुषको समकी प्राप्ति भईहै, सो वंदन करने योग्य है, अरु पूजने योग्यहै; जिसको समकी प्राप्ति भई है, तिसको उद्वेग नहीं आवे, अरु लोकहूते उद्वेग नहीं पावे, उसकी क्रिया अमृत समानहै, अरु वचन उसके अमृतकी नाईं मीठे हैं; जैसे चंद्रमाकी किरण शीतल अरु अमृतरूप है; सो सबको हृदयारामहै, तैसे संत जनके वचन हैं; जिस पुरुषको समकी प्राप्तिभई है, तिसकी संगति जब इस जीवको प्राप्त होती है, तब सब परम आनंदित होते हैं-

हे रामजी ! जैसे बालक माताको पायके आनंदित होता है, तैसे जिसको समकी प्राप्ति भई है तिसका संगकर जीव अधिक आनंदवान् होता है-जैसे किसीका बांधव मुवा-हुआ फिर आवे, और उसको आनंद प्राप्त होवे,तिसते भी अधिक आनंद समसंपन्न पुरुषको पायके होताहै-हे रामजी! ऐसा आनंद चक्रवर्ती राज्यके पायेतेभी तिसको नहीं होता- अरु त्रिलोकीका राज्य पायेते भी नहीं होता- जिसको सम-की प्राप्ति भई है तिसके शत्रुभी मित्र होजातेहैं, तिसकर कछु भयभीत नहीं होता अरु सर्पका भय भी तिसको नहीं रहता; सिंहका भय भी तिसको नहीं रहता; और हू किसी-का भय नहीं रहता;सदा निर्भय शांतरूप रहताहै- हे रामजी ! जो कोऊ कष्ट आय प्राप्त होवे, और कालकी अग्नि आय

लगै, तौ भी सो चलायमान नहीं होता. सदा शांतिरूप रहते हैं; जैसे शीतल चाँदनी चन्द्रमामें स्थित है, तैसे जो कछु शुभ गुण अरु संपदा हैं सो सब समवान्‌के हृदयमें आय स्थित होते हैं.

हे रामजी ! जो पुरुष आध्यात्मकादि तापकर जलता है, तिसको हृदयमें समकी प्राप्ति होवे, तब ताप मिट जाते हैं. जैसे तप्त पृथ्वी वर्षा करके शीतल हो जाती है, तैसे उसका हृदय शीतल हो जाता है. जिसको समकी प्राप्ति भई है सो सब क्रियामें आनंदरूप है. तिसको दुःख कोऊ नहीं स्पर्श करता; जैसे वज्रशिलाको बाण वेध नहीं सकता, तैसे जिस पुरुषने समरूपी कवच पहिरा है, उसको आध्यात्मकादि ताप वेध नहीं सकता; वह सर्वदा शीतल-रूप रहता है.

हे रामजी ! तपस्वी, पंडित, याज्ञिक, धनाढ्यसों, पूजा, मान करने योग्य है. परंतु जिसको समकी प्राप्ति भई है सो सबसे उत्तम है. सो सबको पूजने योग्य है; उसके मनकी वृत्ति आत्मतत्त्वको ग्रहण करती है; अरु सब क्रियामें शोभत है. जिस पुरुषको शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, यह इंद्रियके विषय इष्ट आनिष्टमें राग द्वेष नहीं होता, तिसको शांतात्मा कहते हैं. हे रामजी ! जो संसारके रमणीय पदार्थमें बध्यमान नहीं होता, अरु आत्मानन्द कर पूर्ण है, तिसको शांतिमान कहते हैं. वाको संसारके शुभ अशुभ कर मलीनपना नहीं लगता; सदा निर्लेप

रहता है. जैसे आकाश सब पदार्थत निर्लेप है, तैसे शांतिमान सदा निर्लेप रहता है. हे रामजी ! ऐसा जो पुरुष है सो इष्ट विषयकी प्राप्तिमें हर्षवान होते नहीं; अरु अनिष्ट विषयकी प्राप्तिमें शोकवान होते नहीं; अरु अन्तरते सदा शांत रहते हैं. उसको कोऊ दुःख स्पर्श नहीं करता; अपने आपमें सदा परमानन्दरूप रहता है. जैसे सूर्यके उदय हुए अंधकार नष्ट हो जाता है, तैसे शांतिके पाये सर्व दुःख नष्ट हो जाते हैं; सदा निर्विकार रहते हैं.

हे रामजी ! सो पुरुष सब चेष्टा करते दृष्टि आते हैं, परंतु सदा निर्गुणरूप हैं. कोऊ क्रिया उनको स्पर्श नहीं करती. जैसे जलमें कमल निर्लेप रहता है, तैसे शांतिवान सदा निर्लेप रहता है. हे रामजी ! जो पुरुष बडे राज संपदाको पायकर अरु बडी आपदाको पायकर ज्योंका-त्यों अलग रहता है, सो शांतिमान कहिये. हे रामजी ! जो पुरुष शांतिते रहित है, तिसका चित्त क्षण क्षण राग द्वेषकर तपता है. अरु जिसको शांतिकी प्राप्ति भई है, सो अन्तर बाहिर शीतल है, अरु सदा एकरस है. जैसे हिमालय सदा शीतल रहता है, तैसे वह सदा शीतल रहता है. वाके मुखकी कांति बहुत सुंदर हो जाती है, जैसे निष्कलंक चन्द्रमा होवे तैसे शांतिमान पुरुष निष्कलंक रहता है. हे रामजी ! जिसको शांति प्राप्त भई है, सो परम आनंदित हुए हैं, परमलाभ तिसको प्राप्त होता है.

ज्ञानी इसीको परमपद कहते हैं जिसको पुरुषार्थ करना है, तिसको शांतिकी प्राप्ति करनी चाहिये. हे रामजी ! जैसे मैंने कहा है, तिस क्रम करके शांतिका ग्रहण करो, तब संसारसमुद्रके पार पहुँचोगे.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे समनिरूपणं
नाम त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥

चतुर्दशः सर्गः १४.

अथ विचारवर्णनम्.

वसिष्ठ उवाच, हे रामजी ! अब विचारका निरूपण सुन जब हृदय शुद्ध होता है, तब विचार होता है, अरु शास्त्रार्थ विचारद्वारा बुद्धि तीक्ष्ण होती है. हे रामजी ! अज्ञान रूपी जो वन है. तिसमें आपदारूपी बेलिकी उत्पत्ति होती है, तिसको विचाररूपी खड्ग करके काटेगा; तब शांत आत्मा होवेगा, अरु मोहरूपी हस्ती है, सो जीवके हृदयकमलका खंड खंड कर डारता है. अभिप्राय यह जो इष्ट अनिष्ट पदार्थमें राग द्वेषकर छेदा जाता नहीं; जब विचाररूपी सिंह प्रगटे तब मोहरूपी हस्तीका नाश करै; फिर शांतात्मा होवे.

हे रामजी ! जिसको कछु सिद्धता प्राप्त हुई है सो विचार अरु पुरुषार्थ कर भई है; जो राजा होता है,सो प्रथम विचार कर पुरुषार्थ करता है; तिसकर राज्यको प्राप्त

होता है. बल, बुद्धि अरु तेज चतुर्थ जो पदार्थका आगमन, अरु पंचम पदार्थकी प्राप्ति होती है, सो पाँचोंकी प्राप्ति विचारकर होती है. अर्थ यह जो इंद्रियोंका जीतना, अरु बुद्धि सो आत्मा व्यापिनी, अरु तेज पदार्थका आगमन इनकी प्राप्ति विचारसों होती है. हे रामजी ! जिस पुरुषने विचारका आश्रय लिया है, सो विचारकी दृढता करके जिसकी वांछा करतेहैं, तिसको पावते हैं, ताते विचार इसका परममित्र है. जो विचारवान् पुरुष है, सो आपदामें मग्न नहीं होता; जैसे तुंबी जलमें डूबत नहीं, तैसे वह आपदामें डूबत नहीं. हे रामजी ! वह विचारसंयुक्त जो करताहै, देताहै, लेताहै, सो सब क्रिया सिद्धताका कारणरूप होतीहै. धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, विचारकी दृढता करके सिद्ध होतेहैं; विचाररूपी कल्पवृक्षहै, तिसमें जिसका अभ्यास होता है सोई पदार्थकी सिद्धिको पाता है.

हे रामजी ! शुद्ध ब्रह्मका विचार ग्रहणकर, आत्मज्ञानको प्राप्त होहु; जैसे दीपकसोंकर पदार्थका ज्ञान होता है, तैसे पुरुष विचारसों कर सत्य असत्यको जानता है. असत्यको त्यागकर सत्यकी ओर यत्न किया है, तिसको विचारवान् कहते हैं. हे रामजी ! संसाररूपी समुद्रविषे आपदारूपी तरंग चलतेहैं, जो विचारवान् पुरुष हैं, सो संसारके भाव अभावमें कष्टवान् नहीं होताहै. जो कछु विचार संयुक्त क्रिया होतीहै. तिसका परिणाम सुखहै. जो विचार विना चेष्टा होतीहै. तिसकर दुःख प्राप्त होता

है. हे रामजी ! अविचार रूपी कंटक वृक्षहै, तिसते दुःख-रूपी कंटक पडे उत्पन्न होतेहैं; अरु अविचाररूपी रात्रिहै तिसमें तृष्णारूपी पिशाचनी आय विचरती है. जब विचाररूपी सूर्य उदय होताहै तब अविचाररूपी रात्रि अरु तृष्णारूपी पिशाचनी नष्ट होजाती है.

हे रामजी ! हमारा यही आशीर्वाद है कि, तुम्हारे हृद-यसों अविचाररूपी रात्रि नष्ट होहु. विचाररूपी सूर्य करके अविचारित संसार दुःखका नाश होता है; जैसे बालक अविचार करके अपनी परछैयाको बेताल कल्पके भयको पाता है, अरु विचार कियेते भय नष्ट होजाता है; तैसे अविचार करके संसार दुःखको देता है, और सतशास्त्रको युक्तिकर विचार कियेते संसार भय नष्ट होजाता है. हे रामजी ! जहाँ विचार है, तहाँ दुःख नहीं है; जैसे जहाँ प्रकाश होता है तहाँ अंधकार नहीं रहता है; जहाँ प्रकाश नहीं तहाँ अंधकार रहता है. तैसे जहाँ विचार है तहाँ संसार भय नहीं है, अरु जहाँ विचार नहीं तहाँ संसार भय रहता है. अरु जहाँ आत्मविचार होता है, तहाँ सुखको देनेहारे शुभगुण आय स्थित होते हैं. जैसे मानस-रोवरमें कमलकी उत्पत्ति होती है, तैसे विचारमें शुभ गुणकी उत्पत्ति होती है. जहाँ विचार नहा तहाँ दुःखका आगम होता है.

हे रामजी ! जो कछु अविचारकर क्रिया करते हैं, सो दुःखका कारण होता है. जैसे चूहा बिलको खोदके मृत्तिका

निकासता है. सो जहाँ इकट्ठी होती है. तहाँ बेलिकी उत्पत्ति होती है. तैसे अविचार कर यह पुरुष मृत्तिकारूपी पाप क्रियाको इकट्ठी करता है, तिसते आपदारूपी बेलि उत्पन्न होती है, अरु अविचाररूपी घुनका खाया सूखा वृक्ष है, तिसको सुखरूपी फल चाहते हैं, तेऊ नहीं निकसते हैं. सो अविचार किसका नाम है जिस करके शुभक्रिया न होवे, अरु जिसकर शास्त्रानुसार क्रिया न होवे, तिसका नाम अविचार है.

हे रामजी ! विवेक रूपी राजा है, अरु विचाररूपी प्रजा है. जहाँ विवेकरूपी राजा आता है, तहाँ विचाररूपी प्रजा तिनके साथ फिरती है; अरु जहाँ विचाररूपी प्रजा आती है,तहाँ विवेकरूपी राजाभी आता है.जो पुरुष विचार करके संपन्न है, सो पूजने योग्य है. तिसको सबकोऊ नमस्कार करते हैं. जैसे द्वितीयाके चन्द्रमाको सब नमस्कार करते हैं, तैसे विचारवान्‌को सब नमस्कार करते हैं.हे रामजी! हमारे देखत देखत अल्पबुद्धिहू विचारकी दृढताते मोक्षपदको प्राप्त भये हैं, ताते विचार सबका परममित्र है. विचारवाला पुरुष अन्तर बाहिर शीतल रहता है; जैसे हिमालय पर्वत अन्तर बाहिर शीतल रहता है, तैसे वह भी शीतल रहता है. देख ! विचार करके ऐसे पदको प्राप्त होता है जो पद नित्य है, अरु स्वच्छ है, अनन्त है, परमानन्दरूप है, तिसको पायकर तिसके त्यागकी इच्छा होती नहीं औरके ग्रहणकी इच्छा नहीं होती है, उनको इष्ट

अनिष्ट विषे सब समान है; जैसे तरंगके होनेमें अरु लीन होनेमें समुद्र समान रहता है, तैसे विवेकी पुरुषको इष्ट अनिष्ट विषे समता रहती है, अरु संसारभ्रम मिट जाता है; आधाराधेयते रहित केवल अद्वैत तत्त्व उसको प्राप्त होता है.

हे रामजी ! यह जगत् अपनें मनके मोहते उपजता है, अरु अविचार कर दुःखदायी दीखता है. जैसे अविचार करके बालकको वैताल भासता है; तैसे इसको जगत् भासता है, जब ब्रह्म विचारकी प्राप्ति होवे तब जगत्भ्रम नष्ट हो जावे. हे रामजी ! जिसके हृदयमें विचार होता है, तहाँ समताकी उत्पत्ति होती है; जैसे बीजते अंकुर निकल आता है, तैसे विचारते समता हो जाती है. अरु विचारवान पुरुष जिसकी ओर देखता है, तिस ओर आनंद दृष्टि आता है, दुःख कोऊ नहीं भासता है. जैसे सूर्यको अंधकार दृष्टि नहीं आता, तैसे विचारवानको दुःख दृष्टिमें नहीं आता. जहाँ अविचार है तहाँ दुःख है; जहाँ विचार है तहाँ सुख है. जैसे अंधकारके अभाव हुए बैतालके भयका अभाव हो जाता है तैसे विचार कियेते दुःखका अभाव होजाता है.

हे रामजी ! संसाररूपी दीर्घ रोग है; तिसका नाशकरनेका विचार बडा औषध है. जिसको विचारकी प्राप्ति भई है, तिसके मुखकी कांति उज्ज्वल हो जाती है. जैसे

पूर्णमासीके चन्द्रमाकी उज्ज्वल कांति होती है, तैसी विचारवानके मुखकी उज्ज्वल कांति होती है. हे रामजी! विचार करके इसको परमपदकी प्राप्ति होती है. जिस करि अर्थसिद्धि होवे तिसका नाम विचार है. अरु जिस करि अनर्थसिद्धि होवे तिसका नाम अविचार है. अविचाररूपी मदिरा है, जो इसका पान करता है सो उन्मत्त हो जाता है. तिसते शुभ विचार कोऊ नहीं हो आवता; शास्त्रके अनुसार जो कछु क्रिया है, सो ताते नहीं होती, ताते अविचार करि अर्थसिद्धि नहीं होती.

हे रामजी! इच्छा रूपी रोग है, सो विचार रूपी औषध करके निवृत्त होता है, जिस पुरुषने विचार द्वारा परमार्थ सत्ताका आश्रय लिया है, सो परम शांत होजाता है, अरु हेय उपादेय बुद्धि तिसकी नहीं रहती, सब दृश्यको साक्षीभूत होकर देखता है, अरु संसारके भाव अभाव विषे ज्योंका त्यों रहता है. अरु उदय अस्तते रहित निःसंगरूप है. जैसे समुद्र जलकरि पूर्ण है तैसे विचारवान आत्मतत्त्व करि पूर्ण है. जैसे अंधा कूप विषे परा हुआ हस्तके बल करि निकसता है; तैसे संसाररूपी अंधकूपमें गिरा हुआ. विचारके आश्रय होकर विचारवान् पुरुष निकसनेको समर्थ होता है.

हे रामजी! राजाओंको जो कोऊ कष्ट आय प्राप्त होता है, तब वह विचार करके यत्न करते हैं, तब कष्ट निवृत्त हो जाता है. ताते तू विचार कर देख कि किसीको कष्ट प्राप्त

होता है सो विचारते मिटता है. तुम भी विचारका आश्रय करके सिद्धिको प्राप्त होहु; सो विचार इस कर प्राप्त होता है, जो वेद अरु वेदांत के सिद्धांतको श्रवण कर पाठकर भले प्रकार विचारेगा तब विचारकी दृढता कर आत्मतत्त्वको प्राप्त होवेगा. जैसे प्रकार कर पदार्थका ज्ञान होता है, तैसे गुरु अरु शास्त्रके वचन कर तत्त्वज्ञान होता है. जैसे प्रकाशमें अंधेको पदार्थकी प्राप्ति नहीं होती है, तैसे गुरु अरु शास्त्रसों जो विचारशून्य होवे तिसको आत्मपदकी प्राप्ति नहीं होती. हे रामजी ! जो विचाररूपी नेत्रकर संपन्न हैं सोई देखते हैं; अरु विचाररूपी नेत्रते जो रहित हैं सो अंध हैं.

हे रामजी ! ऐसा विचार कर कि मैं कौनहूं, अरु यह जगत् कौन है; अरु इसकी उत्पत्ति कैसी हुई है, अरु लीन कैसे होता है, इस प्रकार संत अरु शास्त्रके अनुसार विचार कर, सत्यको सत्य जान, अरु असत्यको असत्य जान. जिसको असत्य जाना है तिसका त्याग कर, अरु सत्यमें स्थित होय इसीका नाम विचार है. इस विचार कर आत्मपदकी प्राप्ति होती है. हे रामजी ! विचाररूपी दिव्यदृष्टि जिसको प्राप्त भई है, तिसको सब पदार्थका ज्ञान होता है. विचारसों आत्मपदकी प्राप्ति होती है, तिसको पायेते परिपूर्ण होता है. फिर शुभ अशुभ संसारमें चलायमान नहीं होता, ज्योंका त्यों रहता है. जब लग प्रारब्ध वेग होता है, तब लग शरीरकी चेष्टा होती है, जब लग अपनी इच्छा

होवे, तब लग शरीरकी चेष्टा करै. बहुरि शरीरको त्याग कर केवल शुद्धरूप होजाता है, ताते.

हे रामजी ! ब्रह्मविचारको आश्रय कर संसार समुद्रको तर जा. जो कोऊ रोगी होता है, सो एता रुदन नहीं करता; जेतारुदन विचार रहित पुरुष करता है, जिसको कष्ट प्राप्त होताहै, सो भी एता रुदन नहीं करता. हे रामजी ! जो पुरुष विचारते शून्यहै ! तिसको सब आपदा आय प्राप्त होतीहैं, जैसे सब नदी स्वभावसों समुद्रमें आय प्रवेश करती हैं, तैसे अविचारमें सब आपदा आय प्रवेश करती हैं. हे रामजी ! कीचका कीट होना सो भला है, अरु गर्त्तका कंटक होना सो भी भलाहै; अरु आंधरे बिलमें सर्प होना सो भलाहै, परंतु विचारते रहित होना सो भला नहीं. जो पुरुष विचारते रहितहै अरु भोगमें दौरताहै; सो श्वानहै.

हे रामजी ! विचारते रहित पुरुष बडे कष्टको पाता है ताते एक क्षणहू विचारते रहित नहीं रहना. विचार सों दृढ होकर निर्भय रहना; कि, मैं कौन हों, अरु दृश्य क्या है; ऐसा विचार करके सत्यरूप आत्माको ज्ञानकर दृश्यका त्याग करना. हे रामजी ! जो पुरुष विचारवान है; सो संसार भोगमें नहीं गिर जाता; अरु सत्यमें स्थित होताहै; विचार जब स्थिर होता है तब तिसते तत्त्वज्ञान होता है, तब तत्त्वज्ञानते विश्राम होता है; विश्रामते चित्तका उपशम होताहै, अरु चित्तके उपशमते सब दुःख नाश होते हैं.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे विचार निरूपणो नाम चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥

पञ्चदशः सर्गः १५.

अथ संतोषवर्णनम्.

वशिष्ठ उवाच, हे अविचार शत्रुके नाशकर्त्ता, रामजी! जिस पुरुषको संतोष प्राप्त भया है; सो परम आनंदित हुआ है; अरु त्रिलोकीका ऐश्वर्य उसको तृणकी नाईं तुच्छ भासता है. हे रामजी! जो आनंद अमृतपान कियेते नहीं होता; और जो आनंद त्रिलोकीके राज्यकर नहीं होता, तैसा आनंद संतोषवानको होता है. हे रामजी! इच्छारूपी रात्रि है, अरु सो हृदयरूपी कमलको सकुचाय देती है;और जब संतोषरूपी सूर्य उदय होता है, तब इच्छारूपी रात्रिका अभाव हो जाता है. जैसे क्षीरसमुद्र उज्वलता करके शोभता है, तैसे संतोषवानकी कांति सुशोभित होती है.

हे रामजी! त्रिलोकीके राजाजी इच्छा निमित्त न भई; तब सो दरिद्रीहैं, अरु जो निर्धनहै और संतोषवानहै, सो सबका ईश्वरहै. संतोष तिसकाई नाम है, श्रवण कर, जो अप्राप्त वस्तुकी इच्छा न करै, अरु प्राप्त होइ इष्ट अनिष्टमें राग द्वेष न धरै, इसका नाम संतोषहै; संतोष सोई परमपदहै. संतोषवान पुरुष सदा आनंद रूपहै; अरु आत्मस्थितिसों तृप्त हुआहै, तिसको और इच्छा कछु नहीं स्फुरती. अरु संतुष्टता कर तिसका हृदय प्रफुल्लित हुवाहै. जैसे सूर्यके उदयहुए सूर्यमुखी कमल प्रफुल्लित होताहै, तैसे

संतोषवान् प्रफुल्लित हो जाताहै. जो अप्राप्त वस्तुहै तिनकी इच्छा नहीं करता; अरु जो अनिच्छित प्राप्त भई है, तिसको यथाशास्त्र क्रम करके ग्रहण करताहै; तिसका नाम संतोषवानहै. जैसे पूर्णमासीका चंद्रमा अमृत कर पूर्ण होताहै, तैसे संतोषवान्‌का हृदय संतुष्टता करके पूर्ण होताहै; अरु जो संतोषते रहितहै, तिसके हृदयरूपी वनमें सदा दुःख अरु चिंतारूपी फूल फल उत्पन्न होतेई हैं.

हे रामजी ! जिसका चित्त संतोषते रहितहै, तिसको नाना प्रकारकी इच्छा होतीहै. जैसे समुद्रमें नानाप्रकारके तरंग होतेहैं, तैसे उपजती हैं. संतुष्टात्मा परम आनंदितहै, तिसको जगतके पदार्थमें हेयोपादेय बुद्धि नहीं होती. हे रामजी ! जैसा आनंद संतोषावानको होता है, तैसा आनंद अष्टसिद्धिके ऐश्वर्य करके भी नहीं होता. अरु अमृतके पान कियेते भी नहीं होता. संतोषवान् सदा शांतिरूप है; और सदा निर्मल रहता है. इच्छारूपी धूर सर्वदा उड़तीथी सो संतोषरूपी वर्षाकर शांत होगई है; तिस कारणते संतोषवान् निर्मल है.

हे रामजी ! संतोषवान् पुरुष सबको प्यारा लगता है. जैसे आंबका परिपक्क फल सुंदर होताहै, अरु सबको प्यारा लगताहै, तैसे संतोषवान् पुरुष सबको प्यारा लगता है; अरु स्तुति करने योग्य है. जिस पुरुषको संतोष

प्राप्त भया है. तिसको परमलाभ भया है. हे रामजी! जहाँ संतोष है, तहाँ इच्छा नहीं रहती है; अरु संतोषवान भोगमें दीन होकर नहीं रहता; वह उदारात्मा है; सर्वदा आनंदकर तृप्त रहताहै. जैसे मेघ पवनके आयेते नष्ट होजाता है, तैसे संतोषके आयेते इच्छा नष्ट होजाती है, अरु जो संतोषवान पुरुष है, तिसको देवता, ऋषीश्वर, सब नमस्कार करते हैं, अरु धन्य धन्य कहते हैं. हे रामजी! जब इस संतोषको धरेगा, तब परम शोभा पावेगा.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे संतोष निरूपणो नाम पंचदशः सर्गः ॥ १५ ॥

षोडशः सर्गः १६.

अथ साधुसङ्गवर्णनम्.

वशिष्ठ उवाच, हे रामजी! और जेते कछु दान तीर्थादिक साधन हैं, तिनकर आत्मपदकी प्राप्ति नहीं होती, साधु संगकर आत्मपदकी प्राप्ति होती है, साधु संगरूपी एक वृक्ष है, तिसका फूल आत्मज्ञान है. जिस पुरुषने फूलकी इच्छा करी है, सो अनुभवरूपी फलको पाता है. हे रामजी! जो पुरुष आत्मानंदते रहित है, सो सतसंगकर आत्मानंदसों पूर्ण होते हैं, अरु अज्ञान करके जो मृत्युको पाता है सो संतके संगते ज्ञान पायकर अमर होता है, अरु जो आपदा करके दुःखी है, सो संतके संगकर

संपदाको पाता है, आपदारूपी कमलका नाश करनहारा सत्संगरूपी बर्फकी वर्षा है, सत्संगसों कर आत्मबुद्धि प्राप्त होती है, तिसकर मृत्युते रहित होता है; और सब दुःखते रहित होता है; अरु परमानंदको प्राप्त होता है.

हे रामजी ! संतकी संगतिकर इसके हृदयमें ज्ञानरूपी दीपक जलता है; तिसकर अज्ञानरूपी तम नष्ट हो जाता है; अरु बडे ऐश्वर्यको प्राप्त होता है; बहुरि किसी भोग पदार्थकी इच्छा नहीं रहती, अरु बोधवान होता है; सबते उत्तम पदमें विराजता है; जैसे कल्पवृक्षके निकट गयेते वांछित फलकी प्राप्ति होती है, तैसे संसार समुद्रके पार उतारन हारे संतजन हैं. जैसे धीवर नौका करके पार लगाता है, तैसे संतजन युक्ति करके संसार समुद्रते पार करते हैं अरु मोहरूपी मेघका नाश करनहारा संतका संग है सो पवन है; जिनको देहादिक अनात्मसों स्नेह नष्ट भया है, अरु शुद्ध आत्मा विषे जाकी स्थिति है, तिसकर तृप्त भये हैं, बहुरि संसारके इष्ट अनिष्टते जाकी चलायमान बुद्धि नहीं होती; सदा समता भावमें स्थित रहे हैं; ऐसे संसार समुद्रके पार उतारनेमें फूल जैसे, अरु आपदा रूपी बेलिको जड समेत नाश करनहारे हैं.

हे रामजी ! संतजन प्रकाशरूप हैं तिनके संगते पदार्थकी प्राप्ति होती है. अरु जो अपने पुरुषार्थरूपी नेत्रते हीन हुए हैं इसको पदार्थकी प्राप्ति नहीं होती जिस पुरुषने सत्संगका त्याग किया है, सो नरकरूपी अग्निमें लकडीकी नाईं

जरैगा; अरु जिस पुरुपने सत्संग किया है तिसको नरक-रूपी अग्निका नाश करनहारा सत्संगरूपी मेघ है. हे रामजी ! सत्संगरूपी गंगा है, जाने सत्संगरूपी गंगाका स्नान किया, ताको बहुरि तप दान, आदि साधनका प्रयोजन नहीं, वह सत्संग करके परमगतिको प्राप्त होनेका है, ताते अपर सब उपाय त्यागकर सत्संगको खोजना. जैसे निर्धन, चिंतामणि आदिक धनको खोजताहै, तैसे मुमुक्षु सत्संगको खोजताहै; अध्यात्मकादि तीन तापसों जलताहै, तिसको शीतल करने हारा सत्संग है. जैसे तपी हुई पृथ्वी मेघकर शीतल होती है, तैसे सत्संगकर हृदय शीतल होता है.

हे रामजी ! मोहरूपी वृक्षका नाश करनहारा सत्संग-रूप कुहाडा है; सत्संग करके यह पुरुप अविनाशी पद-को प्राप्त होता है, जिस पदके पायेते और पावनेकी इच्छा नहीं रहती; ऐसा सबते उत्तम सत्संग है. जैसे सब अप्स-रानते लक्ष्मी उत्तम है, तैसे सत्संग कर्त्ता सबते उत्तम है; ताते अपने कल्याणके निमित्त सत्संग करना तुमको योग्य है. ताते हे रामजी! यह जो चारों मोक्षके द्वारपाल हैं, सो तुझको कहे; जो पुरुपने इनके साथ प्रीति करीहै, सो शीघ्र आत्मपदको प्राप्त होहिंगे. और जो इनकी सेवा नहीं करते सो मोक्षको प्राप्त नहीं होते. हे रामजी ! इन चारोंमेंसे एकहु जहाँ आता है, तहाँ तीनों औरहु आय जाते हैं; जहाँ समुद्र रहताहै, तहाँ सब नदी आय जातीहैं; तैसे जहाँ सम आताहै तहाँ संतोष विचार, अरु सत्संग ये तीनों आय जातेहैं, जहाँ साधुसंगम

होताहै,तहाँ संतोष,विचार, अरु सम ये तीनों आय जातेहैं; जहाँ कल्पवृक्ष रहता है तहाँ सब पदार्थ आय स्थित होते हैं; अरु जहाँ संतोष आता है, तहाँ सम विचार, सत्संग ये तीनों आय जाते हैं. जैसे पूर्णमासीके चंद्रमामें गुण कला सब इकट्ठी हो जाती हैं, तैसे जहाँ संतोष आता है, तहाँ और तीनों आय जाते हैं, अरु जहाँ विचार आता है, तहाँ संतोष, उपसम, अरु सत्संग, ये आय रहते हैं. जैसे श्रेष्ठ मंत्रीसों कर राज्यलक्ष्मी आय स्थित होती है, तैसे जहाँ विचार होता है, तहाँ और भी तीनों आते हैं, ताते हे रामजी ! जहाँ चारों इकट्ठे होते हैं, तहाँ परम श्रेष्ठ जानना; ताते हे रामजी ! चारों न होहिं तो एकका तो अवश्य आश्रय करना; जब एक आवेगा, तब चारों आय स्थित होवेंगे. मोक्षकी प्राप्ति होनेके यह चार परम साधन हैं; और उपायसों मुक्ति होनेकी नहीं.

श्लोक—

संतोषः परमो लाभः सत्संगः परमं धनम् ॥
विचारः परमं ज्ञानं शमश्च परमं सुखम् ॥ १ ॥

हे रामजी ! यह परम कल्याण कर्त्ता है, सो जो इनचारों कारि संपन्न है, तिसकी ब्रह्मादिक स्तुति करते हैं; ताते दंतको दंत लगाय इसका आश्रय करके मनको वश कर ले.

हे रामजी ! मनरूपी हस्ती विचाररूपी अंकुश करके वश होता है, अरु मनरूपी वनमें वासनारूपी नदी चलती है, तिसके शुभ अशुभ दो किनारे हैं; अरु पुरुषार्थ

करना यह है—कि, अशुभकी ओरते रोकके शुभकी ओर चलावना; जब अंतर्मुख आत्माके सन्मुख वृत्तिका प्रवाह होवेगा, तब तू परमपदको प्राप्त होवेगा. हे रामजी ! प्रथम तो पुरुषार्थ करना यही है कि, अविचाररूपी ऊँचाईको दूर करना; जब अविचाररूपी बेट दूर होवेगा, तब आपही प्रवाह चलेगा. हे रामजी ! दृश्यकी ओर जो प्रवाह चलता है, सो बंधनका कारण है; जब आत्माकी ओर अंतर्मुख प्रवाह होवे तब मोक्षका कारण हो जाय आगे जो तेरी इच्छा होवे सो कर.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे साधुसंग
निरूपणं नाम षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥

सप्तदशः सर्गः १७.

अथ षट्प्रकरणवर्णनम्.

वसिष्ठ उवाच, हे रामजी ! यह मेरे वचन हैं सो परम पावन हैं, जो विचारवान् शुद्ध अधिकारी है, तिसको यह वचन परमबोधका कारण हैं; जो पुरुष शुद्ध पात्र है, सो इन वचनोंको पायके शोभते हैं; और बचनहू उनको पायके शोभा पातेहैं,जैसे मेघके अभावते शरदकालमें चंद्रमा अरु आकाश शोभतेहैं, तैसे शुद्ध पात्रमें यह वचन शोभते हैं अरु जिज्ञासु विमल वचनकी महिमा सुनके प्रसन्न होता है.

हे रामजी ! तुम परमपात्र हो, अरु मेरे वचन परम उत्तम हैं; यह महारामायण मोक्षोपायक शास्त्र है, सो

आत्मबोधका परम कारण है; अरु परम पावन वाक्यकी सिद्धता है; अरु युक्तियुक्तार्थ वाक्य है; अरु नानाप्रकारके दृष्टांत कहे हैं जिनके बहुत जन्मके पुण्य आय इकट्ठे होते हैं, तिनको कल्पवृक्ष मिलता है. सो फल कर झुक पडता है; तब तिनको यह शास्त्र श्रवण होता है; अरु नीचको इनका श्रवण प्राप्त नहीं होता है, उसकी वृत्ति इनके श्रवणमें नहीं आती है; जैसे धर्मात्मा राजाकी इच्छा न्याय शास्त्रके श्रवणमें होती है, अरु जो पापात्मा राजा है, तिसकी इच्छा नहीं होती.

हे रामजी ! तैसे पुण्यवानकी इच्छा इसके श्रवणमें होतीहै. अरु अधमकी इच्छा नहीं होती; जो कोई मोक्षोपायक इसरामायणका अध्ययन करैगा, अथवा निष्काम संतके मुखते श्रद्धायुक्त श्रवण करैगा अरु आदिते लेकर अंतपर्यंत एकत्र भाव होकर विचारेगा, तब तिसका संसारभ्रम निवृत्त होजावेगा. जैसे जेवरीके जाननेते सर्पका भ्रम दूर हो जाता है; तैसे अद्वैतात्मतत्त्वके जाननेते तिसका संसार भ्रम नष्ट होजावेगा. सो.

इस मोक्षोपायक शास्त्रके बत्तिस सहस्र श्लोक हैं, अरु षट् प्रकरण हैं.

प्रथम वैराग्य प्रकरण है, सो वैराग्यका परम कारण है. हे रामजी ! मरुस्थलमें वृक्ष नहीं होता, परन्तु बडी वर्षा होवे तब तहाँ वृक्ष होता है; तैसे अज्ञानीका हृदय मरुस्थलकी नाईं है, तिसमें वैराग्यरूपी वृक्ष नहीं होता, परन्तु

यह शास्त्ररूपी जो बडी वर्षा होवे, तिसकर वैराग्यरूपी वृक्ष उत्पन्न होता है; तिसके एक सहस्र पांचसौ श्लोक हैं, तिसके अनंतर.

मुमुक्षु व्यवहार प्रकरण है तिसमें परम निर्मल वचन है. तिस करके मलीन मणि हुई ताका मार्जन कियेते उज्ज्वल हो आती है. तैसे यह वचनतें मुमुक्षुका हृदय निर्मल होता है. अरु विचारके बलते आत्मपद पानेको समर्थ होता है, तिसके एक सहस्र श्लोक हैं; तिसके अनंतर.

उत्पत्ति प्रकरण है;तिसके पंच सहस्र श्लोक हैं; तिसमें बडी सुंदर कथा दृष्टांत सहित कहीहैं; जिस विचारते जगत्का सत्यताभाव मनते चलायमान रहता है; अर्थ यह जो जगत्का अत्यन्त अभाव जान परता है. हे रामजी! यह जगत्में जो मनुष्य, देवता, दैत्य, पर्वत, नदी, आदि स्वर्गलोक, पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश, आदि स्थावर जंगम भासता है सो अज्ञान करकेहैं;अरु इसकी उत्पत्ति कैसे भई है; जैसे जेवरीमें सर्प होताहै, अरु सीपमें रूपा होता है, अरु सूर्यके किरणमें जल दीखताहै; आकाशमें तरुवर दीखता है; और जैसें दूसरा चंद्रमा दीखता है; जैसे गंधर्व नगर भासते हैं; मनोराजकी सृष्टि भासती है, अरु संकल्पपुर होताहै, अरु सुवर्णमें भूषण होताहै, समुद्रमें तरंग होताहै, आकाशमें नीलता दीखतीहै, जैसे नौकामें बैठते किनारेके वृक्ष पर्वत चलते दृष्टि आतेहैं, अरु बादरके चलेते चन्द्रमा धावता दीखताहै, और थंभमें पूतरी भासतीहै, भ-

विष्यत नगरते आदिलेकर असत्यपदार्थ जैसे सत्य भासते हैं, तैसे सबजगत् आकाशरूप है, अज्ञानकरके अर्थाकार भासताहै सो अज्ञान करकै उत्पत्ति देखतीहै,सो अरु ज्ञान करके लीन होजाताहै जैसे निद्रामें स्वप्न सृष्टिकी उत्पत्ति होतीहै, अरु जागेते निवृत्त होजातीहै; तैसे अविद्या करके जगत्की उत्पत्ति होतीहै, अरु सम्यक् ज्ञान करके निवृत्तहो जातीहै; सो अविद्या कछु वस्तुहू नहीं, सर्व ब्रह्म चिदाकाश रूप है; सो शुद्ध है, अनंत है, परमानंद स्वरूप है, तिसमें न जगत् उपजताहैं, न लीन होताहै,ज्योंकी त्यों आत्मसत्ता अपने आपविषे स्थित है तिसमें जगत् ऐसा है जैसे भीतमें चित्र होताहै, जैसे थंभमें पुतरियां होतीहैं, अरु हुए बिना भासतीहैं,तैसे यह सृष्टि मनमें रहीहै,वास्तवते कछु बनी नहीं सब आकाशरूप है,जब चित्त संवेदन स्पंद रूप होताहै, तब नाना प्रकारका जगत् होयके भासताहै, अरु जब निष्पंद होताहै तब जगत् मिट जाताहै, इस प्रकार जगत्की उत्पत्ति कही है- तिसके अनंतर, स्थिति प्रकरण है, तिसमें जगत्की स्थिति कही है; जैसे इंद्रका धनुष आकाशरूप हैं और अविचार करके रंगसहित भासता है, जैसे सूर्यकी किरणोंमें जल भासता है, जैसे जेवरीमें सर्प भासता है सो सब सम्यग्दृष्टि करके निवृत्त होता है, तैसे अज्ञान करके जगत्की प्रतीति होती है, सो मनोराज करके जगत् रच लेता है, सो कछु उत्पन्न हुआ नहीं है, तैसे यह जगत् संकल्पमात्र है, जब लग मनोराज है, तब लग

वह नगर होता है, जब मनोराजका अभाव हुआ, तब नगरका अभाव हो जाता है. जबलग अयान होता है, तब लग जगत्की उत्पत्ति होती है, जब संकल्पका लय हुआ तब जगत्का अभाव होजाता है: जैसे इंद्र, ब्रह्माके पुत्रहूकी दश सृष्टि संकल्प करके स्थित भई, तैसे यह जगत् भी है, कोऊ पदार्थ अर्थरूप नहीं. हे रामजी! इस प्रकार स्थिति प्रकरण कहा है, तिसके तीनसहस्र श्लोक हैं. तिसके विचार करके जगत्की सत्यता जात रहती है, तिसके अनंतर.

उपशम प्रकरण है. तिसके पंच सहस्र श्लोक हैं. तिसके विचारेते अहंतत्त्वादिक वासना लीन होजाती हैं, जैसे स्वप्नते जागेते वासना जात रहती है तैसे विचार कियेते अहंतादिक वासना लीन होती जाती है. काहेते कि उसके निश्चयमें जगत् नहीं रहता, जैसे एक पुरुप सोया है, तिसको स्वप्नेमें जगत् भासता है, और उसके निकट जो जाग्रत पुरुप है, तिसको स्वप्नका जगत् आकाशरूप है जब आकाशरूप हुआ तब वासना कैसे रहे, जब वासना नष्ट भई तब मन मनका उपशम हो जाता है, तब देखने मात्रको उसकी सब चेष्टा होतीहै, और इसके मनमें अर्थरूप इच्छा नहीं होती, जैसे अग्निकी मूर्त्ति देखने मात्रको होती है, अर्थाकार नहीं होती, तैसे उसकी चेष्टा होती है. हे रामजी! जब मनते इच्छा नष्ट होती है, तब मन भी निर्वाण हो जाता है, जैसे तेलते रहित दीपक निर्बाण होता है, तैसे

इच्छाते रहित मन निर्वाण होता है; इस प्रकार उपशम प्रकरण है; तिसके अनंतर-

निर्वाण प्रकरण है- जो शेष है- तिसमें परम निर्वाण वचन कहे हैं अज्ञान करके चित्त अरु चित्तका संबन्ध है- सो विचार कियेते निर्वाण होजाता है- जैसे शरदकालमें मेघके अभावते शुद्ध आकाश होता है, तैसे पुरुष विचार करके निर्मल होता है- हे रामजी ! अहंकार रूपी पिशाच है, सो विचार करके नष्ट होता है- जेती कछु इच्छा स्फूर्त्ति है- सो निर्वाण हो जाती है, जैसे पत्थरकी शिला फुरनेते रहित होती है तैसे ज्ञानवान इच्छाते रहित होता है, तब जेती कछु जगत्की यात्रा है- सो इसको होय चुकती है, जो कछु करना है सो कर चुकता है- हे रामजी ! शरीर होतेही वह पुरुष अशरीरी होजाता है- अरु नाना प्रकारका जगत् तिसको नहीं भासता- जगत्की नेतीते वह रहित होता है, अहंतत्त्वादिक तमरूप जगत् तिसको नहीं भासता है; जैसे सूर्यको अंधकार दृष्टि नहीं आवता, तैसे उसको जगत् दृष्टिमें नहीं आता, अरु ऐसे बडे पदको प्राप्त होता है, जैसे सुमेरु पर्वतके किसी कोनमें कमल होता है- तिसके ऊपर भौंरा स्थित रहते हैं, तैसे ब्रह्माके किसी कोनपै जगत् तुषाररूपी है- अरु जीवरूपी भौंरे तिसपर स्थित हैं, वह पुरुष अचिंत्य चिन्मात्र है, रूप अवलोकन, मन, तिसका आकाशरूप हो जाता है, तिस

पदको वह प्राप्त होता है, जिस पदकी योग्य उपमा कहने को ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र समर्थ नहीं ऐसे अनुपमताके सदृश कोऊ नहीं है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे पट्प्रकरण विवरणं नाम सप्तदशः सर्गः ॥ १७ ॥

अष्टादशः सर्गः १८.

अथ दृष्टांतवर्णनम्.

वसिष्ठ उवाच, हे रामजी ! यह परम उत्तम वाक्य है, इसको विचारनहारा उत्तम पदको प्राप्त होताहै. जैसे उत्तम खेतमें उत्तम बीज बोयेते उत्तम फलकी उत्पत्ति होती है तैसे इसको विचारनहारा उत्तम पदको प्राप्त होता है; यह वाक्य कैसे हैं, जो युक्ति पूर्वक वाक्य. और युक्तिते रहित ऋपि वाक्य भी होहिं, तो तिनका त्याग करिये; और युक्ति पूर्वक वाक्यका अंगीकार करियें.

हे रामजी ! जो ब्रह्माके वचन युक्तिते रहित होहिं तब तिनको भी सूखे तृणकी नाईं त्याग करिये, अरु बालकके वचन युक्ति पूर्वक होहिं, तो तिनका अंगीकार करिये, और पिताके कूपका खारा जल होवे, तो उसका त्याग करिये, और निकट मिष्ठ जलका कूप होवे, तब तिसका पान करिये, तैसे बड़े अरु छोटेका विचार न करके; युक्ति पूर्वक वचनका अंगीकार करना; हे रामजी ! मेरे वचन सब युक्ति

पूर्वक हैं; अरु बोधके परमकारण हैं; जो पुरुष एकाग्र होयके इस शास्त्रको आदिते अंत पर्यंत पढ़े अथवा पंडित सों श्रवण करके विचारे, तब तिसकी बुद्धि संस्कारित होवे;

प्रथम वैराग्य प्रकरणको विचारेगा, तब वैराग्य उपजैगा जेते कछु जगत्के रमणीय भोग पदार्थ हैं, तिनको विरस जानेगा, अरु किसी पदार्थकी वांछा न करैगा; जब भोगमें वैराग्य होता है; तब शांतिरूप आत्मतत्त्वमें प्रतीति होती है; जब विचार करके बुद्धि संस्कारित होवेगा, तब शास्त्रका सिद्धांत बुद्धिमें आय स्थित होवेगा. और संसारके विकार रहित बुद्धि निर्मल होवेगी जैसे शरत् कालमें बादरके अभाव हुएते आकाश सब ओरते स्वच्छ होता है, तैसे बुद्धि निर्मल होवेगी; बहुरि आधिव्याधिकी पीडा उसको न होवेगी. हे रामजी ! ज्यों ज्यों विचार दृढ होवेगा; त्यों त्यों शांतात्मा होवेगा, ताते जेते कछु संसारके यत्न हैं तिनका त्याग कर इस शास्त्रको वारंवार विचारेते चैतन्य सत्ता उदय होवेगी, त्यों त्यों लोभ मोहादिक विचारकी सत्ता नष्ट होवेगी. ज्यों ज्यों सूर्य उदय होता है, त्यों त्यों अंधकार नष्ट होता है; तैसे विकार नष्ट होवेगा तब तिस पदकी प्राप्ति होवेगी. जिसके पायेते संसारके क्षोभ मिट जायँगे; जैसे शरदकालमें मेघ नष्ट हो जाता है, तैसे संसारके क्षोभ मिट जाते हैं.

हे रामजी ! ज्ञानवान् पुरुषको संसारके राग द्वेष वेधि नहीं सकते. जैसे जिस पुरुषने कवच पहिरा होय; तिसको

बाण वेध नहीं सकते, उसको भोगकी इच्छा नहीं रहती; जब विषय भोग विद्यमान आयरहे, तब तिनको विषय भूत जानके बुद्धि ग्रहण नहीं करती. अर्थ जानकर बाहर नहीं निकसती, अंतर आत्मामेंही स्थित रहती है पतिव्रता स्त्री अपने अंतःपुरते बाहर नहीं निकलती तैसे ताकी बुद्धि अंतरते बाहर नहीं निकलती. हे रामजी! बाहरते तो वह भी प्रकृतिजन्य की नाईं दृष्टि आते हैं जो कछु अनिच्छित प्राप्त होतेहैं, तिसको भुगतता हुआ दृष्टिमें आता है; और अंतरते उसका राग द्वेष नहीं फुरता.

हे रामजी!जेता कछु जगत्‌की उत्पत्ति प्रलयका क्षोभहै सो ज्ञानवानको नष्ट नहीं कर सकता; जैसे चित्रकी बेलि को आंधी चलाय नहीं सकती, तैसे उसको जगत्‌का दुःख चलाय नहीं सकता, अरु संसारकी ओरते जड़ होजाताहै. वृक्षकी नाईं गंभीर हो जाताहै, अरु पर्वतकी नाईं स्थिर हो जाता है, अरु चंद्रमाकी नाईं शीतल होजाताहै-हे रामजी! सो आत्मज्ञानकरके ऐसे पदको प्राप्त होताहै,जिसके पायेते और कछु पाने योग्य नहीं रहता, आत्मज्ञानका कारण यह मोक्षोपाय शास्त्र है, जामें नाना प्रकारके दृष्टांत कहे हैं. जो वस्तु अपरिच्छिन्न होवे; अरु देखनेमें न आई होय;तिसका न्याय देखनेमें होवे; तिसको विधिपूर्वक समुझावे उसका नाम दृष्टांतहै. हे रामजी! यह जगत् कार्यकारणरूपहै;अरु आत्मा जगत्‌की एकता कैसे होवे; ताते जो मैं दृष्टांत कहोंगा तिसका एक अंश अंगीकार करना सब देशकर अंगीकार

नहीं करना. हे रामजी! कार्य कारणकी कल्पना मूर्खने करी है, तिसको निषेधकरनेके निमित्त मैं स्वप्न दृष्टांत कहोंहों,सो समुझनेते तेरे मनका संशय नष्ट होजावेगा अरु दृश्यका भेद मूर्खको भासता है; तिसके दूर करनेके अर्थ स्वप्न दृष्टांत कहोंगा; तिसके विचारने करि मिथ्या विभाग कल्पनाका अभाव होता है.हे रामजी! ऐसी कल्पनाका नाश कर्त्ता यह मेरा मोक्ष उपाय शास्त्र है, जो पुरुष आदिते अंत पर्यंत विचारेगा सो संस्कारी होवेगा. जो पद पदार्थको जाननें हारा होवे, अरु इसको वारंवार विचारे तब तिसका दृश्य भ्रम नाश पावे. इस शास्त्रके विचारविषे अपर किसी तीर्थ, तप दान आदिककी अपेक्षा नहीं, जहां स्थान होवे तहां बैठे जैसा भोजन गृह विषे होवे तैसा करै, अरु वारंवार इसका विचार करै, तब अज्ञान नष्ट होजावे. अरु आत्मपदकी प्राप्ति होवे. हे रामजी! यह शास्त्र प्रकाश रूपहै, जैसे अंधकार विषे पदार्थ नहीं दीखता,अरु दीपकके प्रकाश करि चक्षु सहित देखता है तैसे शास्त्ररूपी दीपक विचाररूपी नेत्रसहित होवे तब आत्मपदकी प्राप्ति होवे.

हे रामजी! आत्मज्ञान, विचार विना वर शापकरिप्राप्त नहीं होता, जब विचार करि दृढ अभ्यास करिके, तब प्राप्त होताहै. ताते मोक्ष उपाय जो परम पावन शास्त्र, तिसते विचारते जगत् भ्रम नष्ट होजावेगा.जगत्के देखत देखते जगत् भाव मिट जावेगा जैसे सर्पकी मूर्ति लिखी होतीहै,अरु अविचार करके तिससे भय पाताहै, जब विचार

करि देखिये तब सर्प भ्रम मिटजाता है, सो सर्पका आंकार दृष्टि आताहै, परंतु उसका भय मिट जाताहै, तैसे यह जगत् भ्रम विचार कियेते नष्ट होजाताहै, अरु जन्म मरणका भय नहीं रहता. हे रामजी! जन्म मरणका भयभी बडा दुःखहै, परंतु इस शास्त्रके विचारते नष्ट होजाताहै. जिन्होंने इसका विचार त्यागाहै सो माताके गर्भ विषे कीट होवेंगे, अरु कष्टते नहीं छूटेंगे, अरु विचारवान् पुरुष आत्मपदको प्राप्त होवेगा, अरु जो श्रेष्ठज्ञानी अनंतहै तिसको अपना रूप भासताहै, कोऊ पदार्थ आत्माते भिन्न नहीं भासता जैसे जिसको जलका ज्ञान हुआहै, तिसको लहरी आवर्त्त सब जल रूपही भासताहै,तैसे ज्ञानवानको सब आत्मारूप भासताहै. अरु इंद्रियहूके इष्ट अनिष्टकी प्राप्तिमें इच्छा द्वेष नहीं करता, सदा, एक रस मनके संकल्पते रहित शांतरूप होताहै. जैसे मंदराचल पर्वतके निकसेते क्षीर समुद्र शांतिको प्राप्त भया, तैसे संकल्प विकल्प रहित यह पुरुष शांतिरूप होता है.

हे रामजी! और जो तेज होताहै. सो दाहक होता है परन्तु ज्ञानरूपी तेज जिस घट विषे उदय होताहै, सो शीतल शांतिरूप होता है, बहुरि तिस विषे संसारका विकार कोऊ नहीं रहता. जैसे कलियुग विषे शिखावाला तारा उदय होताहै, सो कलियुगके अभाव हुए नहीं उदय होता. तैसे ज्ञानवानके चित्तमें विकार उत्पन्न नहीं होता.

हे रामजी!संसार भ्रम आत्माके प्रमादकरि उत्पन्न होता है. सो आत्मज्ञानके प्राप्त भये यत्नविना शांत होजाता है.

फूल पत्र काटनेमें भी कछु यत्न होता है;परन्तु आत्माके पावनेमें कछु यत्न नहीं होता,काहेते कि बोधरूपी बोधही करके जानताहै. हे रामजी!जो जानने मात्र जानस्वरूपहै. तिसमें स्थित होनेका क्या यत्न है आत्मा शुद्ध अद्वैतरूप है, अरु जगत् भ्रममात्र है. जो पूर्व अपर विचार कियेते जिसकी सत्यता न पाइये तिसको भ्रम मात्र जानिये; अरु पूर्व अपर विचार कियेते सत्यहोवे तिसका रूप जानिये, सो इस जगत्की सत्यता आदि अंतविषे नहीं है, ताते स्वप्नवत् है, जैसे स्वप्न आदि अंतमें कछु है नहीं तैसे जाग्रत भी आदि अंतमें नहीं है, ताते जाग्रत स्वप्न दोनों तुल्य हैं.

हे रामजी ! यह वार्ता बालक भी जानताहै; कि आदि अंतमें जिसकी सत्यता न पाइये, सो स्वप्नवत है, जो आदि भी न होय अरु अंतभी न रहै, तिसको मध्यमें भी असत्य जानिये, तिस विषे यह दृष्टांत कहेहैं—संकल्प पुरीवत, ध्यान नरगकी नाईं स्वप्नपुरीकी नाईं, वर शाप करके जो उपजाताहै तिसकी नाईं, औषधिते उपजकी नाईं इस पदार्थकी सत्यता न आदि होतीहै, न अंत होतीहै; अरु मध्यमें जो भासताहै, सो भी भ्रममात्रहै. तैसे यह जगत् अकारणहै, अरु कार्य, कारण भाव संबंधमें भासताहै, तो कार्य कारण जगत् भया, अरु आत्मसत्ता अकारणहै;जगत साकारहै,अरु आत्मा निराकारहै.

इस जगत्का दृष्टांत जो आत्मा विषे देऊंगा तिसको तुम एक अंश ग्रहण करना. जैसे स्वप्नकी सृष्टि होतीहै, तिसका

पूर्व अपर भाव आत्मतत्त्व विषे मिलता है,काहेते, कि अकारण है; अरु मध्य भावका दृष्टांत नहीं मिलता, काहेते कि उपमेय अकारणहै;तो तिसका इस समान दृष्टांत कैसे होवे? ताते अपने बोधके अर्थ दृष्टांतका एक अंश ग्रहण करना. हे रामजी ! जो विचारवान् पुरुष है; सो गुरु अरु शास्त्रके श्रवण करके सुखबोधके अर्थ दृष्टांतका एक अंश ग्रहण करते हैं. हे रामजी ! तिसको आत्मतत्त्वकी प्राप्ति होती है, काहेते कि सारग्राहक होते हैं अरु जो अपने बोधके अर्थ दृष्टांतका एक अंश ग्रहण नहीं करते, अरु वाद करते हैं, तिसको आत्मतत्त्वकी प्राप्ति नहीं होती, ताते दृष्टांतका एक अंश ग्रहण करना, सर्व भाव करके दृष्टांतको नहीं मिलावना अरु पृथक्को देखि करि तर्क नहीं करना. एक अंश दृष्टांतका आत्मबोधके निमित्त सारभूत ग्रहण करना. जैसे अंधकारमें पदार्थ परा होवे, सो दीपकके प्रकाशसों देख लेना, जो दीपकके साथ प्रयोजनहै, और ऐसे नहीं कहना कि दीपक किसका है अरु तेल बाती कैसा है, अरु किस स्थानका है, दीपकका प्रकाश ही अंगीकार करना, तैसे एक अंश दृष्टांतका आत्मबोधके निमित्त अंगीकार करना.

हे रामजी ! जिस करि वाक्य अर्थ सिद्धि न होवे तिसका त्याग करना; जो वचन अनुभवको प्रगट करै तिसका अंगीकार करना. जो पुरुष अपने बोधके निमित्त वचनको ग्रहण करता है, सोई श्रेष्ठहै, अरु जो वादके निमित्त ग्रहण करता है सो चोगचूंच है, वह अर्थको सिद्ध नहीं करता,

जो कोऊ अभिमानको लेकर कहता है, सो हस्तीकी नाईं शिरपर माटी डारता है, तिसका अर्थ सिद्ध नहीं होता, अरु जो अपने बोधके निमित्त वचनको ग्रहण करताहै,अरु विचार करि तिसका अभ्यास करताहै, तब वह आत्मा शांतिको पाताहै. हे रामजी ! आत्मपद पावने निमित्त अवश्यमेव अभ्यास चाहिता है;जब शम,विचार संतोष,अरु संतसमागम करि बोधकी प्राप्ति होवे तब, परमपदको पाता है.

हे रामजी ! जिसका दृष्टांत कहता है, सो एक देश लेकरि कहता है, सर्व मुख कहने करि अखंडताका अभाव होय जाता है; अरु जो सर्व मुख दृष्टांत मुखको जानिये, सो सत्यरूप होता है, ऐसे तो नहीं. आत्मा सत्यरूप है, कार्य कारणते रहित शुद्ध चैतन्य है; तिसके लिखावने निमित्त कार्य कारण जगत् दृष्टांत कैसे दीजिये; यह जगत्का जो दृष्टांत कहता है सो एक अंश लइ कहता है; अरु बुद्धिमान् भी दृष्टांतके एक अंशको ग्रहण करते हैं. जो श्रेष्ठ पुरुषहैं सो अपने बोधके निमित्त सारको ग्रहण करते हैं अरु जिज्ञासुको भी यही चाहता है, कि अपने बोधके निमित्त सारको ग्रहण करे,अरु वाद न करे.जैसे क्षुधार्थीको चावल पाक आय प्राप्त होवहिं, तब भोजन करनेका प्रयोजन है; अरु उसकी उत्पत्ति अरु स्थितिका वाद करना व्यर्थ है.

हे रामजी ! वाक्य सोई है जो अनुभवको प्रगट करे. अरु जो अनुभवको प्रगट न करे तिसका त्याग करना; जो स्त्रीका वाक्य होवे अरु आत्म अनुभवको प्रत्यक्ष करे तिसका

ग्रहण करना; अरु परमगुरु वेद वाक्य होवे और अनुभको प्रगट न करै तिसका त्याग करना. जबलग विश्रामको नहीं पाया, तबलग विचार कर्तव्य है; विश्रामका नाम तूर्यपद है; जब विश्रामकी प्राप्ति भई तब अक्षय शांति होती है. हे रामजी ! जो तूर्यपद संयुक्त पुरुष है, तिसका श्रुति स्मृति, उक्त कर्महूके करने करि प्रयोजन सिद्ध कछु नहीं होता अरु न करनेकरि कछु पाप नहीं होता, संदेह होवे,भावे विदेह होवे,गृहस्थ होवे, भावे विरक्त होवे; तिसको कर्तव्य कछु नहीं वह पुरुष संसार समुद्रते पार हुआ है.

हे रामजी ! उपमेयको उपमा करि जानता है, सो एक अंशको ग्रहण करि जानताहै, तब बोधकी प्राप्ति होती है, अरु जो बोधते रहित है, सो मुक्तिको प्राप्त नहीं होता वह व्यर्थ वाद करताहै. हे रामजी ! शुद्ध स्वरूप आत्मसत्ता जिसके घटविषे विराजमानहै, तिसको त्याग करि अपर विकल्प उठावताहै सो चोगचूंच है अरु मूर्ख है.

हे रामजी ! जो अर्थ प्रत्यक्ष है, सो प्रमाण मानने योग्य है, और जो अनुमान, अर्थापत्ति, आदि प्रमाणसों तिसकी सत्ता प्रत्यक्ष करि होती है. जैसे सब नदीका अधिष्ठान समुद्र है, तैसे सब प्रमाणहूका अधिष्ठान प्रत्यक्ष प्रमाण है, सो प्रत्यक्ष क्या है, सो श्रवण करहु.

हे रामजी ! चक्षुरूपी ज्ञान संमत संवेदन है, तिस चक्षु करके विद्यमान होता है, तिसका नाम प्रत्यक्ष प्रमाण है; तिन प्रमाणहूको विषय करने हारा जीवहै; अपने वास्तव

स्वरूपके अज्ञानकरि अनात्मारूपी दृश्य बनीहै, तिस विषे अहंकृति करके अभिमान भयाहै. अभिमान सब दृश्य है, ताते हेयोपादेय बुद्धि भई है, अरु राग द्वेष करके परा जलता है, आपको कर्ता मानि करि बहिर्मुख हुआ भटकता है.

हे रामजी ! जब विचार करके संवेदन अंतर्मुखी होवे, तब आत्मपद प्रत्यक्ष होता है, अरु निज भावको प्राप्त होता है, परिछिन्न भाव नहीं रहता; शुद्ध शांतिको प्राप्त होता है. जैसे स्वप्नेते जागेते स्वप्नका शरीर अरु दृश्य भ्रम नष्ट होजाता है. तैसे आत्माके प्रत्यक्ष हुएते सब भ्रम मिट जाता है, अरु शुद्ध आत्मसत्ता भासती है. हे रामजी ! यह जो दृश्य अरु द्रष्टा है, सो मिथ्या है, जो द्रष्टा है सो दृश्य होता है, अरु जो दृश्य है सो द्रष्टा होता है, सो यह भ्रम मिथ्या आकाश रूप है. जैसे पवनमें स्पंद शक्ति रहती है, तैसे आत्ममें संवेदन रहती है जब संवेदन स्पंदरूप होती है तब दृश्यरूप होयके स्थित होती है, जैसे स्वप्नमें अनुभव सत्ता दृश्य रूप होयके स्थित होती है, तैसे यह दृश्य है; ताते सब आत्मसत्ताहै, ऐसे विचार करि आत्मपदको प्राप्त होवहु. अरु जो ऐसे विचार करके आत्मपदको प्राप्त न होय सको, तब अहंकार जो उल्लेख फुरता तिसका अभाव करो; पाछे जो शेष रहैगा सो शुद्ध बोध आत्मसत्ताहै. जब शुद्ध बोधको तुम प्राप्त होहुगे, तब ऐसे चेष्टा पडी होवेगी. जैसे जंत्रीकी पुतरी संवेदन बिना चेष्टा करतीहै, तैसे देहरूपी पुतरीका पालनहारा मनरूपी संवेदनहै तिस बिना पडी

रहैगी; परंतु अहंकृतका अभाव होवेगा; ताते यत्न करके तिसपदके पानेका अभ्यास करो जो नित्य शुद्ध शांतरूपहै.

हे रामजी! और दैव शब्दको त्याग करि अपना पुरुषार्थ करो, अरु आत्मपदको प्राप्त होहु. कोऊ पुरुषार्थमें शूरमा है सो आत्मपदको प्राप्त होता है, अरु जो नीच पुरुषार्थका आश्रय करता है, सो संसारसमुद्रमें डूबता है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे ममक्षुप्रकरणे दृष्टांतप्रमाणं नाम अष्टादशः सर्गः ॥ १८ ॥

एकोनविंशतितमः सर्गः १९.

अथ आत्मप्राप्तिवर्णनम्.

वसिष्ठ उवाच, हे रामजी! जब सत्संग करके यह पुरुष शुद्ध बुद्धि करै, तब आत्मपदपानेको समर्थ होवे; प्रथम सत्संग यह है जिसकी चेष्टा शास्त्रहूके अनुसार होवे; तिसका संगकरै; तिसके गुणहूको हृदय विषे धरै; बहुरि महापुरुषके सम संतोष आदिक गुणहूका आश्रय करै;सम संतोषादिक करि ज्ञान उपजता है जैसे मेघहू करि अन्न उपजताहै; अरु अन्न करि जगत् होताहै, अरु जगत्हूते मेघ होताहै तैसे शम संतोष भी है. शमादिक गुणकरि ज्ञान उपजताहै, अरु आत्मज्ञान करि शमादिक गुण आय स्थित होतेहैं. जैसे बडे तालकरि मेघ पुष्ट होताहै,अरु मेघ करि ताल पुष्ट होता आत्म है; तैसे शमादिक गुण करि आत्मज्ञान होताहै, अरु

ज्ञानते शमादिक गुण पुष्ट होतेहैं, ऐसे विचारकरके शम संतोषादिक गुणोंका अभ्यास करहु, तब शीघ्रही आत्मतत्त्वको प्राप्त होवेगा. हे रामजी ! ज्ञानवान् पुरुषको शमादिक गुण स्वाभाविक आय प्राप्त होतेहैं, अरु जिज्ञासीको अभ्यासकरके प्राप्त होतेहैं अरु जैसे धान्यकी पालन स्त्री करतीहै, ऊंच शब्द करतीहै जिस करि पक्षीहूको उडावतीहै जब इसप्रकार पालनाकरतीहै, तब फलको पातीहै तिसकरि पुष्टहोतीहै, तैसे शम संतोषादिकके पालनेकरि आत्मतत्त्वकी प्राप्ति होतीहै.

हे रामजी ! इस मोक्ष उपाय शास्त्रको आदिते लेकर अंतपर्यंत विचारे तब भ्रांति निवृत्त होवे. धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सर्व पुरुषार्थ कर सिद्ध होतेहैं; परन्तु यह मोक्ष उपाय शास्त्र परम कारण है, जो शुद्ध बुद्धिमान् पुरुष इसक विचारेगा, तिसको शीघ्रही आत्मपदकी प्राप्ति होवेगी, याते इस मोक्ष-उपाय शास्त्रका भली प्रकार अभ्यास करो.

इति श्रीयोगवाशिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे आत्मप्राप्तिवर्णनं नाम एकोनविंशतितमः सर्गः ॥ १९ ॥

समाप्तमिदं योगवासिष्ठमुमुक्षुप्रकरणम्.

इति योगवासिष्ठ संपूर्ण ।

मिलनेका पता—खेमराज श्रीकृष्णदास, 'श्रीवेङ्कटेश्वर' स्टीम् प्रेस—मुंबई.

ऋय्यपुस्तकें (वेदान्तग्रंथभाषा)

नाम	की. रु. आ.
आत्मपुराण—भाषामें दशोपनिषद्के भावार्थ चिद्घनानंद स्वामिकृत	१२—०
योगवासिष्ठ—बडा भाषा छः प्रकरणोंमें श्रीगुरु-वसिष्ठजी और श्रीरामचंद्रजीका संवादोक्त अपूर्व ग्रंथ है खुलापत्रा	९—०
” बडा संपूर्ण ६ प्रकरण २ जिल्दोंमें ...	९—०
स्वरूपानुसंधान—वेदान्तियोंको अवश्य लेने-योग्य	२—०
योगवासिष्ठसार—भाषा	२—०
पक्षपातरहित अनुभवप्रकाश—(कामलीवाले-बाबाजीकृत) इसमें चारवेद, षट्शास्त्रका सार और अठारह पुराणोंकी कथा आदिका अध्यात्मविद्यापर अर्थ लिखागया है आत्म-ज्ञानियोंको अत्यंत दुर्लभहै	२—८
अभिलाखसागर—भाषामें स्वामी अभिलाखदा-सउदासीकृत—इसमें वंदनविचार, ग्रंथविचार, मार्गविचार, भजनविचार, जडब्रह्मविचार, चैतन्य ब्रह्मविचार, निराकारब्रह्मविचार, थ्याब्रह्मविचार, अहंब्रह्म विचार, ब्रह्मवि-चार वर्तमानब्रह्मविचारादि विषय अच्छी-रातस वर्णित किये हैं	१—८

जाहिरात ।

पुस्तक	कीमत
अध्यात्मप्रकाश—श्रीशुकदेवजी प्रणीत कवित्त दोहे सोरठे छंद चौपाई इत्यादिमें वेदान्तका अपूर्व ग्रंथ है	०—३
जीवब्रह्मसागर--भाषा	०--३
प्रबोधचंद्रोदय नाटक--भाषा गुलाबसिंहकृत (वेदान्त)	१--०
चन्द्रावली ज्ञानोपमहासिन्धु--इस ग्रंथमें वेद वेदान्तका सार मुमुक्षुओंके ज्ञानार्थ—राग रानियोंमें वर्णितहै....	०—६
अमृतधारा—वेदान्त भाषाछंदोंमें भगवानदास निरंजनीकृत वेदान्तकी प्रक्रियाछंदोंमें लिखी गई है	०—१
संतप्रभाव—साधुमाणिकदासजीकृत सत्संगादि विषयमें अद्वितीय है	०—६
संतोषसुरतरु—साधुमाणिकदासजीकृत इस ग्रंथके पढनेसे डाकिनीरूप तृष्णाका अवश्य नाश होताहै	०—६
आनंदामृतवर्षिणी—आनंदगिरिस्वामिकृत गीता-के कठिन शब्दके प्रतिपादन वेदान्तका मूलहै	०—१:

पुस्तक मिलनेका पता—खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्—प्रेस—बंबई.